आशु-बोध-व्याकरणम्

नवीनतम संस्करण

[वर्ण-परिचय के बाद से उच्चतम कक्षा तक के लिए]

लेखक

आचार्य कपिलदेव शर्मा

प्रकाशक

पुस्तक-भवन

रांची

आशु-बोध-व्याकरणम्

नवीनतम संस्करण

[वर्ण-परिचय के बाद से उच्चतम कक्षा तक के लिए]

लेखक

आचार्य कपिलदेव शर्मा

प्रकाशक

पुस्तक-भवन

राँची

ĀŚU-BODHA-VYĀKARAṆAM

by

ĀCĀRYA KAPILADEVA ŚARMĀ

Price : 2·50

नवीनतम संस्करण : संवत् २०२३ (जनवरी, १९६७ ई०)

प्रकाशक : पुस्तक-भवन, राँची

मूल्य : २·५०

प्रमुख वितरक : पुस्तक-भवन, राँची

शाखायें :
पुस्तक-भवन, खलीफाबाग, भागलपुर। पुस्तक-भवन, गुरुगोविन्द सिंह रोड, हजारीबाग।
पुस्तक-सदन, खजांची रोड, पटना-४। पुस्तक-सदन, मोतीझील, मुजफ्फरपुर।
अन्यत्र पुस्तक मिलने का पता— लालचन्द्र प्रसाद गुप्त, शारदा पुस्तक भाण्डार, सलेमपुर, छपरा।

॥ श्रीसरस्वत्यै नमः ॥

कालीं सरस्वतीं लक्ष्मीम्, अजं रामं च शङ्करम् ।
गुरुं च भरतं नत्वा, चाणक्यं चन्द्रगुप्तकम् ॥१॥
शिवं गङ्गा-धरं तात्यां, बापू-देवं त्रिलोचनम् ।
रामाऽनुजं ध्रुवं व्यासं, दाशगुप्तं तथाऽन्नदाम् ॥२॥
प्रतापं शिवराजं च, कुमारं तिलकं तथा ।
रामतीर्थं, गणेशं च, सावर्कर-सुभाषकौ ॥३॥
रामावतारशर्माणं, हेड्गेवारं व्रजेन्द्रकम् ।
विवेकं च रवीन्द्रं च, जगदीशम् प्रफुल्लकम् ॥४॥
मालवीयम् आशुतोषं, देशरत्नं जवाहरम् ।
श्रीचन्द्रशेखरं वीरम्, उद्यमेन युतान् नरान् ॥५॥
अनुकारयितुं छात्रैः, आशु बोधयितुं च तान् ।
आशु-बोध-व्याकरणम्, आशुतोष-स्मृतौ कृतम् ॥६॥

काली— बल की अधिष्ठात्री देवी; विश्व-कवि-शिरोमणि कालिदास; द्वितीय कवि कालिदास। **सरस्वती**—विद्या की अधिष्ठात्री देवी; सरस्वती उपाधिधारी विद्वद्-गण। **लक्ष्मीः**—धन की अधिष्ठात्री देवी; महावीरा लक्ष्मीबाई। **अजः**—ब्रह्मा; शिव; दशरथ के पिता। **रामः**—विष्णु; राम; परशुराम; बलराम। **शङ्करः**—शिव; शिव के अवतार शङ्कराचार्य। **गुरुः**—बृहस्पति; पिता; शिक्षक; श्रेष्ठ जन। **भरतः**—मेरे तथा राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद के गुरु पं० भरत मिश्र; जिसके नाम पर इस देश का नाम पड़ा भारत; शकुन्तला के पुत्र; राम के भाई। **चाणक्यः**—विश्व का सर्वश्रेष्ठ राजनीतिज्ञ, आदर्श प्रधानमन्त्री, सर्व-विद्या-पारङ्गत, महान् त्यागी, महाप्रतापी राजानन्द का संहार कर चन्द्र-गुप्त को भारत का सम्राट् बनानेवाले एक दरिद्र पण्डित। **बापूदेव शास्त्री**—विश्व की गणित-सम्बन्धी सभी शंकाओं का बात की बात में समाधान करनेवाले ज्यौतिषी। **शिवः**—महामहोपाध्याय शिवकुमार शास्त्री। **गङ्गाधरः—म० म० गङ्गाधर शास्त्री सी० आई० ई०** म० म० रामावतार शर्मा और म० म० डा० गङ्गानाथ झा जैसे बड़े-बड़े विद्वानों के गुरु। **तात्या**—म०म० तात्या शास्त्री। **त्रिलोचनः** (=त्र्यम्बकः)—देशीय एवं

विदेशीय एलोपैथ् डॉक्टरों के छक्के छुड़ानेवाले महान् वैद्य त्र्यम्बक शास्त्री। **रामानुजः**—लक्ष्मण; रामानुजाचार्य तथा प्रायः बीस वर्षों की अवस्था में ही संसार के सभी गणित-पुङ्गवों को चमत्कृत कर देनेवाले रामानुजम्। **ध्रुवः**—तपस्वी बालक ध्रुव तथा सर्व-विद्या-पारङ्गत आनन्द शंकर बापू भाई ध्रुव। **व्यासः**—वेद-व्यास तथा शतावधान (एक साथ सौ काम करनेवाले), घटिका-शतक (=एक घड़ी में एक सौ पद्य बनानेवाले) पण्डित अम्बिकादत्त व्यास। **दासगुप्तः**—सर्व-विद्या-निष्णात दार्शनिक डॉ० सुरेन्द्रनाथ दासगुप्त। **अन्नदा**—म० म० अन्नदाचरण तर्क-चूडा-मणि। **प्रतापः**—महाराणा प्रताप। **शिवराजः**—शिवाजी। **कुमारः**—कार्त्तिकेय तथा कुँवरसिंह। **तिलकः**—लोकमान्य भगवान् बालगङ्गाधर तिलक। **रामतीर्थः**—स्वामी रामतीर्थ। **गणेशः**—गणेशजी गणेशशङ्कर विद्यार्थी; शास्त्रीय रीति से सोना बनवाकर बिरला के पास नमूना रखनेवाले एवं स्वराज्य-प्राप्ति के समय राष्ट्रपति-भवन में पूजा करानेवाले गोस्वामी गणेशदत्त। इन्हीं के भ्रातुष्पुत्र डॉ० गिरिधारी लाल गोस्वामी ज्यौतिषाचार्य, प्रधानमन्त्रिणी इन्दिरा-जी के पुरोहित हैं और प्रतिदिन इन्दिराजी के वास-स्थान पर महामृत्युञ्जय जप तथा दुर्गा-पाठ करते हैं। **सावर्करः**—जगत् के सबसे बड़े क्रान्तिकारी महावीर विनायक दामोदर सावर्कर। **सुभाषः**—नेताजी सुभाषचन्द्र वसु जिसने स्वराज्य-प्राप्ति के लिए सावर्कर, हिटलर् और रासबिहारी वसु की शक्तियों और सेवाओं का बहुत सुन्दर उपयोग किया। **म० म० रामावतारशर्मा**—वर्त्तमान युग के व्यास और कालिदास, गणित, दर्शन, संस्कृत, अँगरेजी, जर्मन्, लैटिन आदि के अद्भुत विद्वान्। **हेड्गेवारः**— भारतीयों को स्वाधीनता-संग्राम एवं स्वाधीनता-संरक्षण के लिए पूर्ण योग्य बनाने की योजना के आविष्कारक डा० केशव बलिराम हेड्गेवार्। **व्रजेन्द्रः**— विज्ञान एवं वेदादि के महान् विद्वान् व्रजेन्द्रनाथ शील। **विवेकः**— स्वामी विवेकानन्द। **रवीन्द्रः**— विश्वकवि रवीन्द्रनाथ ठाकुर। **जगदीशः**—यन्त्र द्वारा वनस्पतियों को प्राणवान् सिद्ध कर देनेवाले सर् जगदीशचन्द्र वसु, जिनके पास से वितार-वार्त्ता की विद्या चुराकर मार्कोनी ने अँगरेजी शासन की सहायता से अपने नाम पर कर लिया। जिन्हें विश्वास न हो, वे उस समय के पत्रों को पढ़कर अपना सन्देह दूर कर सकते हैं। **प्रफुल्लः**—चाय को 'विष' और 'घोटकस्य मूत्रं' सिद्ध करनेवाले महान् वैज्ञानिक, महान् दानी, चतुर्दश-भाषा-विशारद सर् प्रफुल्लचन्द्रराय सी० आई० ई०। **मालवीयः**—भारत के अनुपम नेता पण्डित मदन-मोहन मालवीय। **आशुतोषः**—महान् पण्डित, संस्कृत-कवि, गणित-संस्कृत-संस्कृति-भक्त, विदेशीय सम्राट् को सम्राट् नहीं स्वीकार करनेवाले, दुष्ट विदेशीय उच्च अधिकारियों को दण्डित करनेवाले जस्टिस् आशुतोष मुखोपाध्याय। **देशरत्नम्**—राष्ट्रपति राजेन्द्र-प्रसाद। **जवाहरः**— प्रधानमन्त्री नेहरू। **चन्द्रशेखरः**—वर्त्तमान युग का अभिमन्यु संस्कृतवक्ता चन्द्रशेखर आजाद। **उद्यमः**—'ओडायर' असुर-निहन्ता उद्यम सिंह।

कुछ पुस्तक के सम्बन्ध में

शङ्कर, रामानुज, चैतन्य, दोनो दयानन्द, तिलक, मालवीय, एनी बीसेण्ट्, राजेन्द्र, राधाकृष्णन्,सावरकर, सुभाष, श्यामाप्रसाद मुखर्जी, नेहरू, सम्पूर्णानन्द, विल्सन्, मैक्समूलर्, कीथ्, टॉम्सन्, एलियट्, रानु, कमालपाशा, सर् मिर्जा इस्माइल्, जियाउद्दीन, सर् प्रफुल्लचन्द्र राय, सर् ज० चं० वसु, सर् सी० व्ही० रमन्,महान् अणु-वैज्ञानिक जॉन् रौबर्ट् औपेन् हाइमर् प्रभृति सभी विद्यानुरागी देववाणी संस्कृतभाषा की महत्ता गाते हैं। जगत् की असंख्य भाषाओं के सीखने में संस्कृत से बढ़कर दूसरी कोई भाषा सहायिका सिद्ध नहीं हो सकती। प्राकृत, असमिया, पाली, उड़िया, नेपाली, मराठी, गुजराती, बंगला, हिन्दी, तमिल, तेलुगु, मलयालं, कन्नड, पंजाबी, कश्मीरी आदि भाषाओं के लिए तो संस्कृत भाषा प्राणों से भी प्रियतर है। यह आधुनिक गवेषकों (रिसर्च-स्कॉलरों) के गवेषणीय विषयों का अक्षय्य भाण्डागार है और गणित, दर्शन, भाषाविज्ञान, धर्मनीति, राजनीति आदि विषयों का मूल है।

आजकल के अधिकांश छात्र सैकड़ों, हजारों पुस्तकों को समाप्त कर चुकने पर भी एक समाचारपत्र तक शुद्धोच्चारणपूर्वक नहीं पढ़ सकते। इसका एकमात्र कारण यह है कि बालकों को अक्षरारम्भ के समय से ही संस्कृत न पढ़ाकर, उनके अधिक वयस्क हो जाने पर हम उन्हें इसकी शिक्षा देने चलते हैं। जिस प्रकार पहले कुछ दिनों तक दूध से बालकों का शरीर पुष्ट करके उन्हें दूध के साथ-साथ अन्न खिलाया जाता है, तदनन्तर अन्न, दुग्ध दोनों के द्वारा उनका शेष शारीरिक जीवन आनन्दमय बनाया जाता है, उसी प्रकार पहले कुछ दिनों तक संस्कृत-शिक्षा द्वारा बालकों की उच्चारण-शक्ति पुष्ट करके उन्हें संस्कृत के साथ-साथ अन्य भाषा तथा अन्य विषय की शिक्षा देनी चाहिये, जिससे वे संस्कृत के साथ-साथ विश्व की विविध भाषाओं एवं अनेक विषयों का यथेष्ट ज्ञान प्राप्त कर अपना बौद्धिक जीवन उन्नत एवं सुखमय बना सकें।

किन्तु कठिनता यह है कि उपयुक्त शिक्षकों के अभाव के साथ-साथ विक्रम की इक्कीसवीं शताब्दी के छात्रों और छात्रियों के लिए उपयुक्त, उपदेशप्रद एवं

सामयिक उदाहरणों से विभूषित सरलतम, संक्षिप्ततम किन्तु आवश्यक सभी विषयों से परिपूर्णतम व्याकरण-ग्रन्थ का अभाव सुन्दरतम शरीर में प्राणाभाव के समान खटक रहा है तथा अध्ययन में अधिक ध्यान देनेवाले भी छात्रों की अपने देश के प्राचीन वा अर्वाचीन उन्नायकों के परिचय से विमुखता कुष्ठव्याधि-सी प्रतीत हो रही है। इन्हीं दोषों को दूर करने के लिए सुबोध भाषा में यह **आशुबोधव्याकरण** लिखा गया है। अन्य व्याकरणों का खण्डन करना इसका उद्देश्य नहीं है। इसमें सभी व्याकरणों का **विशेषत: 'भट्टोजिदीक्षित'**-रचित 'वैयाकरणसिद्धान्त-कौमुदी' का सारांश सङ्कलित किया गया है। छात्र इस (आशुबोधव्याकरण) पुस्तक को ध्यानपूर्वक पढ़ें। इसके द्वारा संस्कृत बोलने-लिखने आदि का ज्ञान प्राप्त हो चुकने पर इच्छा हो तो किसी प्राचीन वा आधुनिक व्याकरण को पढ़ सकते हैं। पर व्याकरणदक्ष बननेवाले छात्रों को 'पाणिनि' की मयिलापुर, मद्रास की छपी अष्टाध्यायी कण्ठस्थ कर उपर्युक्त सिद्धान्तकौमुदी किसी गुरु किंवा बालमनोरमा टीका या श्री शारदारञ्जन राय की टीका की सहायता से पढ़ लेनी चाहिये।[1] ऐसा कर लेने पर संसार की सभी भाषाओं के व्याकरण एवं बहुत-से विषय करतलामलकवत् हो जायँगे। जिस प्रकार यह पुस्तक न केवल संस्कृत-व्याकरण का उपयुक्त ज्ञानमात्र देने के लिए है, अपितु व्याकरण के बड़े-बड़े मूल एवं टीकाग्रन्थों तथा भाषाविज्ञान, उच्चारणशास्त्र आदि आवश्यक विषयों की ओर छात्रों को प्रवृत्त करने के लिए भी है, उसी प्रकार इसके दैनिक बोल-चाल में आनेवाले सरल एवं उत्साहप्रद उदाहरण न केवल व्याकरण के नियमों को ही सिखाने के लिए हैं, प्रत्युत इनमें आये हुए नामवाले लोकनायकों एवं उनके सहकर्मिओं के जीवनवृत्तान्तों को जानकर उनके भाषोद्धारक, धर्मोद्धारक तथा देशोद्धारक बहुजन-सम्मत कार्यों को करते हुए वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, गौतम, कपिल, कणाद, पाणिनि, कात्यायन,

---

१. शब्दार्थ-ज्ञान के लिए 'अमरकोष', 'शब्द-स्तोम-महानिधि' और 'वृहत् हिन्दी कोष'; वाचनाऽभ्यास एवं अनुवाद के लिए पं० वासुदेव द्विवेदी (सार्वभौम-संस्कृत-प्रचार-कार्यालय, डी ३८/२०, हौज कटोरा, वाराणसी) की सभी संस्कृत पुस्तिकायें, पुस्तक-भंडार पटना की 'राम-कथा', 'कृष्ण-कथा' और 'संस्कृत अनुवाद-चन्द्रिका' तथा [illegible] कार्यालय, [illegible] की 'संस्कृत व्याकरण की उपक्रमणिका' भी छात्र अपने पास रखें, तो अच्छा है।

पतञ्जलि, कार्त्तिकेय, महावीर, भरत, रघु, राम, चन्द्रकेतु, लव, कुश, भीष्म, द्रोण, अर्जुन, भीम, प्रताप, शिवाजी, गुरुगोविन्द सिंह, बाबा दीप सिंह तथा दीवार में चुने गये दो भाई—साहिब जोरावर सिंह और फतेह सिंह, उद्धम सिंह, चन्द्रशेखर आजाद के समान बनकर विश्व का पथ-प्रदर्शक बनने की ओर छात्रों को प्रवृत्त करने के लिए भी हैं। उदाहरण-स्थित बातों में कहीं-कहीं महत्त्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख है। जैसे 'सुभाषः अरविन्दस्य प्रशंसां न करोति', यह उदाहरण वर्त्तमान युग के शिवाजी श्री सुभाषचन्द्र वसु के एक व्याख्यान की ओर सङ्केत कर रहा है, जिसमें उन्होंने कहा था कि 'पवण्डीचेरी भायण्ड् सावरमति विल् डू नथिङ्' (अर्थात् अरविन्द और गान्धी के अनुयायी कुछ नहीं करेंगे)। शिक्षक कृपया सभी उदाहरणों के ऊपर सोच-विचारकर छात्रों को उदाहरण-सम्बन्धी विविध विषयों को बताने का यत्न करें, तो छात्रों की बहुज्ञता प्रबल वेग से बढ़ती जा सकती है।

इस पुस्तक की भाषा, भूमिका की भाषा से कहीं अधिक सरल है। प्रायः कहीं भी व्याकरणोचित भाषा का व्यवहार न कर सर्वत्र बोल-चाल की भाषा का ही व्यवहार किया गया है। कहीं-कहीं मनोविनोदार्थ 'स्वरछन्द' में भी बातें लिखी गयी हैं।

इस पुस्तक में प्रकरणों का क्रम छात्रों की आवश्यकता के अनुसार ही रखा गया है। **पाँच पृष्ठ** समाप्त होते-न-होते ही छात्र सुन्दर अनुवाद करने लग जायँगे। षष्ठ-सप्तम पृष्ठों से कारक आरम्भ किया गया है। **कारक पढ़ने के समय** छात्र दाहिनी ओर के पृष्ठों में सूत्र को पढ़ें, उसके बाद बायीं ओर सूत्र की संख्या के अनुसार उसकी व्याख्या को पढ़ें, तदनन्तर पुनः दाहिनी ओर सूत्र का उदाहरण पढ़ें। **जहाँ दाहिनी ओर सूत्र न लिखा गया हो,** वहाँ बायीं ओर उस संख्या की बातों को पढ़कर दाहिनी ओर उदाहरणों को पढ़ लें। सूत्रों की व्याख्या हृदयङ्गम कर लेने के बाद केवल सूत्रों की आवृत्ति से ही छात्रों का काम चला करेगा। व्याख्या और उदाहरण दुहराने में उनका समय नष्ट न हुआ करेगा।

सिद्धान्तकौमुदी न पढ़नेवाले तो इस पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं ही, सिद्धान्तकौमुदी पढ़नेवाले भी लाभ उठा सकते हैं; क्योंकि अगाध-सागरोपम

सिद्धान्तकौमुदी के कौन-कौन-से नियम दैनिक व्यवहार में आनेवाले हैं, इसका पता सर्वसाधारण छात्रों को नहीं रहता । इस पुस्तक में आवश्यकतम नियमों के तत्त्व सरलतम भाषा में एकत्र संगृहीत पाकर छात्र व्यवहारोपयोगी संस्कृत लिखने और बोलने में दक्ष बन जायँगे ।

परन्तु इस पुस्तक से यथार्थ और स्थायी लाभ तभी हो सकता है, जबकि देवनागरी लिपि सिखाने के समय से ही मेरी 'देवनागर-वर्णमाला,' पुस्तक के अनुसार छात्रों की (ह्रस्व, दीर्घ, य, ज, व, ब, र, ड़, श, स आदि की) उच्चारण-शुद्धता पर पूर्ण ध्यान दिया जाय और संस्कृत पढ़ाने के समय शुद्ध संस्कृत में तथा हिन्दी पढ़ाने के समय शुद्ध हिन्दी में उनसे बातें की जायँ ।

सः, तौ, ते; त्वम्, युवाम्, यूयम्; अहम्, आवाम्, वयम् इन पदों को तथा भू धातु के लट् लकार के रूपों को बताकर छात्रों से अनुवाद बनवाना आरम्भ कर दिया जाय । बाद में उपक्रमणिका की सहायता से छात्र गज, लता, तद्, युष्मद् और अस्मद् शब्दों के रूप तथा भू, अस्, कृ और लभ् धातुओं के रूप लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् लकारों में कण्ठस्थ कर लें । लृट् तथा लृङ् लकारों के रूप तो क्रमशः लट् एवं लङ् के समान होते हैं और स्वयं कण्ठस्थ हो जाते हैं । इतना कर लेने पर संस्कृतभाषा में लिखने और पढ़ने की शक्ति अवश्य हो जाती है । तदनन्तर ज्ञा और दा धातुओं के रूप तथा मुनि, साधु, दातृ, गो, मति, नदी, मधु, वारि, गुणिन्, गच्छत्, पयस्, त्रि, चतुर्, इदम्, अदस्, राजन्, पुंस्, पथिन् और विद्वस् शब्दों के रूप कण्ठस्थ कर लें । साथ-साथ आशुबोध के प्रथम पाँच पृष्ठों की नौ बातें (उदाहरण छोड़कर) कण्ठस्थ कर लें । इच्छा हो तो आशुबोध से द्विकर्मक-धातु-सूचीवाला एक श्लोक, कर्तृवाच्य के 'क्त' वाला आधा श्लोक, तद्धित के पाँच और कृदन्त के साढ़े तीन श्लोकों को छात्र मुखस्थ कर लें । इस प्रकार संस्कृत-वक्ता और संस्कृत-लेखक बनने के लिए छः धातुओं एवं चौबीस शब्दों के रूप तथा आशुबोध की नौ बातें पर्याप्त हैं । साधारणतः संस्कृत लिख-पढ़ लेने की शक्ति के लिए तो उपर्युक्त पाँच शब्दों एवं चार धातुओं के रूपों के साथ आशुबोध के नियम-पञ्चकवाले पाँच नियम ही अपेक्षित हैं ।

आशुबोध के तद्धित, कृदन्त आदि का पढ़ना तो संस्कृत, हिन्दी, बंगला

आदि भारतीय भाषाओं में दक्षता प्राप्त करने के लिए आवश्यक है। प्रति-दिन एक-एक शब्द-रूप, एक लकार धातु-रूप और आशुबोध की एक-एक बात कण्ठस्थ करने से चौबीस दिनों में संस्कृत-व्याकरण हाथ में आ जाता है। उसके बाद व्याकरण की सारी बातें विना रटे दो-एक वार ध्यानपूर्वक पढ़ लेने मात्र से आ जाती हैं। व्याकरण-दक्षता तो वैयाकरण-सिद्धान्त-कौमुदी के विना नहीं प्राप्त हो सकती।

आशा है, संस्कृतानुरागी सज्जन उपर्युक्त उपायों से संस्कृत सिखाने की प्रथा चलाकर संस्कृतभाषा के ऊपर व्यर्थ लगाये जाते हुए काठिन्य-दोष को दूर करने में हाथ बटायँगे और संस्कृतभाषा को सर्व-जन-सुलभ बनायँगे।

प्रस्तुत संस्करण के सम्बन्ध में

अंग्रेजी शासन-काल में यह पुस्तक काशी के लक्ष्मीनारायण प्रेस् में छप रही थी। आधा भाग छपते-न-छपते उस समय की सरकार ने इसके उदाहरणों को राज-द्रोहात्मक समझकर पुस्तक को जला देने और लेखक पर अभियोग चलाने का उपक्रम किया। संयोगवश प्रेस् के अध्यक्ष को पता चल गया और पुस्तक की सारी प्रतियाँ श्रीकन्हैयालाल व्रजभूषणदास के घर में छिपा दी गयीं। पुलिस् ने प्रेस् की तलाशी ली, लेखक तथा प्रेस् के अध्यक्ष को समझाया और धमकाया। किन्तु कोई फल नहीं हुआ। कुछ दिन बाद चुपके से एक भूमिका भी पुस्तक में जोड़ दी गयी। किसी परीक्षा के लिए स्वीकृति नहीं कराने पर भी कुछ ही दिनों में पुस्तक की पाँच हज़ार प्रतियाँ समाप्त हो गयीं। स्वराज्य-प्राप्ति के बाद शिक्षक-प्रशिक्षण-महाविद्यालय (टीचर्स् ट्रेनिङ् कॉलेज) के डिप्० एड्० और एम्० एड्० प्रशिक्षार्थियों के लिए उसकी स्वीकृति हो गयी। आगे चलकर दिल्ली से दो वार ऐसी सूचना भारत के सभी प्रान्तों में भेजी गयी कि कपिलदेव शर्मा का आशुबोध-व्याकरण कार्यंकर व्याकरण (Functional grammar) के रूप में सर्वोत्तम है। इसी के अनुसार सर्वत्र पढ़ाई होनी चाहिये। इस सूचना के बाद कई प्रान्तों से पुस्तक के लिए बहुत दिनों तक माँगें आती रहीं। सदा यही उत्तर दिया जाता रहा कि पुस्तक अप्राप्य है।

किन्तु हिन्दी, मराठी, बंगला प्रभृति भारतीय भाषाओं के प्राध्यापकों के निरन्तर आग्रह से एवं कुछ संस्कृत विद्वानों के अनुरोध से इस पुस्तक का यह संस्करण करना पड़ा। इस संस्करण में परिहासवाली प्रायः सभी बातें निकाल दी गयी हैं।

प्रथम संस्करण में यह पुस्तक ६४ पृष्ठों की थी; क्योंकि विदेशीय सरकार की वक्र दृष्टि के कारण सम्पूर्ण पुस्तक नहीं छप सकी थी। इस संस्करण में यह पुस्तक १२१ पृष्ठों की हो गयी है। सन्धि-प्रकरण इस पुस्तक में नहीं दिया गया। 'पद्यमय सन्धि' के नाम से सन्धि के लिए एक स्वतन्त्र पुस्तिका शीघ्र ही प्रकाशित की जायगी। शब्दरूप और धातुरूप तो किसी पुस्तक से छात्र पढ़ सकते हैं। शब्दरूप और धातुरूप के लिए भी एक पुस्तक छपेगी।

छात्रों को चाहिये कि इस पुस्तक के अन्त में दी गयी २४ दिनों के कार्यों की सूची के अनुसार कार्य करके ही सम्पूर्ण पुस्तक की समाप्ति के विषय में सोचें। इस पुस्तक की एक प्रश्नावली भी शीघ्र ही छपेगी। संस्कृत के **अनिवार्य-रूपेण ज्ञातव्य** विषयों का पाठ्य-क्रम या **बेसिक् संस्कृत का सिलेबस्** भी इसी प्रश्नावली के साथ रहेगा। इस प्रश्नावली को इस आशुबोध-व्याकरण के सामने रखकर दो छात्र परस्पर प्रश्नोत्तर करते हुए पढ़ें, तो व्याकरण की अधिकांश बातें स्वयं समझ में आ जायँगी।

इस संस्करण में केवल दो शब्दों से बने हुए पद के बीच में भी योजक चिह्न (Hyphen) दिया गया है; जैसे नाममात्रे के स्थान पर नाम-मात्रे। इस चिह्न की कोई विशेष आवश्यकता नहीं थी, केवल खण्ड-खण्ड करके उच्चारण करने में छात्रों को सुविधा हो, इसी विचार से योजक चिह्न प्रचुर मात्रा में दिये गये हैं। इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि योजक चिह्न देना अनिवार्य है। बहुत-से लोग समझते हैं कि यह योजक चिह्न समास का सूचक है। पर ऐसी बात नहीं है। वास्तविक बात यह है कि यह योजक चिह्न एक से अधिक अक्षरों, शब्दांशों और शब्दों को जोड़ता है। फलतः समास में भी इस चिह्न से काम लिया जाता है।

इसी प्रकार इस पुस्तक में एकार, ओकार और आकार के बाद ऽ (=लुप्ताकार) का भी व्यवहार बहुत-से स्थानों में किया गया है, जैसे—तेऽपि, प्रभोऽत्र,

ममाऽपि, विद्याऽऽलय। एक लुप्ताकार चिह्न इसलिए है कि छात्र समझ सकें कि यहाँ 'अ' छिपा हुआ है तथा दो लुप्ताकार चिह्न को देखकर समझ लें कि यहाँ 'आ' छिपा हुआ है। योजक चिह्न (-) के समान ही लुप्ताकार - (ऽ) चिह्न भी अनिवार्य नहीं है। इसलिए तेऽपि, प्रभोऽव, ममाऽपि और विद्याऽऽलय के बदले तेपि, प्रभोव, ममापि और विद्यालय भी अवश्य लिख सकते हैं।

अस्तु, मेरी दृष्टिशक्ति क्षीणतर एवं स्वास्थ्य शोचनीयतर हो जाने के कारण मैं पुस्तक के पूर्वरूप (प्रूफ़्) को पढ़ नहीं सका, केवल सुन सका। अतः पुस्तक में जो त्रुटियाँ रह गयी हों, उनके लिए दोषी मैं हूँ और जो कुछ शुद्धता दीख पड़ती हो, उसके लिए धन्यवाद-पात्र हैं इस पुस्तक के पूर्वरूप-संशोधक शास्त्र-शस्त्र-दक्ष पं० श्रीरामप्रिय मिश्र 'लालधुआँ'।

कार्त्तिक-पूर्णिमा, २०२३
(खृष्टाब्द, १९६६)

—श्रीकपिलदेवशर्मा
लोक-मान्य-नगरम्
छपरा (बिहारः)

संस्कृत-शिक्षणालयों की रक्षा के लिए

यदि संस्कृत-शिक्षणालयों को दो-चार वर्षों में बन्द होते नहीं देखना है और यदि संस्कृत-शिक्षा पर खर्च किये जानेवाले रुपयों को सफल बनाना है तो सरकार संस्कृत-शिक्षणालयों के लिए एक **निरीक्षण-पत्रक** चालू करे जिसमें **इस आशु-बोध-व्याकरण की प्रश्नावली-नामक** पुस्तिका के **प्रारम्भ में दिये गये सभी प्रश्नों** को सम्मिलित करे और उन प्रश्नों के अनुसार पढ़ाई के लिए कड़ाई करे तथा आदरणीय शिक्षक लोग प्रेमपूर्वक इस प्रश्नावली के अनुसार पढ़ाते हुए संस्कृत-शिक्षणालयों की रक्षा करें।

विषय-सूची

५३वें पृष्ठ से १२१वें पृष्ठ तक की बातें बहुत अधिक जान पड़ती हों, तो केवल I चिह्नित अंशों को ही देखें।

विषय: — पृष्ठ-संख्या

आशु-बोध-व्याकरणम्

(१) पाँच अत्यावश्यक बातें

१. विभक्ति-चिह्नम्

प्रथमा— ०, ने—मनुष्यः सर्वं कर्त्तुं शक्नोति = मनुष्य सब कुछ कर सकता है। कालिदासः रचितवान् = कालिदास **ने** रचा।

द्वितीया—०, को*—त्वम् ओदनं खाद = तू भात खा। दुष्टं ताडय = दुष्ट **को** पीटो।

तृतीया—०— गजेन गम्यते = हाथी जाता है (हाथी **से** जाया जाता है)।
ने—रामावतारेण इतिहासः लिखितः = रामावतार **ने** इतिहास लिखा। (अथवा रामावतार **से** इतिहास लिखा गया)।
से—हस्तेन उत्थापयामि = हाथ **से** उठाता हूँ। मुखेन वदामि = मुख **से** बोलता हूँ।
द्वारा— पण्डितेन ग्रन्थः रचितः = पण्डित **के द्वारा** ग्रन्थ रचा गया (वा पण्डित **से** ग्रन्थ रचा गया)।

चतुर्थी— को, के लिए— दरिद्राय अन्नं देहि = दरिद्र **को** अन्न दो। कुण्डलाय सुवर्णम् आनय = कुण्डल **के लिए** सोना लाओ।

---

* कभी-कभी "को" चिह्न पञ्चमी विभक्ति को छोड़ सभी विभक्तियों में आता है। प्रथमा—दुष्टः गच्छतु = दुष्ट **को** जाने दो। द्वितीया—दुष्टं ताडय—दुष्ट **को** पीटो। तृतीया—दुष्टेन न जीवितव्यम् = दुष्ट **को** नहीं जीना चाहिए। चतुर्थी—दरिद्राय देहि = दरिद्र **को** दो। षष्ठी—दुष्टस्य पुच्छं न भवति = दुष्ट **को** पूँछ नहीं होती। सप्तमी—सोमवारे यास्यामि = सोमवार को जाऊँगा

पञ्चमी—से— प्रयागात् आगच्छति = प्रयाग **से** आता है।

षष्ठी—का, के, की— रामस्य ग्रन्थः = राम **का** ग्रन्थ। रामस्य पुत्राः = राम **के** लड़के। रामस्य लता = राम **की** लता।

सप्तमी—में, पर— गृहे अन्नम् अस्ति = गृह **में** अन्न है। वृक्षे वानरः अस्ति = वृक्ष **पर** वानर है।

२. कर्त्तृ-कर्मादि-परिभाषा

१. **कर्त्ता**—जो करे— **छात्र** पुस्तक पढ़ता है = **छात्रः** पुस्तकम् पठति।

२. **कर्म**— जिसपर क्रिया की चढ़ाई हो—राम **दुष्ट को** पीटता है = रामः **दुष्टं** ताडयति।

३. **करणम्**— करने में जो सबसे बढ़कर सहायता करे—**मुख से** बोलता हूँ = **मुखेन** वदामि।

४. **सम्प्रदानम्**— जिसको दिया जाय—**छात्र को** पुस्तक देता हूँ = **छात्राय** पुस्तकं ददामि।

५. **अपादानम्**— जहाँ से अलग होना समझा जाय—**गृह से** आता हूँ = **गृहात्** आगच्छामि। दौड़ते हुए **घोड़े से** गिरा = धावतः **घोटकात्** पतितः।

सम्बन्ध की गणना कारक में नहीं है। **नलिन का** पुत्र राजीव है = **नलिनस्य** पुत्रः राजीवः अस्ति।

६. **अधिकरणम्**— आधार को अधिकरण कहते हैं—**आसन पर** शिक्षक हैं = **आसने** शिक्षकः अस्ति।

सम्बोधन की गिनती कारक में नहीं होती। हे **राम**, मुझे बचाओ = हे **राम**, मां रक्ष।

३. कालः

१. वर्त्तमाने लट् भवति होता है = वर्त्तमान काल में **लट्** लकार होता है। लट् में **भवति** इत्यादि रूप होते हैं। **भवति** का अर्थ है **"होता है"**।

२. भविष्ये लृट् भविष्यति होगा = भविष्यत् काल में **लृट्** लकार होगा। लृट् में **भविष्यति** इत्यादि रूप होंगे। **भविष्यति = होगा**।

३. भूते **लङ्** अभवत् हुआ=भूतकाल में **लङ्** लकार। लङ् में **अभवत्** इत्यादि रूप। **अभवत्=हुआ।**

४. अनुज्ञा **लोट्** भवतु होवे, होइए होऊँ इसी में हैं=अनुज्ञा में **लोट** लकार। लोट् में **भवतु** इत्यादि रूप। **भवतु=होवे, होइए**। होओ, होऊँ, होने दो इत्यादि भी लोट् लकार में ही होते हैं।

५. **विधिलिङ्** में भवेत् होवे, होइए होना चाहिए। हो सकता है होने दो, "कर्म-निष्ठः भवान् भवेत्"॥

६. अभविष्यत् अगर होता, **लृङ्** लकार कहो उसे। **अभविष्यत्=यदि होता**। संस्कृत में ऐसे स्थान पर **लृङ्** लकार। **लृङ्** में **अभविष्यत्** इत्यादि रूप।

४. उपसर्गः

नीचे लिखे २२ **उपसर्ग** क्रिया के पहले जोड़े जाते हैं—
प्र, परा, अप, सम्; अनु, अव, निस्, निर्; दुस्, दुर्, वि, **आङ्**; नि, अधि, अपि, अति; सु, उद्, अभि, प्रति; परि, उप (बाईस)।

५. नियम-पञ्चकम्

१. विशेष्य में जो लिङ्ग, जो विभक्ति और जो वचन वही लिङ्ग, **वही** विभक्ति और वही वचन **विशेषण में भी**।

यथा— सुन्दरः वृक्षः। सुन्दरौ वृक्षौ। सुन्दराः वृक्षाः। सुन्दरं वृक्षम्। सुन्दरेण वृक्षेण। सुन्दरी लता। सुन्दर्य्यौ लते। सुन्दर्य्यः लताः। सुन्दरीं लताम्। सुन्दर्य्याः लतायाः। सुन्दरीषु लतासु। सुन्दरम् फलम्। सुन्दरे फले। सुन्दराणि फलानि। सुन्दराय फलाय। सुन्दराणाम् फलानाम्। **धनी**

---

* होवे, होना चाहिए, होने दो, हो सकता है इत्यादि अर्थों में विधिलिङ् **लकार**। आर्यः वीरः **भवेत्**=आर्य वीर **होवे**, आर्य को वीर **होना चाहिए**, आर्य को वीर **होने दो**, आर्य वीर **हो सकता है**।

पुरुषः । धनिनौ पुरुषौ । महान् पुरुषः । महती सभा । महत् फलम् । विद्वान् जनः । विदुषी महिला । गच्छन् पुरुषः । गच्छन्तौ पुरुषौ । गच्छन्तः पुरुषाः । गच्छन्तम् पुरुषम् । गच्छता पुरुषेण । गच्छन्ती बालिका । गच्छन्त्यौ बालिके । गच्छन्त्यः बालिकाः । गच्छत् पत्रम् । गच्छन्ती पत्रे । गच्छन्ति पत्राणि ।*

२. **कर्त्तृवाच्य** (Active) के कर्त्ता में प्रथमा, कर्म में द्वितीया और कर्त्ता जो पुरुष और जो वचन वही पुरुष और वही वचन क्रिया में भी ।

यथा— स ग्रामं गच्छति । तौ वेदम् पठतः । ते धर्मं कुर्वन्ति । त्वं न्यायं पठसि । युवाम् मनु-स्मृतिम् पठथः । यूयम् भू-गोलम् पठथ । अहम् इतिहासम् पठामि । आवां काव्यम् पठावः । वयम् आयुर्वेदम् पठामः । बालकः मिष्टान्नं खादति ।

३. **कर्म-वाच्य और भाव-वाच्य** (Passive) के कर्त्ता में तृतीया, कर्म में प्रथमा और कर्म जो पुरुष और जो वचन वही पुरुष और वही वचन क्रिया में भी । **कर्म न हो तो** क्रिया में प्रथम पुरुष और एकवचन ।

यथा— बालकेन वेदः पठ्यते । बालकेन वेदौ पठ्येते । बालकेन वेदाः पठ्यन्ते । बालकाभ्यां वेदः पठ्यते । बालकैः वेदः पठ्यते । मनुष्यैः त्वम् पूज्यसे । मनुष्यैः युवाम् पूज्येथे । मनुष्यैः यूयम् पूज्यध्वे । त्वया अहं दृश्ये । त्वया आवां दृश्यावहे । त्वया वयं दृश्यामहे ।

कर्म न हो तो क्रिया में प्रथम पुरुष और एकवचन ।

यथा—रामेण दृश्यते । मनुष्यैः दृश्यते । त्वया दृश्यते । मया दृश्यते । अस्माभिः दृश्यते । सर्वैः पण्डितैः भूयते । जनैः खाद्यते । इत्यादि ।

४. **तव्य, अनीय, यत्, ण्यत्** और **कर्म या भाव-वाच्य** (Passive) के **क्त** के कर्त्ता में तृतीया, कर्म में प्रथमा और कर्म जो लिंग, जो विभक्ति और जो वचन वही लिंग, वही विभक्ति और वही वचन इन पाँचों प्रत्ययों में भी । कर्म न हो तो इन प्रत्ययों में नपुंसक लिंग, प्रथमा विभक्ति और एकवचन ।

---

* **उद्देश्य** और **विधेय** में विभक्ति एक ही होनी चाहिए, लिंग और वचन में भेद पड़ सकता है । यथा— वेदाः प्रमाणम् । [illegible] । संस्कृतम् मम मातृभाषा ।

यथा—मनुष्येण वेदः पठितव्यः, मनुष्येण वेदौ पठितव्यौ, मनुष्येण वेदाः पठितव्याः। छात्रेण श्रुतिः पठितव्या, छात्रेण श्रुती पठितव्ये, छात्रेण श्रुतयः पठितव्याः। युष्माभिः पुस्तकम् पठितव्यम्, युष्माभिः पुस्तके पठितव्ये, युष्माभिः पुस्तकानि पठितव्यानि। मया वेदाः पठिताः। त्वया धर्मः कृतः।

कर्म न हो तो—अस्माभिः कर्त्तव्यम्। छात्रैः पठनीयम्। धनिकेन देयम्। सर्वैः धार्य्यम्। नरेण प्रातःकाले उत्थातव्यम्।

५. **क्तवतु** और **कर्तृ-वाच्य** (Active) के **क्त** के कर्त्ता में प्रथमा, **कर्म में** द्वितीया और कर्त्ता जो लिङ्ग, जो विभक्ति और जो वचन वही लिङ्ग, वही विभक्ति और वही वचन इन दोनों प्रत्ययों में भी।†

क्तवतु— बालकः वेदं पठितवान्। बालकौ वेदम् पठितवन्तौ। बालकाः वेदं पठितवन्तः। बालिका वेदं पठितवती। बालिके वेदम् पठितवत्यौ। बालिकाः वेदं पठितवत्यः। कुलं स्वर्गं गतवत्। फलम् पतितवत्। फले पतितवती। फलानि पतितवन्ति।

क्त— बालकः ग्रामं गतः। बालकौ ग्रामं गतौ। बालकाः ग्रामं गताः। बालिका ग्रामं गता। बालिके ग्रामं गते। बालिकाः ग्रामं गताः। फलं गतम्। फले गते। फलानि गतानि। धनानि नष्टानि।

---

† २, ३, ४, ५ (क) एक वाच्य से दूसरे वाच्य में किसी वाक्य को बदलना हो तो **कर्त्ता, कर्म, क्रिया, कर्त्ता का विशेषण** और **कर्म का विशेषण** इन्हीं पाँचों **को** बदलिए। यथा—वीरः भीमः दुष्टं वक-राक्षसम् अहन्—वीरेण भीमेन दुष्टः वकराक्षसः अहन्यत।

२, ३, ४, ५ (ख) समापिका क्रिया से सम्बन्ध रखनेवाले ही पद बदले जाते हैं, दूसरे पद नहीं। यथा—अहं **न्यायम्** पठितुम् **पाठशालां** गच्छामि—मया **न्यायम्** पठितुम् **पाठशाला** गम्यते।

२, ३, ४, ५ (ग) 'तुम्' प्रत्ययवाली क्रिया और समापिका क्रिया दोनों मिलकर एक क्रिया-सी बन जायँ तो कर्म में परिवर्त्तन होता है। जैसे—

अहं **दालीं** खादितुं शक्नोमि—मया **दाली** खादितुं शक्यते।

२. कारकं विभक्ति-निर्णयः च*

क्रिया से जिसको अन्वय (सम्पर्क) हो, उसे **कारक** कहते हैं। यथा—मैं **बगीचे** में हाथ द्वारा लड़के को वृक्ष पर से आम देता हूँ।

प्रथमा—

१. जिस पद को क्रिया से वा किसी दूसरे पद से सम्पर्क न हो, उसमें **"नाममात्रे प्रथमा"** होती है। इसीलिए सूची में लिखी चीजों में भी प्रथमा रहती है।

२. जो करे, उसे कर्त्ता कहते हैं और **"कर्तृवाच्य के कर्त्ता में प्रथमा"** विभक्ति होती है।

३. जिसपर क्रिया की चढ़ाई हो, उसे कर्म कहते हैं और **"कर्मवाच्य के कर्म में प्रथमा"** विभक्ति होती है।

४. **इति** और **साम्प्रतम्** के योग में (द्वितीया उचित रहे तो भी) प्रथमा हो जाती है। **एव** के योग में भी कहीं-कहीं प्रथमा मिलती है। इसीको **"अव्यय-योगे प्रथमा"** या **"निपात-योगे प्रथमा"** कहते हैं।

५. सम्बोधन में प्रथमा होती है। यथा—"भद्र", कुशलं ते ? "सखे", किमेतत् ?

द्वितीया—

१. कर्तृ-वाच्य के कर्म में द्वितीया (जहाँ जाया जाय, आया जाय, चढ़ा जाय, घुसा जाय वा पहुँचा जाय, उसमें भी **कर्मणि द्वितीया**)।

२. जो क्रिया का गुण प्रकट करे, उसे **क्रियाविशेषण** कहते हैं। **क्रियाविशेषण में द्वितीया का एकवचन** रहता है।

३. (तीसरे सूत्र को गानवत् पढ़िये) **अभितः**, **परितः**, **समया**, **निकषा**, **हा** और **प्रति** के योग में भी द्वितीया होती है। यथा—मम **"गृहं"** **निकषा** कूपः अस्ति। **हा** "परिश्रम-हीन-जनम्" !

३. (क) **उभयतः** और **सर्वतः** के योग में भी द्वितीया होती है।

४. **धिक्** के योग में द्वितीया होती है। "धर्म-त्यागिनं" **धिक्**।

---

* कारक के अन्दर बायें पृष्ठ केवल दाहिने पृष्ठों के नियमों को समझाने के लिए हैं।

२. कारकं विभक्ति-निणयश्च*

क्रियाऽन्वयि कारकम् ।

यथा— अहं वाटिकायां हस्तेन बालकाय वृक्षात् आम्रं ददामि ।

प्रथमा—

१. **नाम-मात्रे प्रथमा**—रामः, कृष्णः, वृक्षः, लता, घटिका, गृहम्, मित्र-लाभः, भयम, क्रोधः । इत्यादि ।

२. (Active) **कर्त्तरि प्रथमा**— "रामः" ओदनं खादति । "छात्रः" वेदम् पठति । "पं० मालवीयः" हिन्दु-विश्व-विद्यालयं स्थापितवान् ।

३. (Passive) **कर्मणि प्रथमा**— रामेण "ओदनः" खाद्यते । छात्रेण "वेदः" पठ्यते । पं० मालवीयेन "हि०-वि०-विद्यालयः" स्थापितः ।

४. **अव्यय-योगे प्रथमा**— अहं त्वां "पण्डितः" **इति** जानामि । क्रमादमुं "नारद" इत्यबोधि सः । "दुष्टसंगः" त्यक्तुं **साम्प्रतम्** । पण्डितः सर्व-द्रव्येषु "विद्या" एव अनुत्तम-द्रव्यं कथयति ।

५. **सम्बोधने प्रथमा**— "हे राम", मां रक्ष । "भो मित्र", देश-हितं कुरु ।

द्वितीया—

१. (Active) **कर्मणि द्वितीया**—रामः "**ओदनं**" खादति । नेता "**ग्रामं**" गच्छति । छात्रः "**मठम्**" आगच्छति । वानरः "**वृक्षम्**" आरोहति । चोरः "**गृहम्**" प्रविशति । अहं रात्रौ "**मथुराम्**" प्राप्तः = मैं रात में "मथुरा" पहुँचा ।

२. **क्रिया-विशेषणे द्वितीया**—"**मन्दं मन्दं**" चल । "**सविनयं**" निवेदयामि । पं० मोतीलालः "**आनन्द-पूर्वकं**" काराऽगारं गतः ।

३. **अभितः-परितः-समया-निकषा-हा-प्रति-योगेऽपि**—"ग्रामम्" **अभितः** वा **परितः** वृक्षाः सन्ति । "विद्यालयं" **समया** वा **निकषा** चिकित्सालयः अस्ति । **हा** "कृष्णाऽभक्तम्" ! "दीनम्" **प्रति** दयां कुरु ।

३. (क) "नदीम्" **उभयतः** नराः सन्ति । "चन्द्रशेखरं" **सर्वतः** सैनिकाः सन्ति ।

४. **धिग्योगे द्वितीया**—"चोरं" **धिक्** । "देश-द्रोहिणं" **धिक्** ।

---

* कारक के अन्दर जिस संख्या की बात समझ में न आवे, उस संख्या को बायीं ओर देखिये ।

पहले दाहिनी ओर सूत्रों को पढ़िये तब बायीं ओर व्याख्या, पुनः दाहिनी ओर उदाहरण ।

५. अभि, अनु, उप, अति; अन्तरा, अन्तरेण, यावत्—इन सातों के योग में द्वितीया। "परिश्रमम्" **अन्तरा** विद्या न भवति। "धर्मम्" **अन्तरेण** उन्नतिः न भवति। तव "गृहं" **यावत्** चलामि। यावत् = तक।

६. उपरि + उपरि = **उपर्य्युपरि**, अधि + अधि = **अध्यधि**, अधः + अधः = **अधोऽधः** इन तीन आम्रेडितान्त या Double अव्ययों के योग में द्वितीया।

७. उप, अनु, अधि और आ इनमें कोई भी 'वस्' धातु के साथ रहे तो सप्तमी के बदले द्वितीया। इसीलिए 'मनुष्यः "गृहे" **वसति**' में तो गृह में सप्तमी रहती है पर उप, अनु, अधि या आ जोड़ने पर गृह में सप्तमी के बदले द्वितीया हो जाती है। यथा—मनुष्यः "गृहम्" **उपवसति**।

७. (क) **उप-पूर्वक** 'वस्' धातु का अर्थ "उपवास करना" हो तो सप्तमी के बदले द्वितीया नहीं। यथा—मनुष्यः वने उपवसति = मनुष्य वन में उपवास करता है।

८. शी, स्था और आस् धातु में अधि जोड़ने पर सप्तमी के बदले द्वितीया। अतः अधि विना जोड़े "अलसः **पल्यङ्के** शेते वा तिष्ठति वा आस्ते" होता है। किन्तु अधि जोड़ने पर "अलसः **पल्यङ्कम्** अधिशेते वा अधितिष्ठति वा अध्यास्ते" होगा।

९. "मैंने एक सप्ताह व्याकरण पढ़ा" कहने से जान पड़ता है कि सप्ताह और पढ़ना दोनों साथ-साथ बीतते गये अर्थात् पठन को सप्ताह से "अत्यन्तसंयोग" है। अतः सप्ताह में **अत्यन्त-संयोगे द्वितीया** या **व्याप्त्यर्थे द्वितीया** होगी।

तृतीया—

१. किन्तु "एक सप्ताह में व्याकरण पढ़ लिया" कहने से अत्यन्तसंयोग **तो** मालूम पड़ता है ही, साथ-साथ यह भी जान पड़ता है कि व्याकरण **आ गया और समाप्त** हो गया। अतः इस वाक्य में 'सप्ताह' में **फल-प्राप्तौ तृतीया** वा **अपवर्गे तृतीया** होगी।

२. एकेन "रूप्यकेण" आम्रं क्रीणामि, कया "दिशा" चौरः पलायितः, गुरोः आज्ञां "शिरसा" धारयामि—भी **करणे तृतीया** के उदाहरण हैं।

५. "सूर्य्यम्" **अभि** न पश्य। "रामम्" **अनु** लक्ष्मणः उत्पन्नः। **सह-**शिक्षकाः "प्रधान-शिक्षकम्" **उप**। प्रधानशिक्षकः "सहशिक्षकान्" **अति**। "त्वां मां" च **अन्तरा** भेदो नास्ति।

६. **उपर्य्युपरि, अध्यधि** और **अधोऽधः** के योग में द्वितीया। यथा— "वृक्षम्" **उपर्य्युपरि** खगाः डयन्ते। "लोकम्" **अध्यधि** विष्णुः। "पृथ्वी-तलम्" **अधोऽधः** जलम् अस्ति।

७. **उपाऽन्वध्याङ् वसः (आधारः कर्म)** यथा— "मनुष्यः गृहे वसति" परन्तु "मनुष्यः **गृहम् उपवसति, अनुवसति, अधिवसति** वा **आवसति**"। इसी प्रकार "पं० मालवीयः **काशीम्** उपवसति, अनु-वसति, अधिवसति वा आवसति"।

७. (क) "मनुष्यः वने उपवसति" और "मनुष्यः **वनम्** उपवसति" तथा "रोगी गृहे उपवसति" और "रोगी **गृहम्** उपवसति" में भेद बताइए।

८. **अधिशीङ्-स्थाऽऽसां कर्म**— हरिः "वैकुण्ठम्" **अधिशेते** वा **अधितिष्ठति** वा **अध्यास्ते**। इसी प्रकार, बालकः "खट्वाम्" अधिशेते वा अधि-तिष्ठति वा अध्यास्ते।

९. **अत्यन्त-संयोगे द्वितीया** (टाइमे स्पेसे च)— अहं "सप्ताहं" व्याकरणं पठितवान् = मैंने "सप्ताह भर" व्याकरण पढ़ा। जगदीशः "**क्रोशं**" समाचार-पत्रं पठितवान् = जगदीश ने "कोस भर" समाचार-पत्र पढ़ा। ऊपर के उदाहरणों के समान पाँच-पाँच उदाहरण दीजिये।

तृतीया—

१. **किंतु, अपवर्गे तृतीया**— अहं "**सप्ताहेन**" व्याकरणम् पठितवान् = मैंने "सप्ताह भर में" व्याकरण पढ़ लिया। जगदीशः "क्रोशेन" समाचार-पत्रम् पठितवान् = जगदीश ने "कोस भर में" समाचारपत्र पढ़ लिया। ऊपर के दोनों उदाहरणों के समान पाँच-पाँच उदाहरण दीजिये।

२. **करणे तृतीया**— नरः "मुखेन" वदति। "लगुडेन" ताडयति। "घोटकेन" गच्छ। "नेत्राभ्याम्" पश्य। "केन मार्गेण" चलिष्यसि?

३. कर्मवाच्य और भाववाच्य (Passive) के कर्त्ता में तृतीया होती है। इसीको **"अनुक्ते कर्त्तरि तृतीया"** भी कहते हैं।

४. **"साकं सार्द्धं समं सत्रा; सह** माने च साथ विद्"—इस पद्य में कहे गये "साथ = with" अर्थवाले पाँच अव्ययों के योग में तृतीया। इसी को **"सहार्थे तृतीया"** या पृथक्-पृथक् **"साकंयोगे तृतीया"** इत्यादि भी कहते हैं।

५. बेकार है, रहने दो, बस, हटाओ इत्यादि भाव प्रकट करना हो तो **किम्, कृतम्** या **अलम्** के योग में **"वारणार्थे तृतीया"** होती है।

६. जिन शब्दों का अर्थ "प्रयोजन" हो, उनके योग में **"प्रयोजनाऽर्थे तृतीया"** होती है।

७. ऊन, हीन, रहित, रिक्त और शून्य अर्थवालों के योग में तृतीया। इसे **"ऊनार्थे तृतीया"** या **"हीनार्थे तृतीया"** कहते हैं।

८. प्रकृति आदि कुछ शब्द हैं जिनमें तृतीया ही होती है। इस तृतीया को **"प्रकृत्यादित्वात् तृतीया"** कहते हैं। आगे लिखे प्रत्येक से दो-दो वाक्य बनाइये— प्रकृत्या, स्वभावेन, जात्या, गोत्रेण, सुखेन, दुःखेन, यदृच्छया, क्रमेण, यत्नेन, वेगेन, आकृत्या, प्रायेण, नाम्ना, सुचारु-रूपेण, गृह-निर्विशेषेण, समेन, विषमेण, द्वि-द्रोणेन, कृपया।

९. जिस अङ्ग के बिगड़ जाने से आदमी "ऐबदार" हो जाय, उसमें **"अङ्ग-विकारे तृतीया"** होती है। "पृष्ठेन" कुब्जः। "हस्तेन" न्युब्जः।

१०. जो किसी का विशेष चिह्न हो (अर्थात् जिस चिह्न को देखते ही पता चल जाय कि ये कौन जन्तु हैं), उसमें **"उपलक्षणे तृतीया"**।

११. "शपथ करना" अर्थवाले धातु के योग में जिस चीज से शपथ ली जाय, उस चीज में **"शपथाऽर्थक-धातु-योगे तृतीया"**।

१२. **दिव्** धातु के योग में जिस चीज से खेला जाय, उसमें द्वितीया और तृतीया दोनों।

१३. पृथक्, विना और नाना के योग में द्वितीया, तृतीया और पञ्चमी। ('नाना' चलता कम है। अतः 'नाना' का उदाहरण न दूँगा।)

३. (Passive) **कर्त्तरि तृतीया**— "रामेण" वेदः पठ्यते । "अस्माभिः" न्यायः पठ्यते । "वीरेण" शत्रवः हन्यन्ते । "मया" स्थीयते ।

४. **सहार्थे तृतीया***— "सतीशेन" **सह** चल । "सुरेन्द्रेण" **साकम्** पठ । "दयानन्देन" **सार्द्धं** लिख । "मूर्खेण" **समं** न वद । "पुत्रेण" **सत्रा** गच्छ ।

५. **वारणाऽर्थे तृतीया**— यदि मनः न लगति तर्हि "पठनेन" **किम्** ? वा "पठनेन" **कृतम्** । वा "पठनेन" **अलम्** ।

६. **प्रयोजनार्थे तृतीया**— "धनेन" **प्रयोजनम्** नास्ति । "पुत्रेण" कः **अर्थः** ? "स्व-राज्येन" **प्रयोजनं** सर्वस्य अस्ति ।

७. **ऊनार्थे तृतीया**— "एकेन" **ऊनः** । "धनेन" **हीनः** । "रोगेण" **रहितः** । "जलेन" **रिक्तः** । "गर्वेण" **शून्यः** ।

८. **प्रकृत्यादित्वात् तृतीया**— दुग्धम् "प्रकृत्या" मधुरम् । सज्जनः "स्वभावेन" सरलः । कुमारसिंहः "जात्या" क्षत्रियः । पं० जवाहरलालः "सुखेन" बाल्य-कालं यापितवान् । सावरकरः "दुःखेन" जीवनं यापितवान् । "प्रायेण" वीर-पुरुषाः दुःखं सहन्ते । आर्यः सुचारु-रूपेण कार्यं सम्पादयति । अहं "गोत्रेण" कात्यायनः ।

९. **अङ्ग-विकारे तृतीया**— स "पादेन" खञ्जः अस्ति । "शिरसा" खल्वाटः । "नेत्रेण" काणः । "नेत्राभ्याम्" अन्धः । "कर्णाभ्याम्" वधिरः ।

१०. **उपलक्षणे तृतीया**— "जटाभिः" तापसं दृष्टवान् । "समाचार-पत्रेण" शिक्षितं दृष्टवान् । "शिखया" हिन्दुं दृष्टवान् ।

११. **शपथाऽर्थक-धातु-योगे तृतीया**—"पित्रा" **शपामि** । "पुत्रेण" **शपामि** । "धर्म्मेण" **शपामि** । "अल्लया" **शपामि** । "ईशया" **शपामि** ।

१२. **दिव्-धातोः करणे द्वितीया तृतीया च**—दुष्टः "अक्षैः" **दीव्यति** वा दुष्टः "अक्षान्" **दीव्यति** ।

१३. "व्यासम्" **पृथक्**, "व्यासेन" **पृथक्**, "व्यासात्" **पृथक्** । "स्वराज्यं" **विना**, "स्वराज्येन" **विना** वा "स्वराज्यात्" **विना** उन्नतिः नास्ति ।

---

* साथ अर्थवाले अव्यय के छिपे रहने पर भी "सहार्थे तृतीया" होती है। "शत्रुणा" न हि सन्दध्यात्=शत्रु के साथ सन्धि नहीं करनी चाहिये ।

१४. कारण बोध होने से कभी-कभी हिन्दी में "से" चिह्न से काम लेते हैं। जैसे—आनन्द 'से' नाचता है। यहाँ 'आनन्द से' का अर्थ है 'आनन्द के कारण'। संस्कृत में भी कारण जान पड़े तो तृतीया और पंचमी दोनों।

चतुर्थी—

१. **जिसको दिया जाय, उसे सम्प्रदान** कहते हैं और **सम्प्रदान में चतुर्थी** होती है।

२. "उसके लिए" वा "के लिए" अर्थ में चतुर्थी होती है। इसीको **तादर्थ्ये चतुर्थी** वा **निमित्तार्थे चतुर्थी** कहते हैं।

३. नमः, स्वस्ति, स्वाहा, स्वधा, अलम् (समर्थ) और वषट् के योग में चतुर्थी। रामः "रावणाय" अलम्। "इन्द्राय" **वषट्**।

३. (क) **नमस्** के साथ **कृ** धातु जोड़कर क्रिया बना देने पर नमः के योग में चतुर्थी नहीं हो सकती।

३. (ख) यहाँ "अलम्" का अर्थ है "**समर्थ**"। अतः समर्थ अर्थवाले सभी पदों के योग में "**समर्थाऽर्थक-पद-योगे चतुर्थी**" होती है। रामः "रावणाय" अलम्, समर्थः, शक्तः, प्रभुः, प्रभवति, शक्नोति। इत्यादि।

४. रुचना या अच्छा लगना अर्थवाले धातु के योग में जिसको रुचे, उसमें "**रुच्यर्थक-धातु-योगे चतुर्थी**"।

५. **स्पृह्** धातु के योग में जिस चीज को चाहियेगा, उसमें चतुर्थी होगी।

६. **धारि** धातु के योग में जिसका धारियेगा, उसमें चतुर्थी (अर्थात् उत्तमर्ण (महाजन) में चतुर्थी)।

७. जिसके पास निवेदन कर देना, कह देना, सूचित कर देना वा भेज देना हो, उसमें "**क्रिया-योगे चतुर्थी**"।

८. *(i) कभी-कभी "**तुम्**" जोड़कर बने पद को हटाकर उसके कर्म में चतुर्थी होती है। (ii) या जिस धातु में "तुम्" जोड़ा गया है, उसी धातु से संज्ञा बनाकर उसी संज्ञा में चतुर्थी की जाती है। उसीको **तुमर्थे चतुर्थी** कहते हैं।

---

* बहुधा 'तादर्थ्ये चतुर्थी' और 'तुमर्थे चतुर्थी' दोनों नियम एक ही जगह लागू हो जाते हैं। जैसे, "विजयाय" गच्छ। विजयार्थं='विजयाय' में 'तादर्थ्ये चतुर्थी'। विजेतुम्='विजयाय' में 'तुमर्थे चतुर्थी'।

१४. **हेतौ तृतीया पंचमी च**— "आनन्देन" नृत्यति वा "आनन्दात्" नृत्यति। रोगी "दुःखेन" वा "दुःखात्" रोदिति। शिवस्य "प्रसादात्" **सिद्धिः** अस्तु। नरः "आलस्येन" रुग्णो भवति।

चतुर्थी—

१. **सम्प्रदाने चतुर्थी**— "दरिद्राय" धनं देहि। अहं "छात्राय" पुस्तकं ददामि। सम्राट् विक्रमादित्यः "वीरेभ्यः" पुरस्कारं दत्तवान्।

२. **तादर्थ्ये चतुर्थी**— "कुण्डलाय" सुवर्णम् आनय। "देश-हिताय" प्राणान् ददाति वीरः।

३. **नमःस्वस्ति-स्वाहा-स्वधाऽलं-वषड्-योगाच्च**— "श्रीगणेशाय" **नमः**। "नृपाय" **स्वस्ति**। "अग्नये" **स्वाहा**। "पितृभ्यः" **स्वधा**।

३. (क) अहं "गणेशं" **नमस्करोमि**। (यदि " 'गणेशाय' नमस्करोमि" हो तो " 'गणेश को खुश करने के लिए' नमस्कार करता हूँ" अर्थ होगा।)

३. (ख) **समर्थाऽर्थक-पद-योगे चतुर्थी**— रामः "रावणाय" अलम्, समर्थः, शक्तः, प्रभुः, प्रभवति, शक्नोति। इत्यादि। कृष्णः "कंसाय" अलम्, समर्थः, शक्तः, प्रभुः, प्रभवति, शक्नोति इत्यादि।

४. **रुच्यर्थक-धातु-योगे चतुर्थी**— "बालकाय" मोदकः **रोचते**। "वृद्धाय" घृत-खिच्चटिका **स्वदते**। "युवकाय" युद्धं **रोचते**। "ज्ञानिने" ज्ञानं **रोचते**।

५. **स्पृह्-धातु-योगे चतुर्थी**–लोभी "धनाय" **स्पृहयति**। ज्ञानी "ज्ञानाय" **स्पृहयति**।

६. **धारि-धातु-योगे चतुर्थी**— गोपालः "मोहनाय" एकं रूप्यकं **धारयति**। ईश्वरः "भक्ताय" मोक्षं **धारयति**। त्वं "मह्यं" शतं **धारयसि**।

७. **क्रिया-योगे चतुर्थी**— पुस्तकं देहि नोचेत् "शिक्षकाय" **निवेदयिष्यामि** वा **कथयिष्यामि** वा **सूचयिष्यामि**। भोजः "रघवे" दूतं **विसृष्टवान्** (भेजा)।

८. **तुमर्थे चतुर्थी**—(i) " 'जलम् आनेतुं' गच्छति" के बदले " 'जलाय' गच्छति।" "गणेशाय" नमस्करोति, प्रणमति, प्रणिपतति, प्रणामं करोति। ("गणेशम् अनुकूलयितुम्" वा "प्रसादयितुम्" के बदले "गणेशाय" हुआ।) (ii) " 'स्नातुं' गच्छति" का " 'स्नानाय' गच्छति"। " 'यष्टुं' याति" का " 'यागाय' याति"। " 'विजेतुं' गच्छ" का " 'विजयाय' गच्छ"।

९. जिसको निवृत्त करने अर्थात् हटाने के लिए कुछ किया जाय, उसमें **निवृत्त्यर्थे चतुर्थी**।

१०. किसी के कहने वा प्रार्थना करने पर कुछ करने की प्रतिज्ञा की जाय तो "प्रति + श्रु" या "आ + श्रु" धातु के योग में प्रार्थना करनेवाले में चतुर्थी। जैसे, कोई भिक्षुक कहता है कि "ए बाबू, एक कम्बल मिले" तब मैं कहता हूँ कि मैं तुम्हें कम्बल (देने को) इकरार करता हूँ। अब मैं " 'तुम्हें' कम्बल इकरार करता हूँ" का अनुवाद होगा "अहं **'तुभ्यं'** कम्बलम् **प्रतिश्रृणोमि** वा **आश्रृणोमि**"।

११. कल्पते, सम्पद्यते, जायते, अस्ति, भवति ये या इनके रूप छिपे हों या मौजूद हों, इनके परिणाम (Result) में चतुर्थी। इसी को **सम्पद्यमाने चतुर्थी** कहते हैं।

१२. क्रोध करना, द्रोह करना, ईर्ष्या करना और असूया करना अर्थवाले धातु के योग में जिसपर ये काम किये जायँ, उसमें चतुर्थी। **भवान्** "भृत्याय" न **कुप्यतु**। शिक्षकाः "छात्रेभ्यः" न क्रुध्यन्तु।

१२. (क) किन्तु क्रुध् या द्रुह् धातु के साथ उपसर्ग हो तो जिसपर क्रोध या द्रोह करें, उसमें द्वितीया।

१३. **शारीरिक चेष्टा समझी जाय तो** 'जाना' अर्थवाले धातु के योग में जहाँ जाया जाय, उसमें द्वितीया और चतुर्थी दोनों।

१३. (क) **शारीरिक चेष्टा न हो तो** जहाँ जाया जाय, उसमें केवल द्वितीया। जैसे—मैं **मन से** विद्यालय जाता हूँ। मन से जाने में शरीर को कुछ नहीं करना पड़ता है। अतः विद्यालय में केवल द्वितीया होगी।

१४. **दिवादि-गणीय मन् धातु के अनादर-सूचक कर्म में द्वितीया और चतुर्थी दोनों**। जैसे—मैं तुमको "तृण" समझता हूँ।

१४. (क) नौ, काक, अन्न, शुक वा श्रृगाल में से कोई अनादर-सूचक कर्म हो तो केवल द्वितीया।

९. **निवृत्त्यर्थे चतुर्थी**–"मशकाय" धूमः। "अन्धकाराय" दीपः। "पिपासायै" जलम्। "रोगाय" औषधम्। "क्षुधायै" अन्नम्।

१०. **प्रत्याङ्भ्यां श्रुवः पूर्वस्य कर्त्तरि चतुर्थी**—अहं "तुभ्यं" कम्बलम् **प्रतिश्रृणोमि** वा आश्रृणोमि। बिनाइन् गवर्मेण्टः "मौडरेट् लीडरेभ्यः" स्वराज्यम् प्रतिश्रृणोति वा आश्रृणोति। वस्त्र-विक्रेतारः "पं० मालवीयाय" विदेशीय-वस्त्र-व्यवसाय-त्यागं **प्रतिश्रृण्वन्ति**।

११. **सम्पद्यमाने चतुर्थी**— कलहः "नाशाय" कल्पते, सम्पद्यते, जायते, अस्ति वा भवति। कलहः "नाशाय"। कपिला विद्युत् "वाताय"। विद्या "ज्ञानाय"। एकैकमपि "अनर्थाय"। धनं "दानाय" "भुक्तये"।

१२. **क्रोधार्थक, द्रोहार्थक, ईर्ष्यार्थक और असूयार्थक** धातु के योग में चतुर्थी— अहं "दुष्टाय" क्रुध्यामि, कुप्यामि, द्रुह्यामि, ईर्ष्यामि वा असूयामि।

१२. (क) किन्तु **उपसर्गयुक्त क्रुध् या द्रुह् के** योग में **द्वितीया**—अहं "दुष्टम्" अभिक्रुध्यामि वा अभिद्रुह्यामि।

१३. **शारीरिक-चेष्टा-बोधे गत्यर्थक-धातु-योगे द्वितीया चतुर्थी च**— अहं "विद्यालयं" वा "विद्यालयाय" गच्छामि।

१३. (क) **शारीरिक-चेष्टायाः अभावे केवलं द्वितीया**— अहम् मनसा "विद्यालयं" गच्छामि।

१४. **मन्यतेरनादर-सूचक-कर्मणि द्वितीया चतुर्थी च**— अहं त्वां "तृणं" वा "तृणाय" मन्ये। वीरः जीवनं "तृणं" वा "तृणाय" मन्यते।

१४. (क) अहं त्वां "नावं", "काकं", "अन्नं", "शुकं" वा "श्रृगालं" मन्ये।

१५. ***हित आदि** शब्दों के योग में **चतुर्थी और षष्ठी** दोनों—"देशाय" हितं वा "देशस्य" हितं कुरु इत्यादि ।

पंचमी—

१. जहाँ से अलग होना समझा जाय, उसे अपादान कहते हैं। **अपादान में पञ्चमी** होती है ।

२. उत्पत्ति के हेतु में पञ्चमी (अर्थात् **जिससे उत्पन्न हो, उसमें पञ्चमी**)—"पिता से" पुत्र उत्पन्न होता है ।

३. आविर्भाव के स्थान में पञ्चमी (अर्थात् **जहाँ प्रकट हो, उसमें पञ्चमी**) ।

४. जिससे पढ़ा जाय वा जिससे सुना जाय, उसमें पञ्चमी । इसीको "**आख्यातोपयोगे पञ्चमी**" भी कहते हैं ।

५. जुगुप्सा, विराम, प्रमाद और लज्जा अर्थवालों के योग में पञ्चमी । वयम् "पापात्" **जुगुप्सामहे** । त्वम् "मांस-भोजनात्" **विरम** । "सत्यात्" न **प्रमदितव्यम्** । जनाः "अपवादात्" **लज्जन्ते** वा **त्रपन्ते** ।

६. जिससे नहीं दीख पड़ना चाहे अर्थात् **जिससे छिपना चाहे, उसमें पञ्चमी** ।

७. परा + जि धातु के योग में जो चीज न सही जाय, उसमें पञ्चमी होती है ।

८. जिससे डरना पड़े या बचना पड़े, उसमें पञ्चमी होती है । इसीको '**भय-हेतौ पञ्चमी**' कहते हैं ।

९. जिस चीज को बचाने के लिए हाँका जाय या हटाया जाय, उस चीज में "**वारणार्थक-धातु-योगे पञ्चमी**" ।

१०. तुलना में जो नीच जान पड़े, उसमें हिन्दी में "से" चिह्न या 'अपेक्षा' शब्द देते हैं और संस्कृत में भी पञ्चमी विभक्ति देते हैं । इसीको '**अपेक्षार्थे पञ्चमी**' कहते हैं ।

---

* हितं भद्रं सुखं भद्रं, कुशलं शं निरामयम् । अर्थं प्रयोजनं पथ्यं, आयुष्यं स्वागतं तथा ॥
सबों के योग में षष्ठी, चतुर्थी भी विकल्प से । प्रत्येक पद से दो-दो, स्वयं वाक्य बनाइये ॥

१५. **हितादि-शब्द-योगे चतुर्थी षष्ठी च**— 'ब्राह्मणाय' **हितं** वा 'ब्राह्मणस्य' हितम् । 'गवे' **हितम्** वा 'गोः' **हितम्** ।

पञ्चमी—

१. **अपाऽदाने पञ्चमी**— 'वृक्षात्' पत्रम् पतति । धावतः 'घोटकात्' अश्वारोही पतितः । अन्धः 'धनिकात्' भोजनम् प्राप्नोति । छात्रः 'विद्यालयात्' पुस्तकं गृह्णाति ।

२. **उत्पत्ति-हेतौ पञ्चमी**— 'पितुः' पुत्रः जायते, उत्पद्यते, भवति वा उद्भवति । 'पापात्' दुःखं जायते ।

३. **आविर्भाव-भूमौ पञ्चमी**–'हिमालयात्' गङ्गा आविर्भवति वा प्रभवति ।

४. **यस्मात् पठ्यते श्रूयते वा तत्र पञ्चमी**—कपिलदेवः 'पं० भरतमिश्रात्' सर्वम् **पठितवान्** । 'दूतात्' समाचारं **शृणु** ।

५. **जुगुप्सा-विराम-प्रमाद-लज्जाऽर्थानां योगे पञ्चमी**— सज्जनः 'पापात्' जुगुप्सते । अशोकः 'प्राणि-वधात्' **विरमति** । आर्य्यः 'कर्त्तव्यात्' **न प्रमाद्यति** । वधूः 'श्वशुरात्' **लज्जते, त्रपते, जिह्रेति** वा हृणीयते ।

६. **येनाऽदर्शनमिच्छति तत्र पञ्चमी**—कृष्णः 'मातुः' **लुक्कायते, निलीयते** वा **अन्तर्द्धत्ते** । चोरः 'राज-पुरुषात्' **अन्तर्द्धत्ते** ।

७. **परा-पूर्वक-जि-धातु-योगे पञ्चमी**— अलसः 'पठनात्' **पराजयते** ।

८. **भय-हेतौ पञ्चमी**— बालकः 'व्याघ्रात्' **बिभेति** वा **त्रस्यति** । ईश्वरः 'दुःखात्' **रक्षति, अवति, पाति** वा **त्रायते** ।

९. **वारणार्थक-धातु-योगे पञ्चमी**— 'धान्यात्' वृषभं वारयति । 'यवेभ्यः' गां वारयति । 'दुग्धात्' बिडालं वारय ।

१०. **अपेक्षाऽर्थे पञ्चमी**— पिता 'स्वर्गात्' उच्चतरः । 'धनात्' विद्या गरीयसी । 'भारतात्' सुन्दरतरः देशः कुत्र ? 'कालिदासात्' योग्यतरः कविः न अभूत् । 'अर्जुनात्' ज्यायान् भीमः ।

११. कभी-कभी हिन्दी में 'करके' वाले पद को हटाकर 'से' चिह्न से काम लेते हैं। जैसे—कोठे पर 'चढ़कर' देखता है के बदले कोठे 'से' देखता है। संस्कृत में भी **'ल्यप्' प्रत्यय को हटाकर पञ्चमी** होती है।

१२. जहाँ से गिनें या नापें, उस **अवधि में पञ्चमी**—छपरा नगर से पाँच कोस। कार्त्तिक से नौ महीने।

१३. **दिग्वाचक, देश-वाचक और काल-वाचक** शब्दों के योग में पञ्चमी—'छपरा-नगरात्' **पूर्वस्यां दिशि**। दिग्-देश-काल-वाचक-शब्द-योगे पञ्चमी।

१४. अन्य, भिन्न, अपर, इतर इत्यादि **अन्याऽर्थक शब्दों के योग में पञ्चमी**। (किसी क्रिया का भी अर्थ हो 'अन्यः अस्ति' वा 'भिन्नः अस्ति' तो उसके योग में भी पञ्चमी।)

१५. प्रभृति, आरभ्य, बहिर्, आरात्, ऊर्ध्वम्, परम् और अनन्तरम् के योग में पञ्चमी—'सोम-वारात्' **प्रभृति** परीक्षा भविष्यति। 'वैशाख-मासात्' **आरभ्य** ग्रीष्मावकाशः भविष्यति।

१६. **आच्** और **आहि प्रत्यय के योग में पञ्चमी**—'नगरात्' **उत्तरा** वा **उत्तराहि** नदी वहति।

१७. **आङ्** का अर्थ **'तक'** वा **'से'** हो तो **आङ् के योग में पञ्चमी**।

१८. **प्रतिनिधि** वा **प्रतिदान** (बदले में देना) अर्थ हो तो **प्रति के योग में पञ्चमी**—प्रधान-शासकः 'नृपात्' **प्रति**।

१९. **ऋते** के योग में **द्वितीया** और **पञ्चमी** दोनों—'संस्कृत-पठनम्' **ऋते** वा 'संस्कृत-पठनात्' **ऋते** ज्ञानम् न भवति।

२०. **दूर** और **अन्तिक** (समीप) अर्थवाले शब्द किसी के विशेषण न हों तो उनमें द्वितीया, तृतीया और पञ्चमी।

षष्ठी—

१. **सम्बन्ध में षष्ठी** होती है— 'रामस्य' पुत्रः। कभी-कभी 'को' चिह्न रहने पर भी सम्बन्ध ही समझा जाता है। विलसन **को** शौक था = 'विलसनस्य' श्रद्धा आसीत्। युधिष्ठिर **को** एक कुक्कुर था = **'युधिष्ठिरस्य'** एकः कुक्कुरः आसीत्।

११. **ल्यबर्थे पञ्चमी** वा **ल्यब्लोपे पञ्चमी**— 'प्रासादम् आरुह्य पश्यति' में से 'आरुह्य' हटा दें तो '**प्रासादात्** पश्यति'। 'आसने उपविश्य वदति' में से 'उपविश्य' हटा दें तो '**आसनात्** वदति'।

१२. **अवधि-बोधक-शब्दे पञ्चमी**—'छपरा-नगरात्' पञ्च क्रोशाः। 'कार्त्तिकात्' नव मासाः।

१३. **दिग्-देश-काल-वाचक-शब्द-योगे पञ्चमी**— 'आशुतोषात्' **पश्चिम-देशे** रामावतारः वसति। मम 'गमनात्' **पूर्वं** न गच्छ।

१४. **अन्यार्थक-पद-योगे पञ्चमी**— 'शिव-राजात्' **अन्यः** कः हिन्दु-धर्मम् अरक्षिष्यत्? 'मित्रात्' **अन्यः**, **भिन्नः**, **अपरः** वा **इतरः** कः रक्षिष्यति? पशुः 'नरात्' **भिद्यते**।

१५. 'गृहात्' बहिर्गच्छ। 'शोणपुरात्' **आरात्** हाजीपुरम्। तव 'गमनात्' **ऊर्ध्वम्**, **परम्** वा **अनन्तरम्** अहम् पठिष्यामि (तुम्हारे जाने के बाद मैं पढ़ूँगा)।

१६. **आच्-प्रत्यय-योगे पञ्चमी**—'विहारात्' **दक्षिणा** आन्ध्र-प्रदेशः।
आहि-योगे पञ्चमी— 'विहारात्' **उत्तराहि** नयपाल-देशः।

१७. **आङ्-योगे पञ्चमी— आ** 'पाटलिपुत्रात्' देवः वृष्टः। **आ** 'बाल्यात्' यशः शङ्करस्य।

१८. **प्रतिनिधि-प्रतिदानार्थयोः प्रति-योगे पञ्चमी**— रामः 'दशरथात्' **प्रति**। कृषकः 'तिलेभ्यः' माषान् **प्रतियच्छति** वा **प्रतिददाति**।

१९. **ऋते-योगे द्वितीया पञ्चमी च**—'ज्ञानम्' **ऋते** वा 'ज्ञानात्' **ऋते** मोक्षः न भवति। 'परिश्रमम्' **ऋते** वा 'परिश्रमात्' **ऋते** किमपि न भवति।

२०. **दूराऽन्तिकाऽर्थेभ्यः द्वितीया तृतीया पञ्चमी च**— ग्रामस्य 'दूरम्', 'दूरेण' वा 'दूरात्'; 'अन्तिकम्,' 'अन्तिकेन' वा 'अन्तिकात्'।

षष्ठी—

१. **सम्बन्धे षष्ठी**— 'शुद्धोदनस्य' पुत्रः बुद्धः। 'सप्तमैडवर्डस्य' सूनुः पञ्चम-जयोर्जः। 'मम' कलमः। 'मूर्खस्य' पुच्छं न भवति। 'नेपोलियनस्य' अपूर्व-शक्तिः। 'किरण-देव्याः' विचित्र-साहसम्।

२. उचित हो कोई दूसरी विभक्ति, पर हो जाय षष्ठी, तो उसे **विवक्षया षष्ठी** कहते हैं— 'विष्णु-शर्मणः' समर्पितवान् ।

३. अतसुच्, अस्ताति, असि, आति इत्यादि प्रत्ययों के योग में षष्ठी । इसीको **अतसर्थ-प्रत्यय-योगे षष्ठी** कहते हैं ।

४. द्वि + सुच् = **द्विः** (दो बार), त्रि + सुच् = **त्रिः** (तीन बार), चतुर् + सुच् = **चतुः** (चार बार), पञ्चन् + कृत्वसु = **पञ्चकृत्वः** (पाँच बार) ।

५. जासि, नि + हन्, प्र + हन्, निप्र + हन्, प्रणि + हन्, नाट्, क्राथ् और पिष् धातु के योग में **हिंसा अर्थ में** षष्ठी और द्वितीया दोनों ।

६. स्मरणार्थक धातु, दय् धातु और ईश् धातु के योग में द्वितीया और षष्ठी दोनों । अतः लिखा है— **अधीगर्थ-दयेशां कर्मणि द्वितीया षष्ठी च** ।

७. **'एनप्'** प्रत्ययवाला पद तृतीयान्त-सा दीख पड़ता है । पर वह अव्यय है । उसके योग में **द्वितीया** और **षष्ठी** दोनों ।

८. **तृप्त होना** अर्थवालों के योग में जिस चीज से तृप्त होना है, उस चीज में **तृतीया** और **षष्ठी** ।

९. जिन-जिन शब्दों का अर्थ हो **तुल्य** वा **समान**, उन शब्दों के योग में **तृतीया और षष्ठी** दोनों । 'भास्कर-पण्डितेन' **सदृशः** योद्धा भव । **'लक्ष्मणस्य' तुल्यः** भ्रातृ-भक्तः भव ।

१०. **दूर** और **निकट** अर्थवालों के योग में **पञ्चमी** और **षष्ठी** दोनों । 'विद्यालयात्' वा 'विद्यालयस्य' **दूरम्** वा **समीपम्** ।

११. **हेतु शब्द** विद्यमान हो तो जिस कारण कुछ होता हो, उस चीज में और हेतु शब्द में भी **षष्ठी** ।

१२. सर्वनाम के साथ हेतु शब्द हो तो **सर्वनाम और हेतु शब्द** दोनों में **तृतीया भी, षष्ठी भी** ।

१३. **निमित्त, कारण** या और कोई निमित्त-वाचक शब्द हो तो प्रायः **सब विभक्तियाँ** देखी जाती हैं । 'किं प्रयोजनम्' ? 'कस्मै प्रयोजनाय' ? इत्यादि ।

२. **विवक्षया षष्ठी**—'कस्यचित्' न आख्येयः अयं वृत्तान्तः। 'भयस्य' न भेतव्यम्। 'रजकस्य' वस्त्रं ददाति।

३. 'ग्रामस्य' **पुरतः**, **पुरस्तात्** वा **पुरः** वाटिका विद्यते। 'प्रासादस्य' **उपरि** वा **उपरिष्टात्** पताका शोभते। 'नगरस्य' **दक्षिणात्** नदी वहति।

४. **कृत्वसु** और **सुच्** प्रत्यय के योग में **षष्ठी**—'दिनस्य' **सप्तकृत्वः** खादति = दिन में सात बार खाता है। 'सप्ताहस्य' **द्विः** गणितम् पठति।

५. 'चौरम्' अथवा 'चौरस्य' उज्जासयति, निहन्ति, प्रहन्ति, निप्रहन्ति, प्रणिहन्ति, नाटयति, क्राथयति वा पिनष्टि।

६. स 'मित्रं' वा 'मित्रस्य' **स्मरति**। प्रतापः 'दीनं' वा 'दीनस्य' **दयते**। स्वामी 'भृत्यं' वा 'भृत्यस्य' **ईष्टे**।

७. **एनप्-प्रत्यय-योगे द्वितीया षष्ठी च**—'छपरा-नगरम्' वा 'छपरा-नगरस्य' **दक्षिणेन** सरयू-नदी वहति।

८. **तृप्त्यर्थक-पद-योगे तृतीया षष्ठी च**—'जलेन' वा 'जलस्य' **तृप्तः** = जल से अघाया हुआ। अग्निः 'काष्ठैः' वा 'काष्ठानां' न **तृप्यति**।

९. **तुल्यार्थक-पद-योगे तृतीया षष्ठी च**—'रामेण' वा 'रामस्य' **तुल्यः** कोऽपि नास्ति। 'यतीन्द्रेण' वा 'यतीन्द्रस्य' **सदृशः**, **समः** वा **समानः** कोऽस्ति ? = यतीन्द्रनाथ सेन के समान कौन है ?

१०. **दूराऽन्तिकाऽर्थानां योगे पञ्चमी षष्ठी च**—'ग्रामात्' वा 'ग्रामस्य' दूरम्, विप्रकृष्टम्, अन्तिकम्, अभ्याशम् वा समीपम्।

११. **षष्ठी हेतु-प्रयोगे**—'अन्नस्य' **हेतोः** वसति। 'पठनस्य' **हेतोः** आयाति। 'अल्पस्य' **हेतोः** बहु जहाति = थोड़े के हेतु बहुत बाज आता है।

१२. **सर्वनाम-पूर्वक-हेतु-शब्दे तृतीया षष्ठी च**—'केन हेतुना' वा 'कस्य हेतोः' लाजपतरायं ताडितवान् ?

१३. **निमित्त-पर्याय-प्रयोगे सर्वासाम् प्रायदर्शनम्**—'किं निमित्तम्', 'केन निमित्तेन', 'कस्मै निमित्ताय', 'कस्मात् निमित्तात्', 'कस्य निमित्तस्य' वा 'कस्मिन् निमित्ते' अत्र वससि ?

१४. **धातु** में प्रत्यय जोड़कर बनाये गये पदों के योग में कभी **कर्त्ता में षष्ठी** और कभी **कर्म में षष्ठी** मिलती है। इसे **कृद्योगे षष्ठी** कहते हैं— " 'वे' घबराते हैं" का " 'उनकी' **घबराहट** है।" " 'सूत को' कातती है" का " 'सूत की' **कताई** करती है"।

१४. (क) '**कृद्योगे** षष्ठी' के मौके पर कर्त्ता और कर्म्म दोनों हों तो कर्म्म में ही षष्ठी अच्छी होती है।

१४. (ख) किसी-किसी की राय है कि कर्त्ता और कर्म्म दोनों शिकार पर चढ़े हों तो **कर्म्म में** जरूर **षष्ठी** मारो। कर्त्ता में चाहो तो षष्ठा मारो, न चाहो तो कर्त्ता को तृतीया विभक्ति का शिकार बनने दो।

१५. शतृ, शानच्, स्यतृ, स्यमान, क्वसु, कानच्; उ या उकारान्त कोई प्रत्यय; उक; क्त्वा, ल्यप्, तुम्, णम्; क्त, क्तवतु; खल् या खल् प्रत्यय के अर्थ में कोई प्रत्यय और तृन् **इतने कृत् प्रत्ययों के योग में षष्ठी नहीं**—'ग्रामं' **गच्छन्**। 'धनं' **लभमानः**। 'कार्यं' **करिष्यन्**। 'सुखं' **लप्स्यमानः**। 'गृहं' **जग्मिवान्**। 'गुरुं' **ववन्दानः**। इत्यादि। (शेष उदाहरण २६वें पृष्ठ पर देखिये।)

१६. 'क्त' प्रत्यय के योग में षष्ठी नहीं, पर वर्त्तमान काल में व्यवहृत हो तो **वर्त्तमाने क्त-योगे षष्ठी** होती है।

१७. **क्त** प्रत्ययवाला पद भाव-वाचक संज्ञा का काम करे तो उसके योग में **षष्ठी** होती है।

१८. **भाव-वाच्य में क्त** के कर्त्ता में तृतीया तो उचित है ही, षष्ठी भी हो सकती है। (पर, आप परहेज रखें।)

१९. **क्त** वाला पद **अधिकरण** से सरोकार रखता हो तो उसके योग में षष्ठी।

१४. **कृद्योगे षष्ठी** (कर्त्तरि कर्मणि च)—" 'स' उद्विजते" का " 'तस्य' उद्वेगः अस्ति"। " 'सूत्रं' कृन्तति" का " 'सूत्रस्य' **कृन्तनं** करोति"। "सुभाषः 'अरविन्दं' न प्रशंसति" का "सुभाषः 'अरविन्दस्य' **प्रशंसां** न करोति"। 'कृष्णस्य' **कृतिः**। 'संसारस्य' **हर्त्ता**। 'शिवस्य' **प्रसादः**।

१४. (क) **उभय-प्राप्तौ कर्म्मणि**— कायस्थेन 'गवां' **दोहः** आश्चर्य्यकरः = कायस्थ से 'गायों का' **दूहा जाना** आश्चर्यकर है।

१४. (ख) **केचित् विकल्पेन कर्त्तरि षष्ठीम् इच्छन्ति**— 'आचार्येण' वा 'आचार्यस्य' **वेदस्य अध्यापनम्**। 'राममोहनेन' वा 'राममोहनस्य' ब्रह्म-समाजस्य **स्थापनम्**।

× × × ×

१५. ल, उ, उक, अव्यय, निष्ठा; खलर्थ तृनां षष्ठी न (लय से पढ़िये)। **न लोकाऽव्यय-निष्ठा-खलर्थ-तृनाम्** इस सूत्र में जितने प्रत्यय हैं, उन प्रत्ययों से बने शब्दों द्वारा अनेक वाक्य बनवाइये। खूब अभ्यास हो जाने पर पूछिये—"ये प्रत्यय भी तो कृत् हैं, इनके योग में 'कृद्योगे षष्ठी' देखते हो ?" जब छात्र कहें कि 'नहीं', तब बताइये कि **"ये प्रत्यय 'कृद्योगे षष्ठी' के विरुद्ध हैं"** और अपनी सहायता से उपर्युक्त नियम छात्रों द्वारा ही बनवा डालिये।

१६. **वर्त्तमाने क्त-योगे षष्ठी**— भगवान् तिलकः 'सर्वेषां' **मतः**, **बुद्धः** वा **पूजितः** = भगवान् तिलक को सब कोई मानते हैं, जानते हैं या पूजते हैं।

१७. **भाव-वाचक-क्त-योगे षष्ठी**— 'श्रीराजेन्द्रप्रसादस्य' **भाषितम्**। (यहाँ 'भाषितम्' का अर्थ है 'भाषणम्'। अतः 'श्रीराजेन्द्रप्रसाद' में षष्ठी हुई।)

१८. **भाव-वाच्ये क्तस्य कर्त्तरि तृतीया षष्ठी च**— 'तेन' **स्नातम्** वा 'तस्य' **स्नातम्**। 'वृद्धेन' वा 'वृद्धस्य' **जागरितम्**।

१९. **अधिकरण-वाचक-क्त-योगे कर्त्तरि षष्ठी**— इदं 'रामस्य' **आसितं**, **शयितं**, ... **भुक्तम्**।

२०. तव्य, अनीय, यत्, ण्यत् इत्यादि प्रत्यय **'कृत्य' प्रत्यय** कहे जाते हैं। इनके कर्त्ता में **तृतीया** और **षष्ठी** दोनों।

सप्तमी—

१. अधिकरण में सप्तमी होती है। (आधार **तीन** प्रकार के हैं— **(क) औपश्लेषिक** आधार— 'घर में' मनुष्य है। **(ख) वैषयिक** आधार— 'धर्म्म में' रुचि है। **(ग) अभिव्यापक** आधार— 'तिल में' तेल है।)

२. **क्त** प्रत्यय वाले शब्द में **इन्** जोड़ने पर 'गुणिन्' के समान रूप होते हैं: **क्त** और **इन्** दोनों **से युक्त पद के योग में सप्तमी**।

३. **प्रशंसा** सूचित करनी हो तो **साधु** और **निपुण** के योग में **सप्तमी**।

४. **निमित्त** यदि कर्म्म में जुटा हुआ हो तो निमित्त में **सप्तमी**— 'चमड़े के लिए' व्याघ्र को मारता है। यहाँ 'चमड़ा' निमित्त है, वह बाघ में जुटा हुआ है। अतः 'चर्मणि' में सप्तमी है।

४. (क) 'निमित्तार्थे चतुर्थी' तो निमित्त कर्म में जुटा रहे तब भी और न जुटा रहे तब भी होती है ही। 'मुक्ताफल के लिए' हाथी को मारता है।

५. कभी-कभी योग्यता बोध होने पर **जिसकी योग्यता** समझी जाय, **उसमें सप्तमी**। इदं 'त्वयि' युक्तम्।

६. कभी-कभी सम्भव बोध होने पर **जिसमें सम्भव हो**, उसमें **सप्तमी**।

७. एक काम होते रहने पर वा हो चुकने पर दूसरा काम होता हो तो पहले काम में **भावे सप्तमी**।

८. कभी-कभी जिस अङ्ग में किसी को पकड़ा जाय या मारा जाय, उस अंग में **अवच्छेदे सप्तमी**।

९. कोई रुकावट होते हुए भी **उसकी परवाह न कर** उसके विरुद्ध कुछ हो जाय तो **रुकावट में षष्ठी** और **सप्तमी** दोनों।

१०. **जिस झुंड में से** किसी को वा कुछ को भला वा बुरा निर्धारित कर वा किसी प्रकार **अलग किया जाय, उस झुंड में षष्ठी** और **सप्तमी** दोनों। जैसे—नारियों में सीता श्रेष्ठ हैं। पर्वतों में मेरु श्रेष्ठ है।

२०. **कृत्यानां कर्त्तरि तृतीया षष्ठी च**— 'मया' वा 'मम' धर्म्मः **कर्त्तव्यः**। 'सर्वेण' वा 'सर्वस्य' ईश्वरः **उपासनीयः**। 'त्वया' वा 'तव' **देयम्**।

सप्तमी—

१. **अधिकरणे सप्तमी**— 'आसने' सभापतिः अस्ति। 'गृहे' रोगी शेते। 'धर्म्मे' रुचिः अस्ति। 'व्याकरणे' चतुरः। 'तिले' तैलं वर्त्तते। 'दुग्धे' घृतं विद्यते। 'सर्वस्मिन्' आत्मा अस्ति।

२. **इन्-विषयक-क्त-योगे सप्तमी**— 'सकल-विद्यासु' **अधीती** ब्राह्मणः आगतः। डा० मुञ्जे 'नेत्र-चिकित्सायाम्' **अधीती**।

३. **साधु-निपुणाभ्यां योगे सप्तमी**— कृष्णः 'मातरि' **साधुः** वा **निपुणः**।

४. **निमित्तात् कर्म्म-योगे सप्तमी**—

'चर्मणि' द्वीपिनं हन्ति। 'दन्तयोः' हन्ति कुञ्जरम्।
'केशेषु' चमरीं हन्ति। 'सीम्नि' पुष्कलकः हतः॥

४. (क) कर्म में निमित्त के जुटे रहने पर भी 'निमित्तार्थे चतुर्थी'। जैसे— 'मुक्ताफलाय' करिणं हन्ति। 'पलाय' वा 'मांसाय' हरिणं हन्ति।

५. **यस्य योग्यता बुध्यते तत्र सप्तमी**— त्रैलोक्यस्य अपि प्रभुत्वं 'त्वयि' युज्यते। अस्मिन् 'राजनि' एतत् उपपन्नम्।

६. **यस्मिन् सम्भाव्यते तत्र सप्तमी**— 'त्वयि' सर्वं सम्भाव्यते।

७. **भावे सप्तमी**— 'बालकेषु धावत्सु' वर्षाः आगताः। 'रामे गते' लक्ष्मणः आगतः। 'सभायां विसर्जितायां' गोपालकृष्णः गतः।

८. **अवच्छेदे सप्तमी**— रक्षकः चोरं 'करे' धृतवान्। दुर्य्योधनः द्रौपदीं 'केशेषु' कृष्टवान्। भोजः वत्सराजं 'शिरसि' ताडितवान्।

९. **अनादरे षष्ठी सप्तमी च**— 'पश्यतः रक्षकस्य' वा 'पश्यति रक्षके' चोरः धनं नीतवान्। 'रुदतः पुत्रस्य' वा 'रुदति पुत्रे' पिता पलायितः।

१०. **निर्धारणे षष्ठी सप्तमी च**— 'वीराणां' वा 'वीरेषु' कुमारसिंहः श्रेष्ठः। 'शिक्षकाणां' वा 'शिक्षकेषु' पूज्य-भरत-मिश्रः उत्तमः। 'नराणां' वा 'नरेषु' देश-द्रोही नीचतमः।

११. स्वामी, ईश्वर, अधिपति, दायाद, साक्षी, प्रतिभू और प्रसूत शब्द के योग में षष्ठी और सप्तमी दोनों— 'विवादस्य' **साक्षी** = मुकदमे का गवाह, 'विवादे' **साक्षी** = मुकदमे में गवाह।

१२. जिसपर प्रसन्न हुआ जाय, उसमें षष्ठी और सप्तमी दोनों।

१३. **वि-पूर्वक श्वस् धातु के योग में** जिसपर विश्वास किया जाय, उसमें **द्वितीया, षष्ठी** और **सप्तमी**।

१४. **अधिक शब्द** के योग में पञ्चमी और सप्तमी— 'लोके' वा 'लोकात्' **अधिकः** हरिः।

१५. **प्रसित** और **उत्सुक** शब्द के योग में तृतीया और सप्तमी— 'हरिणा' **प्रसितः** वा 'हरौ' **प्रसितः**। 'हरिणा' **उत्सुकः** वा 'हरौ' **उत्सुकः**।

१६. **रास्ते की दूरी में प्रथमा और सप्तमी**— छपरा नगर से सोनपुर '१६ कोस' है या '१६ कोस पर' है।

१७. दो क्रियाओं के बीच पड़ी हुई राह **में या समय में पञ्चमी** और **सप्तमी**— यहाँ **रहकर** मैं 'कोस भर पर' निशाना **मारता हूँ**। आज **खाकर** मैं 'एक सप्ताह पर' **खाऊँगा**।

२२वें पृष्ठ की १५वीं संख्या के शेष उदाहरण— 'हरिं' **दिदृक्षुः**। 'गृहम्' **अलङ्करिष्णुः**। 'दैत्यान्' **घातुकः**। 'फलं' **खादित्वा**। 'शङ्करम्' **प्रणम्य**। 'पेशवा-कथां' **श्रोतुम्**। 'शास्त्रं' **श्रावं श्रावम्**। 'विवेकानन्दः' 'अमेरिकां' **गतः**। 'गणनाथः' 'प्रत्यक्ष-शारीरं' **लिखितवान्**। 'आशुतोषेण' सर्वं 'कार्यं' **सुकरम्**। 'चित्त-रञ्जनेन' 'शत्रुः' **दुःशासनः**। 'गुरुदासः' 'कार्यं' **कर्त्ता**।*

---

* **तृन्** से **शील**, स्वभाव (Habit) प्रकट होता है। 'कार्यं' **कर्त्ता** (काम करने का शील वाला)। **तृच्** से केवल **वाला** प्रकट होता है— 'कार्यस्य' **कर्त्ता** (काम का करनेवाला)।

११. 'गवां' वा 'गोषु' **स्वामी, ईश्वरः** वा **अधिपतिः**। 'सम्पत्तौ' वा 'सम्पत्तेः' **दायादः**। 'विवादस्य' वा 'विवादे' **साक्षी**। 'व्यवहारस्य' वा 'व्यवहारे' **प्रतिभूः**। 'गवां' वा 'गोषु' **प्रसूतः**।

१२. अहं 'तव' तुष्टः वा प्रसन्नः अस्मि। अहम् 'त्वयि' तुष्टः वा प्रसन्नः।

१३. **वि-पूर्वक-श्वस्-धातु-योगे द्वितीया षष्ठी सप्तमी च**— अहम् 'त्वाम्' **विश्वसिमि** वा 'तव' **विश्वसिमि** वा 'त्वयि' **विश्वसिमि**।

१४. **अधिक-शब्द-योगे पञ्चमी सप्तमी च**—'लोके' **अधिकः** हरिः वा 'लोकात्' **अधिकः** हरिः।

१५. **प्रसितोत्सुकाभ्यां तृतीया सप्तमी च**—श्रद्धानन्दः 'शुद्धौ' वा 'शुद्ध्या' **प्रसितः**। देशः 'स्वराज्येन' वा 'स्वराज्ये' **उत्सुकः**।

१६. **मार्ग-व्यवधान-सूचक-शब्दे प्रथमा सप्तमी च**—छपरा-नगरात् शोणपुरं 'षोडश क्रोशाः' वा 'षोडशसु क्रोशेषु'।

१७. **क्रिया-मध्येऽध्व-कालाभ्याम् पञ्चमी सप्तमी च**—अत्र **स्थितः** अहं 'क्रोशात्' वा 'क्रोशे' लक्ष्यं **विध्यामि**। अद्य **खादित्वा** अहं 'सप्ताहात्' वा 'सप्ताहे' **खादिष्यामि**।

---

(३) स्त्री-प्रत्यय

१. **अकारान्त शब्द में 'आ'*** जोड़ने से स्त्रीलिङ्ग शब्द बन जाता है— 'सुलतान' में 'आ' जोड़ने से 'सुलताना'। इसी प्रकार साहिबा, महाशया, पण्डिता। (सुलतान फारसी और साहिब अरबी शब्द हैं)

२. अन्त में **अक** के ऐसा उच्चारण होता हो तो **इका** कीजिये—'पाठक' का 'पाठिका'। इसी प्रकार लेखिका, नायिका, गायिका, सम्पादिका।

---

* (क) 'आ', 'ई', 'आनी' और 'ऊ' जोड़ने से स्त्रीत्व प्रकट होता है।

(ख) 'आ' को 'आप्' या 'टाप्'; 'ई' को 'ईप्' या 'ङीप्'; 'आनी' को 'आनीप्' और 'ऊ' को 'ऊप्' या 'ऊङ्' भी कहते हैं।

(ग) 'छात्र' का स्त्रीलिङ्ग, 'छात्रा' और 'छात्री' दोनों। किन्तु, कई कारणों से 'छात्री' अधिक ठीक है।

२. (क) पर, 'क्षिपक' का 'क्षिपका' और 'सेवक' का 'सेवका'। इसी प्रकार अष्टका, कन्यका, तारका, उपत्यका, अधित्यका, करका (इनमें 'इका' नहीं)।

२. (ख) कला प्रकट करनी है, अतः 'नर्त्तक' का 'नर्त्तकी' (नाचने की कला जाननेवाली), 'रजक' का 'रजकी' (धोने की कला जाननेवाली)।

३. **जाति-वाचकों में 'ई'**—ब्राह्मणी, सिंही, छागी, मृगी, हरिणी, कुक्कुटी, शूकरी, घोटकी, मेषी, भेडी, मानुषी।

३. (क) **किन्तु** 'अजाऽश्वा कोकिला बाला, चटका मूषिका तथा।
ज्येष्ठा कनिष्ठा वत्सा च, शूद्रा शूद्री द्वयं भवेत्॥
शूद्रा = शूद्र-जातौ उत्पन्ना और शूद्री = शूद्रस्य भार्या। 'महाशूद्र' का (केवल) 'महाशूद्री'।

४. जिनकी **उपधा में 'य' हो, उनमें 'आ'**—'वैश्य' का 'वैश्या'। परन्तु गवयी, हयी, मुकयी, मत्सी, **मनुषी** और गार्गी में 'ई' जोड़ा गया। ('ई' जोड़ते ही मत्स्य, मनुष्य और गार्ग्य का 'य' लुप्त)।

५. **उसकी स्त्री अर्थ में 'ई'**—गोपस्य जाया = गोपी। इसी प्रकार गणकी, निषादी, नापिती।

५. (क) **पालक** जिसके अन्त में हो, उसमें **'ई' नहीं**—गो-पालकस्य जाया = गोपालिका। इसी प्रकार पशु-पालिका।

६. जिन प्रत्ययों में से 'ट्' निकाल दिया जाता है, ऐसे प्रत्ययों से बने शब्दों में और अन्यत्र भी 'ई'—गायनी, निशाचरी, दयामयी, महाराजी*, द्वयी, द्वितयी; त्रयी, त्रितयी; चतुष्टयी।

७. जिन प्रत्ययों में से 'ष्' निकाल दिया जाता है, ऐसे प्रत्ययों से बने शब्दों में और अन्यत्र भी 'ई'—जानकी, द्रौपदी, शैवी, मागधी, नर्त्तकी, रजकी, ईदृशी।

---

* 'महाराजा' पद कहीं मिले तो समझिये कि 'राजन्' शब्द के साथ बहुव्रीहिसमास हुआ है और समस्त पद किसी स्त्रीलिङ्ग पद का विशेषण हो गया है। यथा—महान् राजा यस्यां (नगर्यां) सा = महाराजा (नगरी का विश० है)।

८. कुछ में '**आनी**' जोड़ते हैं और कुछ में **कभी '**आनी**'** और **कभी** 'ई'—इन्द्राणी, वरुणानी, सर्वाणी, शर्वाणी, भवानी, रुद्राणी, मृडानी, ब्रह्माणी*, मातुलानी और मातुली, आचार्यानी (आचार्यस्य भार्या) और आचार्या (अध्यापिका); उपाध्यायानी और उपाध्यायी (उपाध्यायस्य भार्या), उपाध्यायी और उपाध्याया (अध्यापिका), अर्याणी और अर्या (स्वामिनी या वैश्या), अर्यी (अर्यस्य जाया), क्षत्रियाणी और क्षत्रिया (क्षत्रिय-जातौ जाता), क्षत्रियी (क्षत्रियस्य भार्या), हिमानी (महत् हिमम्), अरण्यानी (महत् अरण्यम्), यवानी (दुष्टः यवः), यवनानी (यवनानां लिपिः), यवनी (यवनस्य भार्या), अग्नायी, पूतक्रतायी, वृषाकपायी। मनावी, मनायी और मनुः। सूर्या (सूर्यस्य स्त्री देवता) और सूरी (सूर्यस्य स्त्री मनुषी)।

९. '**गौर' आदि में** 'ई'—गौरी, किशोरी, कुमारी, तरुणी, तलुनी, अनडुही और अनड्वाही।

१०. प्रथमा, द्वितीया और तृतीया को छोड़ **पूरण-वाचकों में** 'ई'—चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी, एकादशी, द्वादशी, षोडशी, विंशी, विंशतितमी, शततमी।

११. **अञ्च् धातु** जिनके अन्त में हो, उन शब्दों में भी 'ई'—प्राची, अवाची। प्रतीची और प्रत्यञ्ची। उदीची और उदञ्ची। तिरश्ची और तिर्यञ्ची।

१२. ईयसुन्, वतुप्, मतुप्, डवतु, क्तवतु, वसु और क्वसु से बने शब्दों में 'ई'—गरीयसी, गुणवती, श्रीमती, भवती (आप), गतवती, विदुषी, जग्मुषी, पेतुषी, निषेदुषी।

१३. **शतृ आदि ऋकारान्त** प्रत्ययों से बने शब्दों में 'ई'—भू + शतृ = 'भवत्' (होता हुआ) का 'भवन्ती' = (होती हुई)। इसी प्रकार गच्छन्ती,

---

*'ब्रह्मन्' का 'ब्रह्माणी' कहना पाणिनि के विरुद्ध है। 'ब्रह्माण' का 'ब्रह्माणी' होता है। ब्रह्मन् + अन् + अण् = ब्रह्माण। 'ई' जोड़ने पर 'ब्रह्माणी'। ब्रह्माणम् आनयति (जिलाती (है या सा = ब्रह्माणी।

चलन्ती इत्यादि। भू+स्यतृ=भविष्यत् का भविष्यन्ती। इसी प्रकार करिष्यन्ती, गमिष्यन्ती, पठिष्यन्ती, लिखिष्यन्ती इत्यादि।

१४. **ऋकारान्त शब्दों में** 'ई'—'दातृ' का 'दात्री'। 'कर्त्तृ' का 'कर्त्री'। इसी प्रकार हर्त्री, स्मर्त्री, नेत्री, धात्री, गन्त्री इत्यादि। '**नृ**' वा '**ना**' वा '**नर**' का 'नारी'।

१४. (क) **पर** स्वसृ, तिसृ, चतसृ, ननान्दृ, दुहितृ, यातृ (गोतिनी) और मातृ स्वयं स्त्रीलिङ्ग हैं। अतः कुछ नहीं जोड़ते।

१५. **'गुणिन्' के समान जिनका रूप हो, उनमें** 'ई'—'गुणिन्' का 'गुणिनी'। इसी प्रकार धनिनी, मानिनी, भाविनी, परीक्षार्थिनी, विद्यार्थिनी, तपस्विनी, पयस्विनी, मायाविनी, मेधाविनी, स्रग्विणी, वाग्मिनी।

१६. 'राजन्' का 'राज्ञी'*।
पञ्चन्, षष्, सप्तन्, अष्टन्, नवन्, दशन् के रूप तीनों लिङ्गों में एक ही। एक, द्वि, त्रि और चतुर् के रूप तीनों लिङ्गों में स्मरण रखिये।

१७. **मन्**-भागान्त शब्दों में विकल्प से '**आ**' जोड़ सकते हैं—'सीमन्' (स्त्री०) के रूप—सीमा, सीमानौ, सीमानः और '**आ**' जोड़ने पर—सीमा, सीमे, सीमाः।
दामन्†—दामा, दामानौ, दामानः और '**आ**' जोड़ने पर—दामा, दामे, दामाः।
पामन्—पामा, पामानौ, पामानः और '**आ**' जोड़ने पर—पामा, पामे, पामाः।

१८. युवन् के युवतिः, युवती और यूनी। श्वन् का शुनी। मघवन् के मघोनी और मघवती।

१९. बहुव्रीहि-समास में 'पाद' या 'पद' शब्द के बाद '**ई**'—चतुष्पदी, षट्पदी (पर ऋच् या ऋचा शब्द का विण० हो तो '**आ**'—चतुष्पदा ऋक्)

२०. 'शोण' इत्यादि में 'ई' और '**आ**' दोनों—शोणी और शोणा, चण्डी और चण्डा, बुक्की और बुक्का।

---

* (राज्ञी के साथ कर्मधारय-समास कीजिये तो) महती राज्ञी=महाराज्ञी रूप होगा।
† दामन् और पामन् के नपुंसक रूप गुरु बता दें।

२१. बहुव्रीहि में अवयव-वाचक शब्दों में 'ई' और '**आ**' दोनों— अतिकेशी और अतिकेशा; चन्द्रमुखी और चन्द्रमुखा; सुस्तनी और सुस्तना; तुङ्गनासिकी और तुङ्गनासिका; लम्बोदरी और लम्बोदरा; विम्बोष्ठी और विम्बोष्ठा; सुजंघी और सुजंघा; सुदन्ती और सुदन्ता*; लम्बकर्णी और लम्बकर्णा; सुश्रृङ्गी और सुश्रृङ्गा; सुघटितगात्री और सुघटितगात्रा; सुकण्ठी और सुकण्ठा; सुपुच्छी और सुपुच्छा।

२१. (क) नाम हो तो 'नख' और 'मुख' में केवल '**आ**'— शूर्पणखा, गौरमुखा। नाम न हो तो 'ई' जोड़िये।

२१. (ख) **क्रोडा** से बने 'क्रोड' में और 'खुर' आदि में केवल '**आ**'—सुक्रोडा, तीक्ष्णखुरा, सुघाणा, सुभगा, सुगला आदि। **क्रोड** (गोद) शब्द से बना हो तो 'ई'— कल्याणक्रोडी, सुक्रोडी।

२१. (ग) बहुत स्वर वालों में केवल '**आ**'— सुजघना, चन्द्रवदना, मृगनयना, महाललाटा। (सकेशा, अकेशा और विद्यमाननासिका में भी 'ई' नहीं)।

२१. (घ) उपधा में संयुक्त व्यञ्जन हो तो '**आ**'—सुगुल्फा, सुपार्श्वा, त्रिनेत्रा।

२२. 'सखि' (पुरुष मित्र) पुलिङ्ग—सखा, सखायौ, सखायः इत्यादि। स्त्रीलिङ्ग—'ई' जोड़ने पर 'सखी' (स्त्री मित्र, नदीवत् रूप)।

२३. अङ्गुली, रजनी, रात्री; आली, धूली व भूमि भी।
आजी, राजी, कटी, श्रेणी; ह्रस्व 'इ' दीर्घ 'ई' भी हों॥
ह्रस्व 'इ' मतिवत् जानो; नदीवत् दीर्घ 'ई' तथा।

२४. **क्तिन्** प्रत्ययवाले स्वयं स्त्रीलिंग हैं अतः **कुछ न जोड़िये**— गति, कृति, व्यक्ति § आदि। पर, 'शक्ति' और 'पद्धति' में 'ई' भी पाते हैं—शक्ती, पद्धती।

२५. गुण-वाचक ह्रस्व उकारान्तों को और 'बहु' इत्यादि को **यों भी छोड़ सकते** और **दीर्घ 'ई' भी** जोड़ सकते— मृद्वी और मृदुः, स्वाद्वी और स्वादुः, गुर्वी और गुरुः, लघ्वी और लघुः, साध्वी और साधुः, पट्वी और पटुः, अण्वी और अणुः, तन्वी और तनुः, बह्वी और बहुः।

---

* सुदती=सुन्दर दन्त जिस अवस्था में हो जाते हों, उस अवस्थावाली।

§ 'क्तिच्' प्रत्ययवाला 'व्यक्ति' शब्द पुंलिङ्ग।

२६. 'खरु' और संयुक्त उपधा वालों में कुछ न जोड़िये— खरुः का खरुः, पाण्डुः का पाण्डुः (कुछ न जोड़ा)।

२७. कुछ ह्रस्व 'उ' या दीर्घ 'ऊ' वालों में **दीर्घ 'ऊ'** जोड़िये—
पङ्गूः अलाबूः कर्कन्धूः, कुरूः कद्रूः* कमण्डलूः।
ब्रह्मबन्धूः जीवबन्धूः दीर्घ 'ऊ' से विभूषित॥

२८. रज्जु आदि में **कुछ न जोड़िये**—
रज्जुः आखुः कृकवाकुः, धेनुः कद्रुः कमण्डलुः।
वृत्तबाहुः च अध्वर्युः, आठों हैं दीर्घ 'ऊ' विना॥

२९. कुछ ह्रस्व उकारान्तों में विकल्प से **'ऊ'**— तनुः और तनूः, चञ्चुः और चञ्चूः, हनुः और हनूः इत्यादि।

३०. **सहितात्** संहितात् सहात्, शफात् वामात् च लक्षणात्।
उपमानपदात् चैव, **उरु में दीर्घ 'ऊ' करो**॥
सहितोरुः का सहितोरूः। इसी प्रकार संहितोरूः, सहोरूः, शफोरूः, वामोरूः, लक्षणोरूः, रम्भोरूः, करभोरूः, करिकरोरूः आदि।

३१. द्विदाम्नी कवरी नागी, पीनोध्नी च स्थली घटी।
द्विहायनी कुशी नीली, कुण्डी पौषी च रोहिणी॥
पत्नी च चातुरी श्वश्रूः, कैसे ये हैं बने? कहो।
(पत्नी = सहधर्मिणी)

३२. पतिः वर्त्तते यस्याः सा = पतिवत्नी। अन्तर्वर्त्तते यस्याः सा = अन्तर्वत्नी। एकः पतिः यस्याः सा = एकपत्नी। इसी प्रकार वीरपत्नी, भद्रपत्नी, दुष्टपत्नी, पञ्चपत्नी। पतिवत्नी (= सधवा) और पतिमती (= मालिक वाली)। पाणि-गृहीती (= भार्या) और पाणिगृहीता (= a concubine. अथवा गिरने से बचाने के लिए 'हाथ से पकड़ी गयी')

३३. हलन्त शब्दों में कुछ जोड़ना हराम है। पर, भागुरि **'आ'** जोड़ना हलाल मानते हैं। अतः 'वाच्' का 'वाचा' भी हो सकता है। इसी प्रकार 'निश्' का 'निशा', 'दिश्' का 'दिशा'।

---

* कद्रूः और कमण्डलूः नाम हैं।

स्त्रीप्रत्यय के अन्तर्गत १३वीं संख्या के उदाहरण के लिए आवश्यक बातें—

भ्वादि, दिवादि, चुरादि और णिजन्त धातु में शतृ जोड़कर बनाये गये विण० में 'ई' जोड़ने के समय '**त्**' के पूर्व '**न्**' जुट जाता है। अतः भू+शतृ=भवत् का स्त्री० भवन्ती ('न्' जुट गया)। इसी प्रकार दीव्यत् का दीव्यन्ती, चोरयत् का चोरयन्ती, पाठयत् का पाठयन्ती। **तुदादि-गणीय** धातु में शतृ जोड़कर बनाये गये विण० में 'ई' जोड़ने के समय '**त्**' के पूर्व '**न्**' इच्छाधीन— तुदत् का स्त्रीलिङ्ग तुदन्ती और तुदती दोनों। इसी प्रकार मुञ्चन्ती और मुञ्चती, इच्छन्ती और इच्छती।

अदादि-गणीय आकारान्त धातु में **शतृ** जोड़कर बनाये गये विण० में 'ई' जोड़ने के समय '**त्**' के पूर्व '**न्**' इच्छाधीन— पा+शतृ=पात् का पान्ती और पाती। इसी प्रकार यान्ती और याती, मान्ती और माती। किसी भी धातु में **स्यतृ** जोड़कर बनाये गये विण० में 'ई' जोड़ने के समय '**त्**' के पूर्व '**न्**' इच्छाधीन। अतः भू+स्यतृ=भविष्यत् का भविष्यन्ती और भविष्यती। इसी प्रकार पठिष्यन्ती और पठिष्यती।

---

(४) तुलनात्मक-विशेषणम्

१. किसी विशेषण में '**तर**' जोड़ने से जान पड़ता है कि दो की तुलना में बढ़ गया। जैसे—हाजीपुर का आम्र 'महत्' होता है, पर चम्पारण्य का आम्र हाजीपुर के आम्र से '**महत्तर**' (अधिक बड़ा) होता है ('**महत्**' में '**तर**' जोड़ा गया)।

२. किसी विशेषण में '**तम**' जोड़ने से जान पड़ता है कि दो से अधिक अर्थात् बहुतों या सबों की तुलना में बढ़ गया। जैसे—चम्पारण्य का आम्र 'महत्तर' होता है पर पाटलिपुत्र का आम्र '**महत्तम**' (सबसे बड़ा) होता है। ('**महत्**' में '**तम**' जोड़ा गया)।

३. बहुत-से विशेषणों की **तीन** अवस्थाएँ होती हैं—**स्वरूपाऽवस्था** (Positive degree), **आधिक्याऽवस्था** (Comparative degree), **आतिशय्याऽवस्था** (Superlative degree)।

१-२ (क) कई स्थानों पर '***तर**' के बदले '**ईयस्**' और '***तम**' के बदले '***इष्ठ**' जोड़ते हैं।

'**ईयस्**' और '**इष्ठ**' जोड़कर बने हुए कुछ आवश्यक उदाहरण—

स्वरूपा०	आधिक्या०	आतिशय्या०	स्वरूपा०	आधिक्या०	आतिशय्या०
महान्	महीयान् †	महिष्ठ:	ह्रस्व:	ह्रसीयान्	ह्रसिष्ठ:
बलवान्	बलीयान्	बलिष्ठ:	दीर्घ:	द्राघीयान्	द्राघिष्ठ:
बली	,,	,,	दृढ:	द्रढीयान्	द्रढिष्ठ:
पापी	पापीयान्	पापिष्ठ:	प्रिय:	प्रेयान्	प्रेष्ठ:
मतिमान्	मतीयान्	मतिष्ठ:	स्थिर:	स्थेयान्	स्थेष्ठ:
स्तोता	स्तवीयान्	स्तविष्ठ:	कृश:	क्रशीयान्	क्रशिष्ठ:
स्वादु:	स्वादीयान्	स्वादिष्ठ:	वृद्ध:	वर्षीयान्	वर्षिष्ठ:
मायावी	मायीयान्	मायिष्ठ:	,,	ज्यायान्	ज्येष्ठ:
मेधावी	मेधीयान्	मेधिष्ठ:	युवा	यवीयान्	यविष्ठ:
पटु:	पटीयान्	पटिष्ठ:	,,	कनीयान्	कनिष्ठ:
गुरु:	गरीयान्	गरिष्ठ:	अल्प:	अल्पीयान्	अल्पिष्ठ:
लघु:	लघीयान्	लघिष्ठ:	,,	कनीयान्	कनिष्ठ:

* 'तर', 'तम' और 'इष्ठ' वालों के रूप गज, लता और फल के समान होते हैं।

† 'महत्' में '**ईयस्**' जोड़ने से 'महीयस्' होता है। **पुं०** में महीयान्, महीयांसौ, महीयांस:। **स्त्री०** में महीयसी, महीयस्यौ, महीयस्य: (नदीवत्)। **नपुं०** में महीय:, महीयसी, महीयांसि (पयस् के समान)। (कभी-कभी 'ईयस्' और 'इष्ठ' जोड़ने के बाद भी 'तर' और 'तम' जोड़ते हैं। जैसे—बलीयस्तर, बलीयस्तम। श्रेष्ठतर, श्रेष्ठतम इत्यादि।)

स्वरूपा०	आधिक्या०	आतिशय्या०	स्वरूपा०	आधिक्या०	आतिशय्या०
अन्तिक:	नेदीयान्	नेदिष्ठ:	क्षिप्र:	क्षेपीयान्	क्षेपिष्ठ:
बाढ:	साधीयान्	साधिष्ठ:	क्षुद्र:	क्षोदीयान्	क्षोदिष्ठ:
स्थूल:	स्थवीयान्	स्थविष्ठ:	पृथु:	प्रथीयान्	प्रथिष्ठ:
दूर:	दवीयान्	दविष्ठ:	मृदु:	म्रदीयान्	म्रदिष्ठ:
उरु:	वरीयान्	वरिष्ठ:	प्रशस्य:	श्रेयान्	श्रेष्ठ:
बहु:	भूयान्	भूयिष्ठ:	,,	ज्यायान्	ज्येष्ठ:
बहुल:	बंहीयान्	बंहिष्ठ:			

(८) सन्नन्त (Desiderative) क्रिया

'सन्' प्रत्यय जोड़कर बनी क्रिया **सन्नन्त क्रिया** कही जाती है। **इच्छा अर्थ में** धातु के बाद **'सन्'** प्रत्यय जोड़ा जाता है। यथा—भू+सन्+लट् प्र० पु०, ए० =**बुभूषति** (होने की इच्छा करता है वा 'भवितुम् इच्छति')।

(क) **'स'** में **'अ'** जोड़कर छोड़ देने से **संज्ञा** बन जायगी— **बुभूषा**= होने की इच्छा (लतावत् रूप)। (भू+सन्+अ+आप्='बुभूषा'।)

(ख) **'स'** में **'उ'** जोड़कर छोड़ देने से **विण०** बन जाता है— **बुभूषु:**= होने की इच्छा करनेवाला (साधुवत् रूप)।

(प्राय: परस्मैपदी धातु 'सन्' जोड़ने पर भी परस्मैपदी तथा आत्मनेपदी धातु 'सन्' जोड़ने पर भी आत्मनेपदी रहते हैं।)

कुछ **'सन्' जोड़कर बनी क्रियाएँ** नीचे लिखी जाती हैं—

भू—**बुभूषति** =भवितुम् इच्छति
अस्— ,, = ,, इ०
पठ्—**पिपठिषति** =पठितुम् इ०
पत्—पिपतिषति =पतितुम् इ०
,, पित्सति = ,, इ०
गम्—जिगमिषति=गन्तुम् इ०
इण्—जिगमिषति =एतुम् इच्छति
अधि+इङ्—**अधिजिगांसते** = अध्येतुम् इ०
अध्यापि—अध्यापिपयिषति = अध्यापयितुम् इ०
लिख्—लिलिखिषति=लिखितुम् इ०

लिख्—लिलेखिषति =लिखितुम् इच्छति
वद् —**विवदिषति** =वदितुम् इ०
भी —बिभीषति =भेतुम् इ०
जि —**जिगीषति** =जेतुम् इ०
जीव्—**जिजीविषति** =जीवितुम् इ०
नी —**निनीषति** =नेतुम् इ०
धृ —दिधीर्षति =धर्त्तुम् इ०
हृ —जिहीर्षति =हर्त्तुम् इ०
कृ —**चिकीर्षति** =कर्त्तुम् इ०
मृ —**मुमूर्षति** =मर्त्तुम् इ०
तॄ —**तितीर्षति** =तरितुम् इ०
तॄ —िततरिषति =तरितुम् इ०
तॄ —िततरीषति =तरितुम् इ०
विद्—विविदिषति =वेदितुम् इ०
,, विवेदिषति = ,, इ०
बुध्—बुबुधिषति =बोधितुम् इ०
,, बुबोधिषति = ,, इ०
दिव्—दिदेविषति =देवितुम् इ०
,, दुद्यूषति = ,, इ०
नृत्—निनर्त्तिषति =नर्त्तितुम् इ०
,, निनृत्सति = ,, इ०
दह्—**दिधक्षति** =दग्धुम् इ०
दुह्—दुधुक्षति =दोग्धुम् इ०
रुह्—रुरुक्षति =रोढुम् इ०
वच्—**विवक्षति** =वक्तुम् इ०
वह्—**विवक्षति** =वोढुम् इ०

पच् —पिपक्षति =पक्तुम् इच्छति
मुच् —**मुमुक्षति** =मोक्तुम् इ०
यज् —यियक्षति =यष्टुम् इ०
सृज् —सिसृक्षति =स्रष्टुम् इ०
विश्—विविक्षति =वेष्टुम् इ०
भुज्—बुभुक्षति =भोक्तुम् इ०
प्रच्छ्—पिपृच्छिषति =प्रष्टुम् इ०
अद् —**जिघत्सति** =अत्तुम् इ०
हन् —**जिघांसति** =हन्तुम् इ०
पा —**पिपासति** =पातुम् इ०
या —यियासति =यातुम् इ०
स्ना —सिस्नासति =स्नातुम् इ०
स्था —**तिष्ठासति** =स्थातुम् इ०
घ्रा —जिघ्रासति =घ्रातुम् इ०
*ख्या—चिख्यासति =ख्यातुम् इ०
मा —मित्सति =मातुम् इ०
दा —**दित्सति** =दातुम् इ०
धा —धित्सति =धातुम् इ०
स्वप्—**सुषुप्सति** =स्वप्तुम् इ०
ग्रह —**जिघृक्षति** =ग्रहीतुम् इ०
चुम्ब्—चुचुम्बिषति =चुम्बितुम् इ०
आप्—**ईप्सति** =आप्तुम् इ०
चि —**चिचीषति** =चेतुम् इ०

* वस्तुतः 'चक्षिङ्' धातु का 'चिख्यासति' होता है। 'ख्या' का नहीं।

चि—चिकीषति = चेतुम् इच्छति
हु—जुहूषति = होतुम् इ०
क्री—**चिक्रीषति** = क्रेतुम् इ०
भिद्—बिभित्सति = भेत्तुम् इ०
छिद्—चिच्छित्सति = छेत्तुम् इ०
नम्—निनंसति = नन्तुम् इ०
नश्—निनशिषति = नष्टुम् इ०
,, निनंक्षति = ,, इ०
दंश्—दिदंक्षति = दंष्टुम् इ०
लभ्—**लिप्सते** = लब्धुम् इ०
रभ्—रिप्सते = रब्धुम् इ०
वृत्—विवर्त्तिषते = वर्त्तितुम् इ०
,, विवृत्सति = ,, इ०
वृध्—विवर्धिषते = वर्द्धितुम् इ०
,, विवृत्सति = ,, इ०

रुच्—रुरोचिषते = रोचितुम् इच्छति
,, रुरुचिषते = ,, इ०
शुभ्—शुशोभिषते = शोभितुम् इ०
,, शुशुभिषते = ,, इ०
रम्—रिरंसते = रन्तुम् इ०
जन्—जिजनिषते = जातुम् इ०
शी—शिशयिषते = शयितुम् इ०
शिक्ष्—शिशिक्षिषते = शिक्षितुम् इ०
बुध्—बुभुत्सते = बोद्धुम् इ०
युध्—**युयुत्सते** = योद्धुम् इ०
*__ज्ञा—जिज्ञासते__ = ज्ञातुम् इ०
*श्रु—**शुश्रूषते** = श्रोतुम् इ०
*__स्मृ—सुस्मूर्षते__ = स्मर्त्तुम् इ०
*__दृश्—दिदृक्षते__ = द्रष्टुम् इ०
*शक्—शिक्षते = शक्तुम् इ०

(६) णिजन्त (Causative) क्रिया

'**प्रेरण** (Cause) **करना**' अर्थ में **धातु** के बाद '**णिच्**' जोड़ने से **णिजन्त** या **प्रेरणार्थक क्रिया** बनती है। यथा †पठ्+णिच्+लट् प्र० पु० ए० = **पाठयति** (पढ़ते हुए को प्रेरित करता है; अर्थात्—'पढ़ाता है')। ‡खास-खास धातुओं से

---

*'सन्' जोड़ने पर ज्ञा, श्रु, स्मृ, दृश् और शक् आत्मनेपदी हो जाते हैं।

†पठ्+णिच् के बदले पाठि+लट् प्र० पु० ए० = **पाठयति** भी लिखते हैं।

‡बोधयति, योधयति, नाशयति, जनयति, अध्यापयति, प्रावयति, द्रावयति, स्रावयति, चालयति, कम्पयति, भोजयति, आशयति और खादयति परस्मैपदी हैं।

बनी क्रियाओं को छोड़ प्राय: सभी णिजन्त क्रियाएँ परस्मैपद और आत्मनेपद दोनों में व्यवहृत होती हैं। अत: 'पठन्तम् प्रेरयति' के बदले 'पाठयति' तथा 'पाठयते' दोनों पद हो सकते हैं।

कुछ आवश्यक णिजन्त क्रियाएँ

भू—भावयति (भवन्तम् प्रेरयति)
खाद्—खादयति (खादन्तम् प्रे०)
अद्—आदयति (अदन्तम् प्रे०)
पच्—पाचयति (पचन्तम् प्रे०)
गम्—गमयति (गच्छन्तम् प्रे०)
दृश्—दर्शयति (पश्यन्तम् प्रे०)
जन्—जनयति(जायमानम् प्रे०)
उद्+पद्—उत्पादयति (उत्पद्यमानम् प्रे०)
लिख्—लेखयति (लिखन्तम् प्रे०)
नि+सिध्—निषेधयति (निषेधन्तम् प्रे०)
बुध्—बोधयति (बोधन्तम् प्रे०)
शुध्—शोधयति (शुध्यन्तम् प्रे०)
हन्—घातयति (घ्नन्तम् प्रे०)
पा—पाययति (पिबन्तम् प्रे०)
*पा—पालयति (पान्तम् प्रे०)
शी—शाययति (शयानम् प्रे०)
दा—दापयति (ददतम् प्रे०)

धा—धापयति (दधतम् प्रेरयति)
स्था—स्थापयति (तिष्ठन्तम् प्रे०)
चि—चाययति (चिन्वन्तम् प्रे०)
,, चापयति (,, प्रे०)
नी—नाययति (नयन्तम् प्रे०)
रुह्—रोहयति (रोहन्तम् प्रे०)
,, रोपयति (,, प्रे०)
प्री—प्रीणयति (प्रीणन्तम् प्रे०)
,, प्राययति (,, प्रे०)
स्तु—स्तावयति (स्तुवन्तम् प्रे०)
कृ—कारयति (कुर्वन्तम् प्रे०)
हृ—हारयति (हरन्तम् प्रे०)
तृ—तारयति (तरन्तम् प्रे०)
क्री—क्रापयति (क्रीणन्तम् प्रे०)
जि—जापयति (जयन्तम् प्रे०)
गै—गापयति (गायन्तम् प्रे०)
स्मृ—स्मारयति (स्मरन्तम् प्रे०)
ग्रह्—ग्राहयति (गृह्णन्तम् प्रे०)
भुज्—भोजयति (भुञ्जानम् प्रे०)

*चुरादिवाले (पल् धातु से बने) 'पालयति' का अर्थ है 'पाति' वा 'रक्षति'। (अर्थात्—बचाता है, रक्षा करता है।)

प्र+आप्–प्रापयति (प्राप्नुवन्तम् प्रेरयति)
श्रु—श्रावयति (शृण्वन्तम् प्रे०)
अधि+इङ्–अध्यापयति (अधीयानम् प्रे०)
लभ्—लम्भयति (लभमानम् प्रे०)
रभ्—रम्भयति (रभमाणम् प्रे०)
वृध्—वर्धयति (वर्द्धमानम् प्रे०)
वृत्—वर्त्तयति (वर्त्तमानम् प्रेरयति)
मृ—मारयति (म्रियमाणम् प्रे०)
ऋ—अर्पयति (ऋच्छन्तम् प्रे०)
नृत्—नर्त्तयति (नृत्यन्तम् प्रे०)
च्यु—च्यावयति (च्यवमानम् प्रे०)
प्लु—प्लावयति (प्लवमानम् प्रे०)

(क) **देखिये साहब !** डरानेवाले को ही देखकर डर हो तो **'भापयते'** वा **'भीषयते'** रूप होता है। जैसे–मुण्ड: **'भापयते'**। जटिल: **'भीषयते'** वा **'भापयते'**। वक्रमुख: **'भीषयते'**। (इन उदाहरणों में डराने वाला मूँड़ मुड़ाये, जटा बढ़ाये या टेढ़ा मुखवाला है। अत: बच्चों को डर होना सम्भव है।)

(ख) डरानेवाला किसी चीज से डरावे तो **'भाययति'**। जैसे— अनार्य: वक्र-दण्डेन वा मृत-सर्पेण शिशुम् **'भाययति'**। मूर्ख: कुञ्चिकया बालिकाम् **'भाययति'**।

(च) विस्मित कर देनेवाले को ही देखकर विस्मय हो तो **'विस्मापयते'**। जैसे—जटिल: **'विस्मापयते'**।

(छ) विस्मित करनेवाला किसी चीज से विस्मित करे तो **'विस्माययति'**। जैसे—कपिलदेव: शृगाल-वाण्या छात्रान् **'विस्माययति'**।

(ट) मृग का शिकार करना हो तो **'रजयति'**। जैसे— व्याध: मृगं **'रजयति'**।

(ठ) दूसरे जन्तु का शिकार करना हो तो **'रञ्जयति'**। जैसे– व्याध: खगान् **'रञ्जयति'**।

(ड) शिकार करना अर्थ न हो तो **'रञ्जयति'**। यथा—मुनि: घासेन मृगं **'रञ्जयति'** (खुश करता है)। स वस्त्रं **'रञ्जयति'** (रँगता है)।

(त) चित्त को दूषित करना हो तो 'दूषयति' और **'दोषयति'** दोनों। जैसे— क्रोध: चित्तं **'दूषयति' वा 'दोषयति'**।

(थ) चित्त के सिवा दूसरा कुछ दूषित करना हो तो **'दूषयति'**। यथा—**य: चलितुं** न जानाति स: अंगणम् एव **'दूषयति'**। मूर्ख: रथ-कार: साधनम् एव **'दूषयति'**।

(प) **ज्ञापयति**=जनाता है। (फ) **ज्ञपयति**=जनाता है, **मारता** है, दिखाता है, स्तुति करता है, तेज करता है।

णिजन्त-प्रकरण की कुछ ज्ञातव्य बातें

१. जो प्रेरित करे या कार्य करावे, वह **'प्रयोजक'** है। प्रयोजक कर्त्ता में **प्रथमा**। यथा— **शिक्षक:** छात्रम् पाठयति।

२. जिसे प्रेरित किया जाय या जिसके द्वारा कार्य कराया जाय, वह **प्रयोज्य** है। प्रयोज्य कर्ता में **कभी द्वि० और कभी तृ**ती०—शिक्षक: **'छात्रम्'** पाठयति। प्रभु: **'सेवकेन'** वस्त्रम् आनाययति।

३. चढ़ना, घुसना, जाना; समझना तैरना तथा।
पहुँचना, देखना, चैव; सुनना, पढ़ना तथा ॥ १ ॥
अद्-खाद्-भक्ष-विना, खाना; पीना के योग में तथा।
अकर्मक-क्रियायोगे, प्रयोज्ये कर्त्तरि द्वितीο ॥ २ ॥

अणिजन्तावस्था	णिजन्तावस्था
१. **'पुत्र:'** वृक्षम् आरोहति	—माता **'पुत्रं'** वृक्षम् आरोहयति
२. **'श्वा'** जलं प्रविशति	— ना **'श्वानं'** जलम् प्रवेशयति
३. **'भृत्य:'** ग्रामं गच्छति	—स्वामी **'भृत्यं'** ग्रामं गमयति
४. **'शिष्य:'** धर्मम् बोधति	—गुरु: **'शिष्यं'** धर्मम् बोधयति
५. **'राम:'** गङ्गां तरति	—गुह: **'रामं'** गङ्गां तारयति
६. **'कृष्ण:'** गृहम् प्राप्नोति	—वसुदेव: **'कृष्णं'** गृहम् प्रापयति
७. **'भक्त:'** शिवम् पश्यति	—पूजक: **'भक्तं'** शिवं दर्शयति
८. **'जनता'** कथां शृणोति	—उपदेशक: **'जनतां'** कथां श्रावयति
९. **'छात्र:'** वेदम् अध्येति	—आचार्य: **'छात्रं'** वेदम् अध्यापयति

१०. 'बालः' अन्नम् अश्नाति वा भुङ्क्ते—माता 'बालम्' अन्नम् आशयति वा भोजयति।

११. 'वत्सः' दुग्धम् पिबति—गौः 'वत्सं' दुग्धम् पाययति ।

१२. 'पुत्रः' *स्वपिति—जननी 'पुत्रं' स्वापयति ।

अद्, खाद्, भक्ष तथा नी, वह्; अन्याऽन्य धातु के तथा ।
प्रयोज्य कर्त्ता में होवे; तृतीया सर्वदा सखे ॥

१. 'शिशुः' अन्नं खादति वा अत्ति—माता 'शिशुना' अन्नं खादयति वा आदयति ।

२. 'शिशुः' अन्नम् † भक्षयति—माता 'शिशुना' अन्नम् भक्षयति ।

३. 'भृत्यः' भारं नयति वा वहति—स 'भृत्येन' भारं नाययति वा वाहयति ।

४. 'पाचकः' ओदनम् पचति—कायस्थः 'पाचकेन' ओदनम् पाचयति ।

द्रष्टव्य—'द्वितीया भी तृतीया भी; हृ कृ धातु प्रयोज्य में' ।

१. 'भृत्यः' भारं हरति—प्रभुः 'भृत्यं' वा 'भृत्येन' भारं हारयति ।

२. 'भृत्यः' कार्यं करोति—प्रभुः 'भृत्यं' वा 'भृत्येन' कार्यं कारयति ।

---

* लजाना रहना होना, ठहर्ना, जागना तथा।
बढ़ना घटना जीना, रुचना खेलना तथा।
मरना डरना* 'सोना,' हँसना खुशना तथा ।
चमक्ना, काँपना, रोना, नहाना, शोभना तथा ।
सूखना थूकना आदि, अकर्मक हुए सभी।

(करनेवाले ही पर क्रिया का असर पड़े तो अकर्मक क्रिया। जैसे— बच्चा **सोता है** (अकर्मक)। करे कोई ओर असर पड़े किसी दूसरे ही पर, तो सकर्मक क्रिया। जैसे— युवक रोटी **खाता है** (सकर्मक)।

† चोरयति के समान रूपवाली क्रियाओं के रूप 'णिच्' जोड़ने पर भी पूर्ववत् ही रहेंगे।

णिजन्त वाक्य को कर्मवाच्य (Passive) में करना हो तो **प्रयोज्य** में (जो बेचारा अब कर्म-सा बन गया है) **प्रथमा** कीजिये (सनातन कर्म को न छोड़िये) —

(कर्त्तृवाच्य) स्वामी भृत्यं ग्रामं गमयति। (कर्मवाच्य) स्वामिना भृत्यः ग्रामं गम्यते। '**समझना**' और '**खाना**' अर्थवाले तथा '**शब्दकर्मक**' धातुओं के जिस कर्म में इच्छा हो, उसी कर्म में प्रथमा कीजिये।

(कर्तृवा०) गुरुः '**शिष्यं**' **धर्मम्** बोधयति। (कर्मवा०) गुरुणा '**शिष्यः**' **धर्मम्** बोध्यते वा गुरुणा शिष्यं '**धर्मः**' बोध्यते।

(कर्तृवा०) माता '**बालकम्**' **ओदनम्** भोजयति। (कर्मवा०) मात्रा '**बालकः**' **ओदनम्** भोज्यते वा मात्रा **बालकम्** '**ओदनः**' भोज्यते।

(कर्तृवा०) आचार्यः '**छात्रम्**' **वेदम्** अध्यापयति। (कर्मवा०) आचार्येण '**छात्रः**' **वेदम्** अध्याप्यते वा आचार्येण **छात्रं** '**वेदः**' अध्याप्यते।

---

(७) यङन्त (Frequentative) क्रिया
(सदा आत्मनेपद में)

अतिशय, पुनः-पुनः या **वार-वार** का भाव प्रकट करने के लिए धातु के बाद '**य**' जोड़ते हैं। (इस '**य**' को '**यङ्**' कहते हैं, '**य्**' प्रत्यय जोड़कर बनी क्रिया **यङन्त क्रिया** कहलाती है)। जैसे—पा+यङ्+लट्, प्र०पु०, ए० =**पापायते** (अतिशय अथवा वार-वार बचाता है)।

गति (चाल) **अर्थ** वाले धातुओं के बाद **कुटिल गमन** के अर्थ में '**यङ्**' प्रत्यय होता है। जैसे—**गम्**+यङ्+लट्, प्र० पु०,ए०=**जङ्गम्यते** (टेढ़ी-मेढ़ी चाल से गमन करता है या जाता है)।

कुछ **यङन्त क्रियाओं के** (लट्, प्र० पु०, ए० में) **रूप** –

भू–बोभूयते (पुन: पुन: भवति)
,, ,, (अतिशयेन भवति)
सिच्–सेसिच्यते (पुन: पुनः सिञ्चति)
शुच्–शोशुच्यते (पुन: पुनः शोचति)
रुद्–रोरुद्यते (पुन: पुन: रोदिति)
दीप्–देदीप्यते (पुन: पुनः दीप्यते)
दा–देदीयते (पुन: पुन: ददाति)
पा–पेपीयते (पुन: पुनः पिबति)
घ्रा–जेघ्रीयते (पुन: पुनः जिघ्रति)
जन्–जाजायते (पुन: पुनः जायते)
हन्–जेघ्नीयते (पुन: पुन: हन्ति)
,, जंघन्यते (नीचवृत्तिं करोति)
नृत्–नरीनृत्यते (पुन: पुनः नृत्यति)
वृध्–वरीवृध्यते (पुन: पुनः वर्द्धते)
पच्–पापच्यते (पुन: पुनः पचति)
तप्–तातप्यते (पुन: पुनः तपति)
पठ्–पापठ्यते (पुन: पुनः पठति)
वद्–वावद्यते (पुन: पुनः वदति)
पत्–पनीपत्यते (पुन: पुनः पतति)
जप्–जञ्जप्यते (पुन: पुन: जपति)

यज्–यायज्यते (पुन: पुनः यजते)
दंश्–दन्दश्यते (पुन: पुनः दशति)
दह्–दन्दह्यते (पुन: पुन: दहति)
नी–नेनीयते (पुन: पुनः नयति)
कृ–चेक्रीयते (पुन: पुनः करोति)
क्री–चेक्रीयते (पुन: पुन: क्रीणाति)
स्मृ–सास्मर्यते (पुन: पुनः स्मरति)
ग्रह्–जरीगृह्यते (पुनः पुन: गृह्णाति)
दृश्–दरीदृश्यते (पुन: पुनः पश्यति)
कृष्–चरीकृष्यते (पुन: पुनः कर्षति)
गै–जेगीयते (पुन: पुन: गायति)
जि–जेजीयते (पुन: पुनः जयति)
शी–शाशय्यते (पुन: पुनः शेते)
चल्–चञ्चल्यते (कुटिलं चलति)
चर्–चञ्चूर्यते (कुटिलं चरति)
सृप्–सरीसृप्यते (कुटिलं सर्पति)
अट्–अटाट्यते (कुटिलम् अटति)
क्रम्–चङ्क्रम्यते (कुटिलं क्राम्यति)
भ्रम्–बंम्भ्रम्यते (कुटिलं भ्रमति)
ऋ–अरार्यते (कुटिलम् ऋच्छति)

---

(८) नामधातु (Denominative)

१. **नाम** (अर्थात् शब्द) **से बने धातु 'नामधातु'** कहलाते हैं।
२. **'अपने लिए चाहना' अर्थ में** किसी नाम के बाद **'काम्य'** जोड़कर **धातु** बना देते हैं। (बाद 'भवति' के समान रूप होते हैं)— पुत्र+काम्य+लट्, प्र० पु० ए० =पुत्रकाम्यति (आत्मनः पुत्रम् इच्छति)।

३. (क) **'अपने लिए चाहना'** अर्थ में **'य'** भी जोड़ते हैं। (ख) इस **'य'** को **'क्यच्'** कहते हैं। पुत्र+क्यच्+लट्, प्र० पु०, ए० = **पुत्रीयति** (आत्मनः पुत्रम् इच्छति)।

४. **आचार** (मानना या treat करना) **अर्थ में** उपमान-वाचक (द्वतीयावाले) नाम के बाद भी **'क्यच्'** होता है। जैसे— पुत्र+क्यच्+लट् प्र० पु०, ए० =**पुत्रीयति** (पुत्रम् इव आचरति)।

५. (क) **आचार** (बन बैठना या acts like) के **अर्थ में** (प्रथमावाले) उपमान के बाद **'य'** जोड़ते हैं। (ख) इस **'य'** को **'क्यङ्'** कहते हैं। (ग) 'क्यङ्' वाले का रूप 'लभ्' के समान। पुत्र+क्यङ्+लट्, प्र० पु०, ए० = **पुत्रायते** (पुत्रः इव आचरति)।

(बहुत-से अर्थों में बहुत-से प्रत्यय होते होंगे; सब छोड़कर) निम्नलिखितों पर ध्यान दीजिये —

एक पद द	एक पद लें
आत्मनः पुत्रम् इच्छति=	**पुत्रीयति** वा **पुत्रकाम्यति**
आत्मनः फलम् इच्छति=	**फलीयति** वा **फलकाम्यति**
आत्मनः यशः इच्छति=	**यशस्यति** वा **यशस्काम्यति**
आत्मनः सखायम् इच्छति=	**सखीयति** वा **सखिकाम्यति**
आत्मनः धनम् इच्छति=	**धनीयति** (अपने लिए धन चाहता है)
लोभ-वशतः धनम् इच्छति=	**धनायते** (लोभवश धन चाहता है)
पातुम् उदकम् इच्छति=	**उदन्यति** (पीने के लिए जल चाहता है)
उदकम् इच्छति=	**उदकीयति** (जल चाहता है)
बुभुक्षायाम् अशनम् इच्छति=	**अशनायति** (भूख लगने पर खाने के लिए भोजन चाहता है)
अशनम् इच्छति=	**अशनीयति** (भोजन चाहता है)

एक पद दें	एक पद लें	एक पद दें	एक पद लें
पुत्रम् इव आचरति=	**पुत्रीयति**	सखायम् इव आचरति=	**सखीयति**
शिवम् इव आचरति=	**शिवीयति**	रिपुम् इव आचरति=	**रिपूयति**

एक पद दें	एक पद लें
बन्धुम् इव आचरति	बन्धूयति
गुरुम् इव आचरति	गुरूयति
राजानाम् इव आचरति	राजी ति
सवितारम् इव आचरति	**सवित्रीयति**
पितरम् इव आचरति	**पित्रीयति**

इसी प्रकार मात्रीयति, भ्रात्रीयति, दुहित्रीयति।

द्रुमः इव आचरति = **द्रुमायते***
पुत्रः इव आचरति = **पुत्रायते***
कविः इव आचरति = **कवीयते***
सखा इव आचरति = **सखीयते***
शत्रुः इव आचरति = **शत्रूयते***
पिता इव आचरति = **पित्रीयते***
दुहिता इव आचरति = **दुहित्रीयते***
राजा इव आचरति = **राजायते***
पयः इव आचरति = **पयायते, पयस्यते**
यशः इव आचरति = **यशायते, यशस्यते**
विद्वान् इव आचरति = **विद्वायते, विद्वस्यते**

धूमम् उद्वमति = **धूमायते**
वाष्पम् उद्वमति = **वाष्पायते**
फेनम् उद्वमति = **फेनायते**
दुःखम् अनुभवति = **दुःखायते**
सुखम् अनुभवति = **सुखायते**
कृच्छ्रम् अनुभवति = **कृच्छ्रायते**
अमन्दः मन्दः भवति = **मन्दायते**†
शब्दं करोति = **शब्दायते**
वैरं करोति = **वैरायते**
कलहं करोति = **कलहायते**
मेघं करोति = **मेघायते**
रोमन्थं वर्त्तयति = **रोमन्थायते**
नमः करोति = **नमस्यति**
तपः चरति = **तपस्यति**
चिरं करोति = **चिरयति**
प्रश्नं करोति = **प्रश्नयति**

---

*इसी प्रकार दण्डायते, शिष्यायते, कोकिलायते, पण्डितायते, तिलकायते, मालवीयायते, मधुरायते इत्यादि। [पुत्रति (शिष्यति), कवयति, सखयति, शत्रवति, (बन्धवति, गुरवति), पितरति, दुहितरति (सवितरति, मातरति), राजानति इत्यादि भी आचार-अर्थ में 'क्विप्' प्रत्यय करके बनाये जा सकते हैं]।

†इसी प्रकार चपलायते, भृशायते, शीघ्रायते, पण्डितायते, उत्सुकायते, सुमनायते, दुर्मनायते, उन्मनायते, श्यामायते इत्यादि।

एक पद दें	एक पद लें
बहुलं करोति	बंहयति
पृथुं करोति	प्रथयति
मृदुं करोति	म्रदयति
अन्तिकं करोति	नेदयति
दूरं करोति	दवयति
युवानं करोति	यवयति, कनयति
वृद्धं करोति	ज्यापयति, वर्षयति
दृढं करोति	द्रढयति
क्षुद्रं करोति	क्षोदयति
स्थूलं करोति	स्थवयति
गुरुं करोति	गरयति
दीर्घङ् करोति	द्राघयति
मुण्डं करोति	मुण्डयति
श्लक्ष्णं करोति	श्लक्ष्णयति
मिश्रं करोति	मिश्रयति
लवणम् मेलयति	लवणयति
वस्त्रेण वेष्टयति	संवस्त्रयति
रूपम् पश्यति	रूपयति
श्लोकेन उपस्तौति	उपश्लोकयति
वीणया उपगायति	उपवीणयति
सेनया अभियाति	अभिषेणयति
विद्वांसम् आचष्टे	विद्वयति

---

(९) *द्विकर्मक धातु

१ दुहना, २ माँगना,[1] ३ पकाना, ४ जुर्माना करना या जुर्माना लेना, ५ रोकना या घेरना, ६ पूछना[2], ७ चुनना, ८ बोलना[3], ९ सिखाना[4], १० जीतना, ११ मथना[5], १२ चुराना[6] तथा १ ले जाना, २ हर ले जाना, ३ खींच ले जाना और ४ ढो ले जाना इन १६ **कामों को** प्रकट करनेवाली क्रियाओं के **दो-दो कर्म** हो सकते हैं [एक तो **मुख्य कर्म** वा **प्रधान कर्म** वा Direct object कहलायगा और दूसरा (जो अपादान इत्यादि के बदले '**जबर्दस्ती कर्म**' बना दिया जायगा) '**गौण कर्म**' वा '**अप्रधान कर्म**' वा '**अकथित कर्म**' वा 'Indirect object' कहा जायगा] ।

---

*दुह् याच्[1] पच् दण्ड् रुधि प्रच्छि[2], चि ब्रू[3] शासु[4] जि मन्थ्[5] मुषाम्[6] ।
कर्मयुक् स्यादकथितं, तथा स्यान् नी हृ कृष् वहाम् ।

माँगने[1] में—भिक्षते और प्रार्थयते; पूछने[2] में—जिज्ञासते और अनुयुनक्ति; बोलने[3] में—ब्रूते, आह, वदति, भणति, वक्ति, कथयति, अभिदधाति, व्याहरति, उदीरयति और भाषते; सिखाने[4] में—उपदिशति; मथने[5] में—मथ्नाति तथा चुराने[6] में—चोरयति इत्यादि क्रियाएँ भी व्यवहृत होती हैं ।

देखिये—*पञ्चमी आदि विभक्तियों के बदले 'जबर्दस्ती द्वितीया' पाइयेगा।	वाच्यान्तर के समय दुहना आदि १२ कामों के गौण कर्म में परिवर्तन होगा।
गोप: 'गां' '**दुग्ध**'' दोग्धि	गोपेन 'गौ:' '**दुग्ध**' दुह्यते।
दरिद्र: 'धनिकं' '**धनं**' याचते	दरिद्रेण 'धनिक:' '**धनं**' याच्यते।
सूद: 'तण्डुलान्' '**ओदनम्**' पचति	सूदेन 'तण्डुला:' '**ओदनम्**' पच्यन्ते।
नृप: 'दुष्टं' 'शतं' दण्डयति	नृपेण 'दुष्ट:' 'शतं' दण्ड्यते।
कृष्ण: 'व्रजं' '**गां**' रुणद्धि	कृष्णेन 'व्रज:' '**गां**' रुध्यते।
शिष्य: 'शिक्षकम्' '**शब्दार्थम्**' पृच्छति	शिष्येण 'शिक्षक:' '**शब्दार्थम्**' पृच्छ्यते।
स 'वृक्षम्' '**पुष्पाणि**' चिनोति	तेन 'वृक्ष:' '**पुष्पाणि**' चीयते।
गुरु: 'शिष्यं' '**धर्म-कथां**' ब्रवीति	गुरुणा 'शिष्य:' '**धर्म-कथाम्**' उच्यते।
पण्डित: 'जनतां' '**धर्मं**' शास्ति	पण्डितेन 'जनता' '**धर्मं**' शिष्यते।
रणवीर: 'शत्रुं' '**राज्यं**' जयति	रणवीरेण 'शत्रु:' '**राज्यं**' जीयते।
गोपी 'दुग्धं' '**नवनीतम्**' मन्थति	गोप्या 'दुग्धं' '**नवनीतम्**' मथ्यते।
दस्यु: 'पथिकं' '**धनम्**' मुष्णाति	दस्युना 'पथिक:' '**धनं**' मुष्यते।

† नी, हृ, कृष् और वह् के मुख्य कर्म को बदलेंगे।

कृषक: 'ग्रामम्' '**अजां**' नयति	कृषकेण 'ग्रामम्' '**अजा**' नीयते।
रावण: 'लङ्कां' '**सीतां**' हरति स्म	रावणेन 'लङ्कां' '**सीता**' ह्रियते स्म।
सूर्य: 'आकाशम्' '**पृथ्वीम्**' कर्षति	सूर्येण 'आकाशम्' '**पृथ्वी**' कृष्यते।
भृत्य: 'ग्रामम्' '**भारं**' वहति	भृत्येन 'ग्रामम्' '**भार:**' उह्यते।

* पञ्चमी आदि उचित विभक्तियाँ भी हो सकती हैं। यथा—'गो:' दुग्धं दोग्धि। 'धनिकात्' धनं याचते। 'ग्रामे' अजां नयति। इत्यादि।

†गौणे कर्मणि दुह्यादे:, कुरु त्वम् परिवर्तनम्।
प्रधाने नी हृ कृष् वह् के, करूँगा परिवर्तनम्॥

(१०) कर्म-कर्तृ-वाच्य (Passive-active Voice)

(**देखिये** जनाव, '**छात्र भात पकाता है**' कहने से जान पड़ता है कि भात को कोई पका रहा है। इसलिए '**भात**' **कर्म** है। किन्तु 'भात पकता है' कहने से जान पड़ता है कि भात खुद ही पक रहा है और **यह कर्त्ता है**। पर, भात विना पकाये खुद नहीं पक जा सकता। अत: **भात में कर्म की भी झलक** अवश्य है। अब चूँकि भात **कर्म होकर भी कर्त्ता बन गया है,** अत: इस वाक्य में **भात कर्म-कर्त्ता है** और यह वाक्य **कर्म-कर्तृ-वाच्य** का है। यह वाच्य कर्म-हीन रहता है।)

नियम—जिस वाच्य में कर्म ही कर्त्ता-सा बन जाय, वह **कर्मकर्तृवाच्य** कहलाता है। ***कर्मकर्त्ता में प्रथमा विभक्ति** होती है और † क्रिया कर्म-कर्त्ता के अनुसार होती है—

उदा०— 'ओदन:' **पच्यते** (स्वयमेव)। इसी प्रकार 'काष्ठम्' **भिद्यते**। 'पुत्र-स्पर्श:' चन्दनात् **अतिरिच्यते**। 'तृणानि' सतां गेहे कदाचन न **उच्छिद्यन्ते**। नीच-संसर्गात् 'मति:' **हीयते**। 'कुसुम:' वने कथं **शीर्यते** ?

(११) वाच्याऽन्तर (Change of Voice)

१. **कर्तृवाच्य** (active voice) के वाक्य का **वाच्यपरिवर्तन** करना हो तो ‡कर्म-भाव-वाच्य (Passive voice अकर्तृ-वाच्य) के नियम के अनुसार उस वाक्य को कर दो—

---

* कर्म यदि कर्त्ता-सा बन जाय तो वह 'कर्मकर्त्ता' कहलाता है।

†कर्म-कर्तृ-वाच्य की क्रिया प्राय: कर्म-भाव-वाच्य (Passive) की क्रिया-सी रहती है।

व्यर्थ—[करण-कर्तृ-वाच्य आदि की आवश्यकता हो तो सिद्धान्त-कौमुदी देखो।]

‡कर्म-युक्त क्रिया से जो उलटा वाच्य होता है, वह कर्म-वाच्य और कर्म-हीन क्रिया से जो उलटा वाच्य होता है, वह भाव-वाच्य है। (दोनों का एक नाम है कर्म-भाव-वाच्य वा अकर्तृ-वाच्य वा उलटा वाच्य।)

(कर्तृवाच्य) बालक: वेदम् पठति । (कर्मवाच्य) बालकेन वेद: पठ्यते ।
(कर्तृवाच्य) उत्सव: भवति । (भाववाच्य) उत्सवेन भूयते ।

२. कर्म वा भाववाच्य के वाक्य को बदलना हो तो कर्तृवाच्य में बदलना ।
व्यर्थ—[कर्मकर्तृवाच्य से भाववाच्य में देखो 'ओदन: पच्यते' का 'ओदनेन पच्यते'] ।

३. जिस लकार की क्रिया हो, उसी लकार में उस क्रिया को बदलना—

Active Voice	Passive Voice
१. **लट्**– बालक: वेदम् पठति ।	बालकेन वेद: पठ्यते ।
२. **लोट्**– छात्र: वेदम् पठतु ।	छात्रेण वेद: पठ्यताम् ।
३. **विधिलिङ्**– नर: वेदम् पठेत् ।	नरेण वेद: पठ्येत ।
४. **लङ्**– रमेश: स्मृतिम् अपठत् ।	रमेशेन स्मृतिः अपठ्यत ।
५. **लृट्**– शरच्चन्द्र: वेदम् पठिष्यति ।	शरच्चन्द्रेण वेद: पठिष्यते ।
६. **लृङ्**– स धर्म-ग्रन्थम् अपठिष्यत् ।	तेन धर्म-ग्रन्थ: अपठिष्यत ।
७. **लिट्**– राम: वेदम् पपाठ ।	रामेण वेद: पेठे ।
८. **लुङ्**– धर्मेन्द्र: न्यायम् अपाठीत् ।	धर्मेन्द्रेण न्याय: अपाठि ।

४. तव्य, अनीय, यत् और ण्यत् का परिवर्त्तन विधिलिङ् से होगा—

तव्य– छात्रेण वेद: पठितव्य: ।	छात्र: वेदम् पठेत् ।
अनीय– छात्रै: वेद: पठनीय: ।	छात्रा: वेदम् पठेयु: ।
यत्– धनिकेन पुरस्कार: देय: ।	धनिक: पुरस्कारं दद्यात् ।
ण्यत्– नरेण धर्म: कार्य: ।	नर: धर्मं कुर्यात् ।

व्यर्थ– तव्य, अनीय, यत् और ण्यत् को विधिलिङ् से बदलना । किन्तु **विधिलिङ्** का परिवर्त्तन **विधिलिङ् से ही होगा ।**

५. (Passive) कर्मवाच्य वा भाववाच्य वाले **क्त** का परिवर्त्तन **क्तवतु से** करना—

(Passive) **क्त**—'मया वेद: **पठित:**' का परिवर्त्तन **क्तवतु** से **'अहं वेदम् पठितवान्'** ।

५. (क) जिस धात में पैसिव् क्त जोड़कर पैसिव् वाक्य बना है, उस धातु से यदि

ऐक्टिव् में भी क्त होता हो तो ऐक्टिव् क्त से भी बदल सकते हो। पर खतरे से बचे रहने के लिए क्तवतु[१] से बदलना ही अच्छा है।

(Passive क्त[२])— रावणेन लङ्का गता— (Active क्त) रावणः लङ्कां गतः।

किन्तु भूल से बचने के लिए— 'रावणः लङ्कां गतवान्' लिखना अच्छा है।

६. क्तवतु और active 'क्त'[३] का परिवर्त्तन Passive 'क्त' से होता है—

क्तवतु—रावणः लङ्कां **गतवान्**—रावणेन लङ्का गता (Passive क्त)।

Active क्त— रावणः लङ्कां गतः— रावणेन लङ्का **गता** (Passive क्त)।

७. **णिजन्त** और **द्विकर्मक** वाक्यों का परिवर्त्तन क्रमशः ४२वें और ४७वें पृष्ठ पर देखिये।

---

१. **क्तवतु** स्यात् कर्तृवाच्ये, कर्मवाच्ये कदापि न।
२. उलटे वाच्य में **'क्त'** हो, सदा ही सब धातु से ॥१॥
३. गत्यर्थाऽकर्मक श्लिष्, शीङ्; स्था, आस्, वस्, जन्, रुह और जॄ।
इतने धातुओं से तो, सीधे भी वाच्य में 'क्त' हो ॥२॥
अतः नीचे लिखी 'क्त' वाली क्रियायें Passive और Active दोनों में—

गत, यात, आगत, निर्गत, चलित, निवृत्त, ग्लान, उपविष्ट, प्रविष्ट, सुप्त, जागरित, शुष्क, पक्व, सिद्ध, मृत, भीत, भग्न, मग्न, निष्क्रान्त, प्रक्रान्त, आरब्ध, तीर्ण, उत्तीर्ण, श्लिष्ट, उपश्लिष्ट, आश्लिष्ट, शयित, अधिशयित, उपशयित, स्थित, प्रस्थित, उपस्थित, उत्थित, अधिष्ठित, आसित, अध्यासित, उषित, अध्युषित, जात, सञ्जात, अनुजात, रूढ, आरूढ, प्ररूढ, जीर्ण, अनुजीर्ण इत्यादि।

८. **कर्म-भाव-वाच्य (Passive) की क्रियाओं के विषय में—**

(क) **धातु में 'य' और 'ते'** जोड़ देने से कर्मभाववाच्य की क्रिया बन जाती है। यथा—'**भू' धातु में 'य'** और 'ते' जोड़ देने से **भूयते।** इसी प्रकार गम्यते, लिख्यते, लभ्यते इत्यादि।

(ख) **इन क्रियाओं के रूप** लट्, लोट्, लङ् और विधिलिङ् में **लभ्** धातु के **समान** होते हैं।

(ग) लृट् और लृङ् में तो कर्तृवाच्यवाले रूपों को प्राय: आत्मनेपदी बना देने से ही कर्मभाववाच्य के रूप बन जायँगे। जैसे—लृट्- **भविष्यति** का **भविष्यते, पठिष्यति** का **पठिष्यते** इत्यादि। लृङ्-**अभविष्यत्** का **अभविष्यत अपठिष्यत् का अपठिष्यत** इत्यादि।

(कहीं-कहीं ज्यादा भी बदलता है। जैसे—**गमिष्यति** का **गंस्यते** तथा **अगमिष्यत्** का **अगंस्यत** इत्यादि।)

लिट् और लुङ् के रूप तो कुछ कठिन हैं। उन्हें आगे देखिये।

(घ) **कुछ धातुओं के कर्मभाववाच्य वाले रूप—**

धातु	लट्	लिट्	लुङ्	धातु	लट्	लिट्	लुङ्
भू–	भूयते	बभूवे	अभावि	बुध्–	बुध्यते	बुबुधे	अबोधि
अस्–	भूयते	बभूव	अभावि	भुज्–	भुज्यते	बुभुजे	अभोजि
पठ्–	पठ्यते	पेठे	अपाठि	सृज्–	सृज्यते	ससृजे	असर्जि
लिख्–	लिख्यते	लिलिखे	अलेखि	स्पृश्–	स्पृश्यते	पस्पृशे	अस्पर्शि
भिद्–	भिद्यते	बिभिदे	अभेदि	दृश्–	दृश्यते	ददृशे	अदर्शि
छिद्–	छिद्यते	चिच्छिदे	अच्छेदि	हन्–	हन्यते	जघ्ने	अघानि, अवधि
गम्–	गम्यते	जग्मे	अगामि				
पच्–	पच्यते	पेचे	अपाचि	तन्–	तायते, तन्यते	तेने	अतानि
मुच्–	मुच्यते	मुमुचे	अमोचि				
त्यज्–	त्यज्यते	तत्यजे	अत्याजि	खन्–	खायते, खन्यते	चख्ने	अखानि
रुध्–	रुध्यते	रुरुधे	अरोधि				

धातु	लट्	लिट्	लुङ्	धातु	लट्	लिट्	लुङ्
जन्—	जायते	जज्ञे	अजनि	कॄ—	कीर्यते	चकरे	अकारि
	जन्यते			पॄ—	पूर्यते	पप्रे, पपरे	अपारि
जीव्—	जीव्यते	जिजीवे	अजोवि	गै—	गीयते	जगे	अगायि
सेव्—	सेव्यते	सिषेवे	असेवि	दा—	दीयते	ददे	अदायि
ईक्ष्—	ईक्ष्यते	ईक्षाञ्चक्रे	ऐक्षि	धा—	धीयते	दधे	अधायि
इण्—	ईयते	ईये	अगायि	मा—	मीयते	ममे	अमायि
नी—	नीयते	निन्ये	अनायि	हा—	हीयते	जहे	अहायि
चि—	चीयते	चिक्ये	अचायि	स्था—	स्थीयते	तस्थे	अस्थायि
		चिच्ये		पा [पीना]—	पीयते	पपे	अपायि
जि—	जीयते	जिग्ये	अजायि	पा [बचाना]—	पायते	पपे	अपायि
क्षि—	क्षीयते	चिक्षिये	अक्षायि	या—	यायते	यये	अयायि
श्रु—	श्रूयते	शुश्रुवे	अश्रावि	घ्रा—	घ्रायते	जघ्रे	अघ्रायि
स्तु—	स्तूयते	तुष्टुवे	अस्तावि	म्ना—	म्नायते	मम्ने	अम्नायि
लभ्—	लभ्यते	लेभे	अलम्भि	ब्रू—	उच्यते	ऊचे	अवाचि
अधि + इङ्—	अधीयते	अधिजगे	अध्यगायि	वच्—	उच्यते	ऊचे	अवाचि
			अध्यायि	वद्—	उद्यते	ऊदे	अवादि
श्रि—	श्रीयते	शिश्रिये	अश्रायि	वस्—	उष्यते	ऊषे	अवासि
सृ—	स्रियते	सस्रे	असारि	वप्—	उप्यते	ऊपे	अवापि
कृ—	क्रियते	चक्रे	अकारि	वह्—	उह्यते	ऊहे	अवाहि
हृ—	ह्रियते	जह्रे	अहारि	स्वप्—	सुप्यते	सुषुपे	अस्वापि
मृ—	म्रियते	मम्रे	अमारि	यज्—	इज्यते	ईजे	अयाजि
स्मृ—	स्मर्यते	सस्मरे	अस्मारि	ग्रह्—	गृह्यते	जगृहे	अग्राहि
स्तॄ—	स्तीर्यते	तस्तरे	अस्तारि	प्रच्छ्—	पृच्छ्यते	पप्रच्छे	अप्रच्छि
तॄ—	तीर्यते	तेरे	अतारि	व्यध्—	विध्यते	विविधे	अव्याधि
भृ—	भ्रियते	बभ्रे	अभारि	शास्—	शिष्यते	शशासे	अशासि

धातु	लट्	लिट्	लुङ्
ह्वे–	हूयते	जुहुवे	अह्वायि
शी	शय्यते	शिश्ये	अशायि
ग्रन्थ्	ग्रथ्यते	जग्रन्थे	अग्रन्थि
बन्ध्	बध्यते	बबन्धे	अबन्धि
अद्—अद्यते		आदे, जक्षे आदि	

धातु	लट्	लिट्	लुङ्
अश्–अश्यते		आनशे	आशि
आस्–आस्यते		आसाञ्चक्रे	आसि
आप्–आप्यते		आपे	आपि
चुर्–चोर्यते		चोरयाञ्चक्रे	अचोरि
कथ्–कथ्यते		कथयाञ्चक्रे	अकथि

(ङ) **णिजन्त से** कर्मभाववाच्य—**भावयति** का **भाव्यते**, **कारयति** का **कार्यते**, **स्थापयति** का **स्थाप्यते**, **गमयति** का **गम्यते** इत्यादि ।

(च) **सन्नन्त सें** कर्मभाववाच्य—**बुभूषति** का **बुभूष्यते** इत्यादि ।

---

(१२) तद्धित (Nominal Affixes)

किसी संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण वा अव्यय के बाद जो प्रत्यय जोड़े जाते हैं, वे तद्धित प्रत्यय कहे जाते हैं।[1] कुछ तद्धित प्रत्यय नीचे लिखे पद्यों में दिये जाते हैं। इन प्रत्ययों के उदाहरण दीजिये।

षण्, ष्यण्, षेयण्, षिकण्, षीकण्; षिण्, ईय, यत्, ण, षायनण् ।
इय, कण्, ष्कन्, णीन, तल्, त्व; खण्डच्, काण्डच्, इमन्, तिकन् ॥१॥
इतच्, वति, मतुप्, वतुप्; इन्, विनि, ग्मिनि, आकिनिच् ।
अच्, मयट्, शस्, चणप्, चुञ्चुप्; दघ्नञ्, मात्रच् (च) द्वयसच् ॥२॥
डामहच्, व्यत्, डुलच्, धेय; कल्पप्, देशीय, देश्य, युस् ।
चित्, चन, पाशप्, व, रूपप्; ईयस्, इष्ठन्, तरप्, तमप् ॥३॥
एद्युस्, दानीम्, तस्, त्रल्, त्यक्, त्यप्; र्हिल्, थाल्, दा, धा, एनप्, तनट् ।
आच्, आहि, अतसुच्, आति; असि, अस्ताति, कृत्वसुच् ॥४॥
सुच्, च्वि, डाच्, लच्, इलच्, वलच्; नञ्, स्नञ्, साति, चरट्, डति ।
डिमच्, म, मट्, तयट्, अयट्; र, थट्, तीय, तमट् (च) डट् ॥५॥[2]

---

१. क्रिया के बाद भी कोई-कोई तद्धित प्रत्यय जोड़ा जाता है, यथा—विजयतेतराम्, पठतितमाम्, लिखतिरूपम्, पचतिकल्पम् ।

२. कोष्ठवाले 'च' को भी छन्द बैठाने के लिए पढ़ें ।

उदाहरण—

प्रत्ययों के नाम कहीं पाणिनीयव्याकरणवाले हैं और कहीं मनगढ़न्त भी हैं। किसी-किसी प्रत्यय के बाद **कोष्ठ में पाणिनिवाले प्रत्यय** भी दिये जायँगे। पर ठीक व्युत्पत्ति (Derivation) जानने के लिए 'शब्द-स्तोम-महानिधि'-नामक कोष और वैयाकरण 'सिद्धान्त-कौमुदी'-नामक व्याकरण देखा कीजिये।

'I' चिह्नवाले प्रत्यय परमावश्यक हैं।

I. 'षण्' (अण्) 'अ' रह जाता है—पाण्डव, यादव, शैव, शाक्त, वैयाकरण।

I. 'ष्यण्'[1] (ष्यञ्) 'य' रह जाता है—धैर्य, चौर्य, लौल्य, चाञ्चल्य, दैन्य, मौर्ख्य, दौष्ट्य, तादात्म्य, माहात्म्य, दाम्पत्य, स्थापत्य, काव्य, राज्य।

I. 'षेयण्' (ढक्) 'एय' रह जाता है—राधेय, सारमेय, गाङ्गेय, वैनतेय।

I. 'षिकण्' (ठक्) 'इक' रह जाता है—शारीरिक, मानसिक, दैहिक, कायिक।

'षीकण्' (ईकक्) 'ईक' रह जाता है—शाक्तीक (शक्ति जिसका हथियार), याष्टीक।

I. षिण् (इञ्) 'इ' रह जाता है—दाशरथि, सौमित्रि, रावणि, आर्जुनि, वैयासकि।

I. 'ईय' (छ)—रामीय, पर्वतीय, राष्ट्रीय, तदीय, त्वदीय, भवदीय, मदीय।

I. 'यत्' 'य' रह जाता है—सदस्य, सभ्य, शरण्य, आयुष्य, गव्य, पयस्य, सख्य, सत्य, ग्राम्य, अन्त्य, दन्त्य, पक्ष्य, धर्म्य, पथ्य, न्याय्य, अर्घ्य।

'ण' 'अ' रह जाता है—छात्र, चौर, तापस, पथिन् + ण = पान्थ (राही, पथिक)।

'षायनण्' (फक्) 'आयन' रह जाता है—गार्ग्यायण, नाडायन, चारायण।

'इय' (घ)—राष्ट्रिय (राष्ट्र-सम्बन्धी, राज्ञः श्यालः), शुक्रिय, क्षत्रिय।

'कण्' (वुञ्[2]) 'क' रह जाता है—**नपुं०** राजक (राजाओं का समह), राजन्यक, हास्तिक, आरण्यक, रामणीयक।

'ष्कन्' 'क' रह जाता है—पथिन् + ष्कन् = पथिक (राह चलनेवाला)।

---

१. कई कारणवश एक ही तरह के शब्दों के लिए भी पाणिनि ने अनेक प्रत्यय लिखे हैं। जैसे—स्थिर + ष्यञ् = स्थैर्य। देव + यञ् = दैव्य। दिति + ण्य = दैत्य।

२. क्रमक, शिक्षक, पदक और मीमांसक में 'वुन्' है 'वुञ्' नहीं।

I. 'णीन' (खञ्) 'ईन' रह जाता है— ग्रामीण, यौष्माकीण, आस्माकीन ।
'ईन' (ख)—धुरीण, कुलीन, सरयू-पारीण, आवारीण, पारावारीण ।
I. 'तल्' (+आप्) 'ता' हो जाता है—**स्त्री०**—मूर्खता, धीरता, ग्रामता, जनता, बन्धुता, गजता, सहायता, देवता ।
I. 'त्व' **नपुं०**—मूर्खत्व, बन्धुत्व, धीरत्व, विद्वत्त्व, (विद्वान् का भाव, विद्वत्ता) ।
'खण्डच्' **नपुं०**—दूर्वाखण्ड (दूर्वाओं का समूह) ।
'काण्डच्' **नपुं०**—दूर्वाकाण्ड (दूर्वाणां समूहः), कर्मकाण्ड ।
I. 'इमन्' **पुं०**—गरिमन्, लघिमन्, महिमन्, प्रथिमन्, म्रदिमन् ।
'तिकन्' **स्त्री०**—मृत् + तिकन् + आप् = मृत्तिका (मिट्टी), मृत् एव = मृत्तिका ।
I. 'इतच्' **विण०**—पण्डित, पुलकित, रोमाञ्चित, तारकित, पुष्पित ।
I. 'वति'[1] 'वत्' रह जाता है—**अव्यय, रूप नहीं**—पूर्ववत्, मूर्खवत् (मूर्ख-तुल्य) ।
I. 'मतुप्'[2] 'मत्' रह जाता है (तीनों लिङ्गों में रूप कहो)—बुद्धिमत्, धनुष्मत् ।
I. 'वतुप्' (मतुप्) 'वत्' हो जाता है (तीनों लिङ्गों में रूप कहो)—गुणवत् (गुणवाला), ज्ञानवत्, धनवत्, बलवत्, विद्यावत्, लक्ष्मीवत् ।
I. 'इन्' (इनि[3]) 'इन्' रह जाता है—गुणिन्, धनिन्, ज्ञानिन्, प्राणिन्, मायिन् ।

---

१. यथा + वति = यथावत् (यथोचित, यथार्ह) । विधि + वति = विधिवत् (विध्यर्ह) ।
२. (A) राजन् + मतुप् = राजन्वत् (अच्छे राजा से युक्त), **राजन्वान् आर्यावर्त्तः ।**
(a) राजन् + मतुप् = राजवत् (राजा से युक्त), **राजन्वान् तिब्बतदेशः ।**
(B) उदक + मतुप् = उदन्वत् । (उदन्वान् = समुद्रः) ।
(b) उदक + मतुप् = उदकवत् । (उदकवान् = जलवाला) ।
(c) पाणिनि ऋषि इदम्, किम्, यत्, तत् और एतत् में (परिमाण अर्थ में) 'वतुप्' जोड़कर 'इयत्', 'कियत्', 'यावत्', 'तावत्' और 'एतावत्' बनाते हैं । (अर्थ और तीनों लिङ्गों में रूप कहो)
३. (A) अर्थ + इनि = अर्थिन् । अर्थाऽभाववाला, अर्थवाला, याचक, सेवक ।
(a) वर्ण + इनि = वर्णिन् (ब्रह्मचारी) ।

I. 'विनि' 'विन्' रह जाता है–तपस्विन्, ओजस्विन्, मनस्विन्, मायाविन्, मेधाविन्, स्रग्विन् । (अस्-माया-मेधा-स्रजो विनिः) ।
I. 'ग्मिनि' 'ग्मिन्' रह जाता है–वाच् + ग्मिनि = वाग्मिन् (प्रशस्त वाक् वाला) ।
I. 'आकिनिच्' 'आकिन्' रह जाता है–एक + आकिनिच् = एकाकिन् (अकेला)।
I. 'अच्' 'अ' रह जाता है–अर्शस, पुण्य, पाप, सुख, पीत, विदित (ग० ल० फ०) ।
I. 'मयट्'—जलमय, स्वर्णमय, काष्ठमय, मृण्मय, वाङ्मय (ग० नदी, फल)।
I. 'शस्' 'शः' हो जाता है, **अव्य०**–बहुशः, अल्पशः, कोटिशः, शतशः, क्रमशः ।
'चणप्' 'चण' रह जाता है–विद्याचण (विद्या से विख्यात, विद्यया वित्तः)।
'चुञ्चुप्' 'चुञ्चु' रह जाता है–विद्याचुञ्चु (विद्यया वित्तः), शास्त्रचुञ्चु ।
'दघ्नञ्' 'दघ्न' रह जाता है–उरुदघ्न, जानुदघ्न, पुरुषदघ्न, हस्तदघ्न ।
'मात्रच्' 'मात्र' रह जाता है– उरुमात्र, जानुमात्र, पुरुषमात्र, हस्तमात्र ।
'द्वयसच्' 'द्वयस' रह जाता है–उरुद्वयस, जानुद्वयस, पुरुषद्वयस ।
I. 'डामहच्' 'आमह' रह जाता है–पितृ + डामहच् = पितामह, मातामह (नाना)।
I. 'व्यत्' 'व्य' रह जाता है–पितृ + व्यत् = पितृव्य (पिता का भाई, चाचा) ।
भ्रातृव्य = भतीजा, भ्रातृज, भ्रात्रीय । 'व्यन्' करने पर 'भ्रातृव्य' = शत्रु ।
I. 'डुलच्' 'उल' रह जाता है–मातृ + डुलच् = मातुल (माता का भाई, मामा) ।
I. 'धेय' **नपुं०**–नामन् + धेय = नामधेय, रूपधेय, भागधेय ।
I. 'कल्पप्'–**विण०**–शिवकल्प (शिव से थोड़ा ही कम, शिव-तुल्य) ।
'देशीय' **विण०**–विद्वस् + देशीय = विद्वद्देशीय, पञ्चवर्षदेशीय ।
'देश्य' **विण०**–विद्वद्देश्य, पञ्चवर्षदेश्य (ग० ल० फ०)।
'युस्'—अहं + युस् = अहंयु (अहङ्कारवान्), शुभंयु, शंयु ।
I. 'चित्'– कश्चित्, कौचित्, केचित्, कस्मैचित्, किञ्चित्, काचित्, कतिचित् ।
I. 'चन'– कश्चन, कौचन, केचन, कस्यचन, कस्मिश्चन, किञ्चन, काचन ।
'पाशप्' **पाश** रह जाता है–भृत्यपाश (नीच भृत्य), छात्रपाश, नेतृपाश ।
'व'–अर्णस् + व = अर्णव (समुद्र), केशव, गाण्डीव, अजगव, मणिव ।
'रूपप्' 'रूप' ह जात है–छात्ररूप (प्रशस्त छात्र), भृत्यरूप, पचतिरूपम् ।

I. 'ईयस्' (ईयसुन्) 'ईयस्' रह जाता है—गरीयस् (दो में बड़ा)। पृ० ३४ देखो।
I. 'इष्ठन्'—गुरु+इष्ठन्=गरिष्ठ (सबों में ज्यादा बड़ा)। पृ० ३४ देखो।
I. 'तरप्[1]'—गुरुतर (दो में ज्यादा बड़ा), विद्वत्तर (ग० ल० फ०)।
I. 'तमप्[2]'—गुरुतम (सबों में ज्यादा बड़ा), विद्वत्तम (ग० ल० फ०)।
I. 'एद्युस्[3]' अव्य०—पुर्वेद्युः, अन्येद्युः, अपरेद्युः, इतरेद्युः।
I. 'दानीम्' अव्य०—इदम्+दानीम्=इदानीम् (अस्मिन् काले), तदानीम्।
I. 'तस्' (तसिल्) अव्य०—छपरातः, अन्यतः, ततः, यतः, अतः, इतः, कुतः।
I. 'त्रल्' अव्य०—पूर्वत्र, सर्वत्र, अन्यत्र, यत्र, तत्र, कुत्र, अमुत्र।
I. 'त्यक्' विण०—दक्षिणा–**दाक्षिणात्य**, पश्चात्–**पाश्चात्य**, पुरस्–**पौरस्त्य**।
'त्यप्' विण०—अमात्य, इहत्य, क्वत्य, ततस्त्य, तत्रत्य (वहाँ वाला), नित्य।
I. 'र्हिल्' अव्य०—तत्–**तर्हि**, यत्–**यर्हि**, किम्–**कर्हि**, एतत्–**एतर्हि**।
I. थाल्[4]' अव्य०—सर्वथा (सर्वेण प्रकारेण), अन्यथा, उभयथा, यथा, तथा।
I. 'दा' अव्य०—अन्यदा, यदा, तदा, सर्वदा, सदा (सर्वस्मिन् काले)।
I. 'धा' अव्य०—एकधा (एक प्रकार से), अनेकधा, द्विधा, त्रिधा, चतुर्धा, षोढा।
I. 'एनप्' अव्य०—दक्षिणेन (सटे दक्षिण), उत्तरेण, अपरेण, पूर्वेण।
I. 'तनट्' (ट्यु—तुट्)—सनातन, पुरातन, चिरन्तन, अद्यतन, ह्यस्तन, श्वस्तन, अधुनातन, इदानीन्तन, तदानीन्तन (ग० नदी फ०)।
I. 'आच्' अव्य०—उत्तरा, दक्षिणा।

---

१. किम्+डतरच्=कतर (दोनों में कौन), यतर, ततर, एकतर।
२. किम्+डतमच्=कतम (बहुतों में कौन), यतम, ततम, एकतम।
१–२. पचतितराम्, पचतितमाम् इत्यादि के विषय में गुरु बता दें।
३. समाने अहनि=सद्यः, पूर्वस्मिन् वत्सरे = परुत्, पूर्वतरे वत्सरे = परारि, अस्मिन् वत्सरे =ऐषमः; परस्मिन् अहनि=परेद्यवि, अस्मिन् अहनि=अद्य, गतेऽहनि=ह्यः, आगामिनि अहनि=श्वः, कस्मिन्=क्व या कुह (ये १० निपातनसिद्ध हैं)।
I ४. किम्+थमु=कथम् (किस प्रकार), इदम्+थमु=इत्थम् (नि० सि०)।

I. 'आहि' अव्य०—उत्तराहि, दक्षिणाहि। ('आच्' और 'आहि' के दो ही उदाहरण हैं)।

I. 'अतसुच्' 'अतः' रह जाता है, **अव्य०**—पूर्व—**पुरतः**, दक्षिणतः, उत्तरतः।
'आति' **अव्य०**–दक्षिणात्, उत्तरात्, अधरात्, अपर+आति=पश्चात्।
'असि' **अव्य०**–पूर्व—**पुरस्** वा **पुरः**, अधर—**अधः**, अवर—**अवः**।
'अस्ताति'[1] **अव्य०**—पूर्व–**पुरस्तात्**, अधस्तात्, अवस्तात्, परस्तात्।

I. 'कृत्वसुच्' **अव्य०**–पञ्चन्+कृत्वसुच्=**पञ्चकृत्वः** (५ वार), सप्तकृत्वः।

I. 'सुच्' **अव्य०**—द्वि+सुच्=**द्विः** (दो वार), **त्रिः** (३ वार), **चतुः** (४ वार)।

I 'च्वि'—कण्ठस्थ+च्वि+कृ+लट्, प्र० पु०, ए०=**कण्ठस्थीकरोति**।
अङ्गीकरोति, स्वीकरोति, नम्रीभवति, सज्जीभूय, कण्ठस्थीकृत्य।
'डाच्' 'आ' रह जाता है—पटपटाकृत्य, चटचटाकृत्य, खटखटाकृत्य।
'लच्' **विण०**–श्मश्रुल (श्मश्रु है जिसको, वह), सिध्मल, कण्टल, तुन्दिल।
'इलच्' **विण०**—फेनिल, पिच्छिल, पङ्किल।
'वलच्' **विण०**—कृषीवल, दन्तावल, रजस्वल, ऊर्जस्वल, शाद्वल।
'नञ्'—स्त्री+नञ्=स्त्रैण (=स्त्री-स्वभाव, स्त्रीवश, स्त्रीसम्बन्धी)।
'स्नञ्'— पुंस्+स्नञ्=पौंस्न (= पुरुषवाला, पुरुषयोग्य)।
'साति' 'सात्' रह जाता है, **अव्य०**—देवसात् (=देवाधीनं, देवदेयं), भूमिसात्, धूलिसात्, अग्निसात्, भस्मसात्, आत्मसात्।
'चरट्'—भूतचर (पहले हुआ), पठितचर (पहले का पढ़ा हुआ)।
'डति' **सदा बहु०**–किम्+डति=**कति** (कितने), यति, तति। (रूप कहो)।

I. 'डिमच्' 'इम' रह जाता है–पश्चात्–**पश्चिम**, अग्रिम, आदिम, अन्तिम।

I. 'म'– मध्य+म=**मध्यम** (बीचवाला) (गज, लता और फल के समान)।

I. 'मट्'—पञ्चन्+मट्=**पञ्चम**, सप्तम, दशम, नवम (ग० नदी० फ०)।

I. 'तयट्' (तयप्)—द्वितय, त्रितय, चतुष्टय, पञ्चतय (ग० नदी० फ०)।

---

१. ऊर्ध्व+रिल्=उपरि, ऊर्ध्व+रिष्टाति=उपरिष्टात् (निपा० सिद्ध)।

I. 'अयट्' (अयच्) —द्वि+अयच्=**द्वय**, त्रय, कतिपय, उभय ।

'र'—ऊषर, पाण्डुर, पामर, मुखर, खर, कुञ्जर, मधुर, शुषिर ।

I. 'थट्'—चतुर्थ (४ का पूरण), षष्ठ (छः का पूरण), कतिथ, कतिपयथ ।

I. 'तीय'—द्वितीय (दो का पूरण, दूसरा), तृतीय (तीन का पूरण, तीसरा) ।

I. 'तमट्'—विंशतितम (२०वाँ), त्रिंशत्तम, चत्वारिंशत्तम, शततम ।

I. 'डट् 'अ' रह जाता है—विंश (२०वाँ), त्रिंश, पञ्चाश, एकादश (११वाँ) ।

व्यर्थ—अकच्, अठच्, उकञ्, कन्, त्रा; जातीयर्, श, बहुच्, ष्टरच् ।

'अकच्'[1]—उच्चकैः, सर्वक, उभयक, युवक, आवक, युष्मक ।

'अठच्'—कर्मन्+अठच्=**कर्मठ** (कर्मकुशल) ।

'उकञ्'—कर्मन्+उकञ् =कार्मुक (धनुष्, नपुं०), (कर्म-दक्ष, **त्रि०**) ।

'कन्'—शूद्रक, पुत्रक, अश्वक, तैलक, वृक्षक ।

'त्रा' **अव्य०**—देवत्रा)देवत्राकरोति=देवाधीनं देयं करोति) ।

'जातीयर्'—पटुजातीय (पटु-प्रकारक) ।

'श'—लोमश (लोम हैं जिसको, वह) ।

'बहुच्'—बहुपटु (करीब-करीब चतुर । 'बहुच्' को शब्द के आदि में जोड़ें) ।

'ष्टरच्' 'तर' रह जाता है—वत्सतर, उक्षतर, ऋषभतर ।

(क) कभी-कभी विशेष अर्थ में प्रत्यय को जोड़ते हैं और शीघ्र उसका लुप् कर देते हैं । (अर्थात् उस प्रत्यय को हटा लेते हैं) । जैसे—पञ्चालानां निवासः जनपदः=पञ्चालाः **बहुव०** (प्रत्यय को हटा नहीं लेते तो 'पाञ्चालाः' लिखना पड़ता) । इसी प्रकार—कुरवः, मत्स्याः, अङ्गाः, वङ्गाः, मगधाः, सुह्माः, पुण्ड्राः आदि के विषय में बताइये ।

(ख) इक्ष्वाकोः गोत्रापत्यानि=**इक्ष्वाकवः** । इसी प्रकार यदवः, रघवः (**बहु०**) ।

(ग) कम्बोजस्य राजा=**कम्बोजः** (सब वचनों में रूप हो सकते हैं) । इसी प्रकार केरलः, शकः, यवनः इत्यादि ।

---

१. उच्चकैः और नीचकैः अव्यय हैं । 'सर्वक' इत्यादि के रूप कहो ।

(घ) अवन्ती की पुत्री=**अवन्ती**। कुन्ती की पुत्री=**कुन्ती**। कुरु की पुत्री=**कुरूः** (ये तीनों स्त्रीलिङ्ग में ही होते हैं)। **कुरु** में **ऊङ्** जोड़ने से स्त्रीलिङ्ग में **कुरू** बनता है। (पृ० ३२ देखिये)।

देखिये साहब, जहाँ 'य' की आवश्यकता है, वहाँ 'ष्यण्' वा जहाँ 'तय' की आवश्यकता है, वहाँ 'तयट्' लिखा है। किसी-किसी प्रत्यय में 'ण्' वा 'ञ्' इसलिए जुटा रहता है कि आवश्यकता पड़ने पर स्वर को बदल सकें।

जैसे—मित्र+ष्यण्=मैत्र्य ('इ' का 'ऐ' हो गया)।

व्यर्थ 'ष्' वा 'ट्' इसलिए जुटा रहता है कि स्त्रीलिङ्ग बनाना पड़े तो 'ई' जोड़कर स्त्रीलिङ्ग बना लें। जैसे—'मैत्र्य' का स्त्रीलिङ्ग दीर्घ 'ई' जोड़कर 'मैत्री', द्वितय का स्त्रीलिङ्ग 'ई' जोड़कर 'द्वितयी'।

---

(१३) कृदन्त-प्रकरण

धातु में जो प्रत्यय जोड़ा जाय, वह **'कृत्'-प्रत्यय** (Verbal Affix) कहा जाता है। कृत्-प्रत्ययों से बने शब्द कृदन्त शब्द कहे जाते हैं। कुछ कृत्प्रत्यय नीचे लिखे पद्यों में दिये जाते हैं—

तव्य[1] अनीय यत् ण्यत् क्यप्; केलिमर् क्तिन् अनट् अन।
शतृ[2] शानच् क्वसु कानच्; स्यतृ स्यमान विच् मनिन् ॥१॥
क्त्वा[3] ल्यप् तुम् णम् क्त[4] क्तवतु; तृच् तृन् णक षक णिनि।
अण् ट अच् क इन् खश् खच् ख्य; खनट् खिष्णुच् खुकञ् क्वनिप् ॥२॥

---

१. 'तव्य,' 'अनीय,' 'यत,' ण्यत्', 'क्यप्' और 'केलिमर्' **'कृत्य' प्रत्यय** कहे जाते हैं। इन प्रत्ययों से बने विशेषणों के रूप प्रायः गज, लता और फल के समान।

२. शतृ से स्यमान तक को 'ल' भी कहते हैं।

३. 'क्त्वा,' 'ल्यप्,' 'तुम्' और 'णम्' से बनी क्रिया **अव्यय** हो जाती है।

४. 'क्त' और 'क्तवतु' **'निष्ठा'** कहलाते हैं।

णिव क्विप् कञ् ड इष्णुच् ग्स्नु क्तु; उकञ् आलुच् घुरच् क्वरप् ।
वरच् र क्मर ऊक उ; इत्नु इत्र कुर त्र कि ॥३॥
डवतु डति ड्रट् षाकन्; अथुच् घञ् खल् नङ् अङ् त्रिमक् ।
'I' चिह्नित प्रत्यय परमावश्यक हैं। उनके उदाहरण भी साथ हैं।

I. 'तव्य'— दातव्य, कर्त्तव्य, पठितव्य, गन्तव्य, प्रष्टव्य, षोढव्य, बोद्धव्य ।

I. 'अनीय'— भवनीय, करणीय, पठनीय, श्रवणीय, दानीय, पानीय ।

I. 'यत्'— भव्य, गम्य, रम्य, चेय, जेय, नेय, देय, पेय, गेय, ध्येय, शस्य ।

I. 'ण्यत्'— आर्य, कार्य, हार्य, धार्य, सार्य, स्मार्य, श्लाघ्य, पाठ्य, हास्य, छेद्य, भेद्य ।

वाच्य और वाक्य, योज्य और योग्य, भोज्य और भोग्य में क्या भेद ?

I. 'क्यप्'—इत्य, भृत्य, दृत्य, स्तुत्य, सूर्य, कृत्य, कृत्या, विद्या, शय्या, इज्या ।

I. 'केलिमर्' 'एलिम' रह जाता है—पचेलिम, भिदेलिम, छिदेलिम, मुचेलिम ।

I. 'क्तिन्' 'ति' रह जाता है; स्त्री०संज्ञा— कृति, भूति, मति, गति, रति, स्थिति, गीति, मुक्ति, बुद्धि, रूढि, सृष्टि, इष्टि, दृष्टि, पुष्टि, शान्ति ।

I. 'अनट्' (ल्युट्) नपुं० संज्ञा—गमन, भोजन, पान, शयन, जीवन ।

I. 'अन' १ (ल्यु)— नन्दन, लवण, जनार्दन, विभीषण, मधुसूदन ।

२ (युच्)— वन्दना, याचना, वेदना, आसना, गवेषणा, धारणा ।

I. 'शतृ' 'अत्' रह जाता है—गच्छत्, भवत्, पठत्, हसत्, विदत्[1] ।

I. 'शानच्' 'मान' या 'आन' हो जाता है— लभमान, वर्त्तमान, ददान, दधान ।

'क्वसु' 'वस्' रह जाता है— बभूवस्, जग्मिवस्, ईयिवस्, शुश्रुवस् ।

'कानच्' 'आन' रह जाता है—लेभान, चक्राण, ववन्दान, ऊचान, युयुधान ।

'स्यतृ' 'स्यत्' रह जाता है—भविष्यत्, पठिष्यत्, खादिष्यत्, चोरयिष्यत् ।

'स्यमान'—वर्त्तिष्यमान, लप्स्यमान, रप्स्यमान, करिष्यमाण, वक्ष्यमाण ।

'**विच्**' कुछ नहीं रह जाता है— रुष्–**रोष्**, रिष्–**रेष्**, सु+गण्–**सुगण्** ।

'**मनिन्**' 'मन्' रह जाता है—शृ–**शर्मन्** (नपुं०, त्रि० और पुं० कैसे ?)।

I. 'क्त्वा' 'त्वा' रह जाता है—कृत्वा, भूत्वा, अभूत्वा, पठित्वा, श्रुत्वा,

---

I १. विद्+ (शतृ के स्थान पर) वसु=विद्वस्, पुं० विद्वान्; स्त्री० विदुषी ।

लब्ध्वा, पृष्ट्वा, दृष्ट्वा, सृष्ट्वा, इष्ट्वा, उदित्वा, उषित्वा, हित्वा, जग्ध्वा, विद्ध्वा।

I. 'ल्यप्' 'य' रह जाता है—अनुभूय, प्रणम्य, आगत्य, कण्ठस्थीकृत्य, नम्रीभूय।

I. 'तुम्' (तुमुन्)—भवितुम्, गन्तुम्, स्प्रष्टुम्, दग्धुम्, लब्धुम्, सोढुम्।
'णम्' (णमुल्) 'अम्' रह जाता है—कारम्, ग्राहम्, श्रावम्, यावज्जीवम्।

I. 'क्त'—कृत, भूत, पठित, मुक्त, पृष्ट, क्रुद्ध, दुग्ध, मूढ, कीर्ण, अन्न, जग्ध।

I. 'क्तवतु' 'तवत्' रह जाता है—कृतवत्, भूतवत्, दृष्टवत्, पठितवत्।

I. 'तृच्' 'तृ' रह जाता है—दातृ (देनेवाला), कर्त्तृ, श्रोतृ, नेतृ, योद्धृ, वोढृ, प्रष्टृ।

I. 'तृन्' 'तृ' रह जाता है—दातृ (देने का शीलवाला)। तृच् के समान उदाहरण।

I 'णक' (ण्वुल्) 'अक' रह जाता है—लेखक (लिखनेवाला), नायक, पाठक।

I. 'षक' (ष्वुन्)—नर्त्तक (नृत्यकला जाननेवाला), रजक, खनक।

I. 'णिनि'[1] 'इन्' रह जाता है—वादिन्, वासिन्, कारिन्, गामिन्, उत्तरदायिन्।

I. 'अण्' 'अ' रह जाता है—कुम्भकार, ग्रन्थकार, मालाकार, तन्तुवाय, गोसन्दाय।

I. 'ट' 'अ' रह जाता है—दिवाकर, निशाकर, कर्मकर, अग्रसर, वनचर।

I. 'अच्'[2] 'अ' रह जाता है—पच, चल, सर्प, देव, चर, धर, पूजार्ह, शिलाशय, अय, चय, जय, क्षय, नय, लय, स्मय, शय, षय (भय, वर्ष नपुं०)।

I. 'क' 'अ' रह जाता है—बुध, विद, नुद, नृत, प्रिय, किर, ज्ञ, नृप, गृहस्थ, गृह।

'इन्'[3]—शकृत्करि (वत्स), स्तम्बकरि (व्रीहि), दृतिहरि और नाथहरि (पशु)।

---

१. शमी, दमी, श्रमी, क्षमी, प्रमादी, उन्मादी, अनुरोधी, संसर्गी, द्वेषी, द्रोही, दोही, योगी, विवेकी, त्यागी, रागी, भागी, विलासी, प्रवासी इत्यादि में 'घिनुण्'।

२. कर, शर, यव, लव, स्तव, भव, ग्रह, वर, दर, निश्चय, गम, वश, रण, जप, स्वन, यम, नियम, संयम, उपयम इत्यादि में 'अप्' (**पाणिनि**)।

३. फलेग्रहि, आत्मम्भरि और कुक्षिम्भरि निपा० सिद्ध हैं। विग्रह क्या?

'खश्' 'अ' रह जाता है— 'मुम्'[1] आ जाता है— विधुन्तुद, अरुन्तुद, ललाटन्तप ।

'खच्'[2] अ' रह जाता है— 'मुम्' आ जाता है— **धनञ्जय**, क्षेमङ्कर, भयङ्कर, परन्तप ।

'ख्य' 'य' रह जाता है— 'मुम्' आ जाता है— पण्डितम्मन्य, कृतार्थम्मन्य, धन्यम्मन्य । ('खश्' **पाणिनि**)

'खनट्' (ख्युन्) 'अन' रह जाता है— 'मुम्' आ जाता है— आढ्यङ्करण, नग्नङ्करण, अन्धङ्करण ।

'खिष्णुच्' 'इष्णु' रह जाता है— 'मुम्' आ जाता है— आढ्यम्भविष्णु, प्रियम्भविष्णु ।

'खुकञ्' 'उक' रह जाता है— 'मुम्' आ जाता है— प्रियम्भावुक, आढ्यम्भावुक ।

'क्वनिप्' 'वन्' रह जाता है— पारदृश्वन् (पार देखचुकनेवाला), प्रातरित्वन्, राजयुध्वन्, सहयुध्वन्, सहकृत्वन्, राजकृत्वन् ।

'वनिप्' 'वन्' रह जाता है— वि+जन्–**विजावन्**, ओणृ–**अवावन्** ।

'ण्वि' कुछ न रह जाता है—अंश+भज्+ण्वि=अंशभांज् । प्रथमा में अंशभाक्, अंशभाजौ, अंशभाजः । (शेष रूप कहो)

I. 'क्विप्' कुछ न रह जाता है— सम्पत्, आपत्, विपत्, सभासद्, ईदृश्[3], तादृश् ।

'कञ्' 'अ' रह जाता है— ईदृश, यादृश, तादृश, कीदृश, भवादृश, मादृश, युष्मादृश ।

I. 'ड' 'अ' रह जाता है—पङ्कज, द्विज, अन्तग, अध्वग, खग, विहग, भुजग, पतग । (पतङ्ग, पतङ्गम; विहङ्ग, विहङ्गम इत्यादि कैसे ?)

'इष्णुच्' —अलङ्करिष्णु, निराकरिष्णु, सहिष्णु, चरिष्णु, वर्द्धिष्णु ।

---

१. 'मुम्' आ जाने का अर्थ यह है कि पूर्वपद के 'अन्तिम अक्षर पर' 'अनुस्वार' बैठ जाता है । जैसे—विधुंतुद । या पूर्वपद के बाद जिस वर्ग का अक्षर हो, उस [वर्ग] का ५म अक्षर उसमें जुट जाता है । जैसे—विधुन्तुद ।

२. 'खच्' करने पर विहङ्ग, विहङ्गम और भुजङ्ग, भुजङ्गम दो क्यों ?

३. पाणिनि के अनुसार ईदृश्, यादृश् इत्यादि में 'क्विन्' होगा ।

'ग्स्नु' 'स्नु' रह जाता है— ग्लै–ग्लास्नु, जि–जिष्णु, स्था–स्थाष्णु, भू– भूष्णु।

'क्नु' 'नु' रह जाता है— त्रस्–त्रस्नु, गृध्–गृध्नु, धृष्–धृष्णु, क्षिप्–क्षिप्नु।

I. 'उकञ्'—गामुक, कामुक, घातुक, स्थायुक, भावुक, वर्षुक, लाषुक।

'आलच्'— दयालु, श्रद्धालु, स्पृहयालु, निद्रालु, तन्द्रालु, पतयालु।

'घुरच्' 'उर' रह जाता है— भञ्ज्–भङ्गुर, भास्--भासुर, मिद्–मेदुर।

'क्वरप्' 'वर' रह जाता है—इत्वर, नश्वर, जित्वर, सृत्वर, गत्वर।

'वरच्' 'वर' रह जाता है— स्थावर, ईश्वर, भास्वर, पेस्वर, कस्वर।

'र'—नम्र, कम्प्र, स्मेर, कम्र, हिंस्र, दीप्र (त्रि०), अजस्र (नपुं०)।

'क्मरच्' 'मर' रह जाता है—सृ–सृमर, घस्–घस्मर, अद्–अद्मर।

'ऊक' (यङ् करके)—यायजूक, जञ्जपूक, दन्दशूक। (जागरूक कैसे ?)

I. 'उ'—पिपासु, बुभूषु, जिगमिषु, मुमुक्षु, आशंसु, भिक्षु (विन्दु, इच्छु)।

'इत्नु'— स्तनयित्नु, मदयित्नु, दूषयित्नु, गदयित्नु, हर्षयित्नु।

'इत्र'—अरित्र, लवित्र, धवित्र, सवित्र, खनित्र, वहित्र, चरित्र, पवित्र।

'कुरच्'— विदुर, भिदुर, छिदुर (विदिभिदिच्छिदेः कुरच्)।

'त्र' (ष्ट्रन्)—दात्र, नेत्र, शस्त्र, शास्त्र, योक्त्र, स्तोत्र, तोत्र, पत्र, मेढ्र, दंष्ट्रा, नद्ध्री, धात्री।

I. 'कि'— विधि, सन्धि, अवधि, निधि, आधि, परिधि, उपाधि, व्याधि, समाधि, अन्तर्द्धि।

'डवतु' 'अवत्' रह जाता है—भा+डवतु=भवत् (आप), पुं० भवान् इत्यादि।

'डति'—पा+डति=पति। रूप कहो। समास करने पर तो मुनिवत्।

'ड्रट्'—स्त्यै+ड्रट्+ईप्=स्त्री। (स्त्यायति गर्भः अस्याम् इति स्त्री)।

'षाकन्' 'आक' रह जाता है—जल्पाक, भिक्षाक, कुट्टाक, लुण्ठाक, वराक।

'अथुच्'—वेपथु, श्वयथु, याचथु, वमथु, नन्दथु, मज्जथु, क्षवथु, दवथु, भ्राजथु, भ्राशथु, म्लाशथु, स्फुर्जथु।

I. 'घञ्' 'अ' रह जाता है, पुं०–राम, काम, नाम, काय, पाक, भाग, याग, नाश, दाह। चि+घञ्='काय' और 'चाय' (=Tea) दोनों बनें तो अच्छा है।

I. 'खल्' 'अ' रह जाता है—ईषत्कर, दुष्कर, सुकर, सुगम, दुर्वह, दुर्लभ।

I. 'नङ्'[1] 'न' रह जाता है—यत्न (पुं०), प्रश्न (पुं०), विश्न (पुं०), यज्ञ (पुं०), रक्षण (पुं०) याच्ञा (स्त्री०)।

---

१. स्वप्+नन्+स्वप्न (पुं०)। तृप्+न+आप्=तृष्णा (स्त्री०)।

I. **'अङ्' 'अ' रह जाता है ('आप्' जुटकर स्त्री०)**— पूज् + अङ् + आप् = पूजा। इसी प्रकार चर्चा, कथा, प्रथा, व्यथा, चिन्ता, पीडा, कृपा, दया, क्षमा, त्रपा, जरा, भिदा, छिदा, विदा, निविदा, दोला, मृजा, चेष्टा, पृच्छा, लेखा, प्रमा, उपमा, आभा, प्रभा, आज्ञा, अनुज्ञा, अवज्ञा, आस्था, संस्था, अवस्था, निष्ठा, प्रदा, उपदा, श्रद्धा, अन्तर्धा, उपधा, उपज्ञा।

'अ' ('आप्' जुटकर स्त्री०)— आगेवाले उदाहरणों में पाणिनि 'अ' प्रत्यय कहते हैं—खेल् + अ + आप् = खेला। इसी प्रकार क्रीडा, व्रीडा, लज्जा, ईडा, ईहा, ऊहा, भाषा, सेवा, पीडा, वाधा, अर्चा, शंसा, प्रशंसा, अनुशंसा (= सिफ़ारिश); आशंसा, शिक्षा, दीक्षा, रक्षा, भिक्षा, अनुकम्पा, शङ्का, आशङ्का, ईक्षा, प्रेक्षा, अपेक्षा, समीक्षा, अन्वीक्षा, अवेक्षा, निरीक्षा, वीक्षा, अधीक्षा, प्रतीक्षा, परीक्षा, उपेक्षा, पर्यवेक्षा, उत्प्रेक्षा, अन्तर्वीक्षा (= इण्टर्व्हिउ), सर्वेक्षा (= सर्व्हे—Survey)।

सन्नन्त-प्रकरण देखकर पढ़ें— बुभूषा, पिपठिषा, शिशिक्षिषा, जिगमिषा, जिगीषा, चिकीर्षा, विवक्षा, मुमुक्षा, तितिक्षा, यियक्षा, पिपक्षा, बुभुक्षा, पिपासा, जिज्ञासा, युयुत्सा, शुश्रूषा, दित्सा, लिप्सा, ईप्सा।

यङन्त-प्रकरण देखकर पढ़ें— बोभूया, रोरुद्या, पापठ्या, अटाट्या।

नाम-धातु-प्रकरण देखकर पढ़ें—पुत्रीया, यशस्काम्या, उदन्या।

[कोई कोषकार पीडा, प्रतिमा आदि शब्दों में 'अङ्' लिखते हैं तो कोई 'अ'। ऐसी दशा में पाणिनीय व्याकरण के परीक्षार्थी को छोड़ दूसरे को 'अङ्' और 'अ' का भेद दिखाने को वाध्य न किया जाय।]

I. **'त्रिमक्' ('क्त्रि' + 'मप्') 'त्रिम' रह जाता है**— कृ + त्रिमक् = कृत्रिम (= करने से निष्पन्न, बनावटी। करणेन निर्वृत्तम् = कृत्रिमम्), क्रीत्रिम (= क्रय करने से हुआ), भृत्रिम, विहित्रिम, पक्त्रिम, विपक्त्रिम, उप्त्रिम, लब्धिम, दत्त्रिम।

कुछ 'कृत्' प्रत्ययों के विषय में

शतृ शानच् क्वसु कानच्, स्यतृ स्यमान क्त्वा ल्यप् अण् ।
ट अच् अप् क खश् खच् कञ् ड, घञ् खल् अङ् अ पुनः पढ़ो ॥

I. **'शतृ' 'अत्' रह जाता है**— (१) यदि परस्मैपदी धातु के लट् प्रथम पुरुष बहुवचन में 'न्ति' हो तो उसमें से 'ति' निकालने पर जो बचे, वही 'शतृ' जोड़कर बने शब्द का पहला रूप है । जैसे—'भवन्ति' में से 'ति' निकाल देने पर 'भवन्' (=होता हुआ) बचा । इसी प्रकार गच्छन् (=जाता हुआ), पठन्, लिखन्, हसन्, खेलन् इत्यादि । (वस्तुतः 'भू' धातु में 'शतृ' जोड़ने पर 'भवत्' होता है; पुंलिङ्ग में भवन्, भवन्तौ, भवन्तः इत्यादि 'गच्छत्' के समान । स्त्रीलिङ्ग में भवन्ती, भवन्त्यौ, भवन्त्यः इत्यादि 'नदी' के समान, तथा नपुंसकलिङ्ग में भवत्, भवन्ती, भवन्ति इत्यादि रूप होते हैं ।)

I. (२) यदि परस्मैदी धातु के लट् प्रथम पुरुष बहुवचन में केवल 'ति' हो तो उसमें से 'ि' (=इकार की मात्रा) हटा देने पर जो बचे, वही 'शतृ' जोड़कर बने शब्द का पहला रूप है । जैसे—'ददति' में से 'ि' (इकार की मात्रा) हटा देने पर 'ददत्' (=देता हुआ) बचा । इसी प्रकार दधत्, बिभ्यत्, शासत्, चकासत्, जक्षत्, जाग्रत्, दरिद्रत् । (दा + शतृ = ददत् । पुंलिङ्ग में ददत्, ददतौ, ददतः इत्यादि 'भूभृत्' के समान; स्त्रीलिङ्ग में ददती, ददत्यौ, ददत्यः इत्यादि 'नदी' के समान तथा नपुंसकलिङ्ग में ददत्, ददती, ददन्ति इत्यादि रूप होते हैं ।)

I. **शानच्**— (१) जिस आत्मनेपदी धातु के लट् प्रथम पुरुष द्विवचन के रूप में से 'एते' की ध्वनि निकलती है, उसमें 'शानच्' जोड़ने पर 'मान' दीख पड़ने लगता है । जैसे—'लभ्' धातु के लट् प्रथम पुरुष द्विवचन में 'लभेते' रूप होता है । 'लभेते' में से 'एते' की ध्वनि सुन पड़ती है । अतः 'लभ्' धातु में 'शानच्' जोड़ने पर 'मान' दीख पड़ेगा । यथा— लभ् + शानच् = लभमान (पाता हुआ) । इसी प्रकार वर्त्तमान, वर्द्धमान, एधमान, वेपमान, कम्पमान, सेवमान इत्यादि ।

I. (२) जिस आत्मनेपदी धातु के लट् प्रथम पुरुष द्विवचन के रूप में से 'आते' की ध्वनि निकलती है, उसमें से 'ते' को हटाकर 'न' लिख देने से 'शानच्' प्रत्ययवाला रूप बन जाता है। यथा—'दा' धातु के लट् प्रथम पुरुष द्विवचन में 'ददाते' रूप होता है। 'ददाते' में से 'आते' की ध्वनि निकलती है। अतः 'ते' को हटाकर 'न' लिख देने से 'ददान' बन जाता है। दा + शानच् = ददान (देता हुआ)। इसी प्रकार दधान, शयान, कुर्वाण, विक्रीणान, बिभ्राण। किन्तु आस् + शानच् = आसीन। 'शानच्' वालों के रूप गज, लता और फल के समान।

स्यतृ— 'स्यत्' रह जाता है। जिस प्रकार वर्त्तमान काल में सातत्य (= लगातारी) प्रकट करने के लिए परस्मैपदी धातु के बाद 'लट्' लकार के स्थान पर 'शतृ' जोड़ते हैं, उसी प्रकार भविष्यत्-काल में सातत्य प्रकट करने के लिए **परस्मैपदी** धातु के बाद 'लृट्' लकार के स्थान पर 'स्यतृ' प्रत्यय जोड़ते हैं। 'शतृ' के समान ही 'स्यतृ' की भी सारी बातें होती हैं। 'पठिष्यन्ति' में से 'ति' निकालने पर 'पठिष्यन्'। इसी प्रकार 'खादिष्यन्', 'खेलिष्यन्' इत्यादि।

स्यमान— जिस प्रकार वर्त्तमान काल में सातत्य प्रकट करने के लिए **आत्मनेपदी** धातु के बाद 'लट्' लकार के स्थान पर 'शानच्' जोड़ते हैं, उसी प्रकार भविष्यत्-काल में सातत्य प्रकट करने के लिए **आत्मनेपदी** धातु के बाद लृट् लकार के स्थान पर 'स्यमान' जोड़ते हैं। 'शानच्' के समान ही 'स्यमान' के भी सभी काम होते हैं। 'स्यमान' जोड़ने पर पूरा 'स्यमान' दीखता रहता है। 'लभ्' धातु के 'लृट्' में लप्स्यते, लप्स्येते इत्यादि रूप होते हैं। अतः 'लभ्' धातु में 'स्यमान' जोड़ने पर **लप्स्यमान**

रूप हो जायगा। इसी प्रकार रप्स्यमान, सेविष्यमाण, कम्पिष्यमाण इत्यादि।

क्वसु— 'वस्' रह जाता है। 'लिट्' लकार के स्थान में **परस्मैपदी** धातु के बाद 'क्वसु' जोड़ते हैं। 'लिट्' प्रथम पुरुष द्विवचन के रूप के मुख्य अंश में 'इवस्' की ध्वनि लानी पड़ती है। यथा, 'गम्' धातु के 'लिट्' प्रथम पुरुष द्विवचन के रूप 'जग्मतुः' का मुख्य अंश है 'जग्म्'। 'जग्म्' में 'इवस्' की ध्वनि जोड़ी गयी, तो 'जग्मिवस्' बन गया।

गम् + क्वसु = जग्मिवस् (= जा चुका हुआ) के पुंलिङ्ग में रूप होते हैं— प्रथमा में जग्मिवान्, जग्मिवांसौ, जग्मिवांसः। द्वितीया में जग्मिवांसम्, जग्मिवांसौ, जग्मुषः। स्त्रीलिङ्ग में जग्मुषी इत्यादि रूप नदीवत्। इसी प्रकार चक्रिवस्, तस्थिवस्, उपेयिवस्, निषेदिवस्, पेचिवस्, पेतिवस् इत्यादि।

पुंलिङ्ग द्वितीया बहुवचन के रूप में 'ई' जोड़ने से 'क्वसु'-प्रत्ययान्त का स्त्रीलिङ्ग बनता है। यथा—द्वितीया बहुवचन के रूप 'जग्मुषः' में 'ई' जोड़ने पर 'जग्मुषी'। इसी प्रकार पुंलिङ्ग द्वितीया बहुवचन के रूप 'तस्थुषः', 'पेचुषः', 'पेतुषः', 'उपेयुषः' और 'निषेदुषः' में दीर्घ 'ई' जोड़ने पर 'तस्थुषी', 'पेचुषी', 'पेतुषी', 'उपेयुषी', 'निषेदुषी' इत्यादि।

कानच्— 'लिट्' लकार के स्थान में आत्मनेपदी धातु के बाद 'कानच्' जोड़ते हैं। 'लिट्' प्रथम पुरुष द्विवचन के रूप के मुख्य अंश में 'आन' की ध्वनि लानी पड़ती है। यथा—कृ धातु के 'लिट्' प्रथम पुरुष द्विवचन के रूप 'चक्रतुः' का मुख्य अंश है 'चक्र्'। 'चक्र्' में 'आन' की ध्वनि जोड़ी गयी तो **चक्राण** (= कर चुका हुआ) बना। इसी प्रकार लेभान, ववन्दान। गज, लता और फल के समान रूप।

"'क्त्वा', 'ल्यप्' = करके"— 'करके' के अर्थ में 'क्त्वा' भी होता है और 'ल्यप्' भी होता है।

I. क्त्वा— केवल धातु हो वा धातु के पहले 'अ' हो तो 'क्त्वा' प्रत्यय होता है; यथा— भूत्वा (होकर), अभूत्वा (न होकर), कृत्वा, अकृत्वा, पठित्वा, दृष्ट्वा ।

I. ल्यप्—धातु के पहले उपसर्ग हो वा धातु के साथ 'नञ्' को छोड़, दूसरा समास हो तो 'ल्यप्'। यथा— अनुभूय (अनुभव करके), प्रणम्य, आगत्य, कण्ठस्थीकृत्य, नम्रीभूय ।

अण् ट अच् अप् क खश् खच् कञ्, ड घञ् खल् अङ् अ तेरहो ।
केवल 'अ' सभी देते, भेद क्या है ? बताइये ।।

अण्— 'अ' रह जाता है। धातु के पूर्व कोई पद रखकर उपपद-समास करने पर ही 'अण्' प्रत्यय होता है। ('अण्' करने पर स्वर की वृद्धि भी होती है)। कुम्भ + कृ + अण् = कुम्भकार, ग्रन्थकार। तन्तु + वे + अण् = तन्तुवाय ।

ट— 'अ' रह जाता है। प्रायः कृ, सृ और चर् धातु के बाद 'ट' जोड़ते हैं। (स्वर की वृद्धि नहीं होती)। कर्मन् + कृ + ट = कर्मकर, अग्रे + सृ + ट = अग्रेसर (इसी से अंग्रेजी का Aggressor शब्द बना है), वनेचर। ('ई' जोड़ने से स्त्रीलिङ्ग)।

अच्— 'अ' रह जाता है। 'पच्' आदि धातुओं के बाद तथा इकारान्त धातुओं के बाद 'अच्'। (वृद्धि नहीं)। पच् + अच् = पच, दिव् + अच् = देव, चि + अच् = चय, जि + अच् = जय ।

अप्— 'अ' रह जाता है। ऋकारान्त धातु, उकारान्त धातु और कुछ अन्य धातुओं के बाद भी 'अप्'। कॄ + अप् = कर, स्तु + अप् = स्तव, भू + अप् = भव, ग्रह् + अप् = ग्रह ।

क— 'अ' रह जाता है। प्रायः जिस धातु के अन्तिम व्यञ्जन के पूर्व 'इ', 'उ' वा 'ऋ' हो, उस धातु के बाद, 'ज्ञा', 'प्री', 'कॄ' धातु के बाद और आकारान्त धातु के बाद 'क'। विद् + क = विद, बुध् + क = बुध, कृश् + क = कृश। ज्ञ, प्रिय, किर। प्र + ज्ञा + क = प्रज्ञ, पाद + पा + क = पादप, जलद ।

पाणिनि 'अप्' प्रत्यय करके 'ग्रह' बनाते हैं। किन्तु 'अच्' प्रत्यय से भी 'ग्रह' अवश्य वनता है। 'स्वर्' + 'अच्' = 'स्वर' होता है तथा स्वृ + अप् = स्वर होता है। इसी प्रकार निश्चय, वर, पीडा, प्रतिमा इत्यादि असंख्य शब्दों का निर्माण (एक ही कोष वा व्याकरण में ग्रथवा विभिन्न कोषों और विभिन्न व्याकरणों में) विभिन्न प्रकृति-प्रत्यय द्वारा दिखाया गया है। अतः परीक्षकों को चाहिये कि साधारण रूप से युक्तिसङ्गत प्रकृति और प्रत्यय दिखाने पर (चाहे वह प्रकृति-प्रत्यय-निर्देश किसी के जानने में अशुद्ध ही क्यों न हो) अङ्क दिया करें।

खश् तथा खच्— 'अ' रह जाता है। 'खश्' वा 'खच्' प्रत्यय जोड़ने पर धातु के पूर्व, अन्तिम अक्षर पर अनुस्वार बैठ जाता है— विधु + तुद् + खश् = विधुंतुद। अथवा पूर्वपद के बाद जिस वर्ग का अक्षर रहता है, उस वर्ग का पञ्चम अक्षर उसमें जुट जाता है। विधु + तुद् + खश् = विधुन्तुद, मित + पच् + खश् = मितम्पच। धातु के आदि में स्वर हो, तो उसके साथ 'म्' जुट जाता है। जन + एज् + णिच् + खश् = जनमेजय। स्वर भी न हो और वर्ग का अक्षर भी न हो, तो अनुस्वार जुट जाता है। प्रिय + वद् + खच् = प्रियंवद। ('खश्' और 'खच्' का भेद बताना कठिन है।)

कञ्— 'अ' रह जाता है। तद्, यद्, एतद्, इदम्, किम्, अदस्, युष्मद्, अस्मद्, भवत्, अन्य इत्यादि शब्दों के बाद दृश् धातु हो, तो कञ्। तद् + दृश् + कञ् = तादृश, यादृश, एतादृश, ईदृश, त्वादृश, युष्मादृश, मादृश, अस्मादृश, भवादृश, अन्यादृश। ('ई' जोड़कर स्त्रीलिङ्ग)।

ड— 'अ' रह जाता है। 'ड्' जब भागने लगता है, तो धातु के कुछ अंश को ले भागता है। प्रायः सप्तमी वाले पद, पञ्चमी वाले पद वा अन्य किसी पद के बाद भी जन्, गम् आदि धातुओं में 'ड' जोड़ते हैं। सरस् + जन् + ड = सरोज (सरसि जायते इति

सरोजम्)। भ्रातृज, द्विज, अनुज, अज, प्रजा। भुजग, सर्वत्रग।

['ड्' जब भागने लगा, तो 'जन्' के 'अन्' और 'गम्' के 'अम्' को लेता गया।]

घञ्— 'अ' रह जाता है। 'घञ्' से बने शब्द प्रायः पुंलिङ्ग होते हैं। 'घञ्' जोड़ने पर धातु के 'अ' का 'आ', 'इ' का 'ए', 'उ' का 'ओ', 'ऋ' का 'अर्' वा 'आर' दीख पड़ता है। रम् + घञ् = राम, दिह् + घञ् = देह, मुह् + घञ् = मोह, सम् + पृच् + घञ् = सम्पर्क, प्र + हृ + घञ् = प्रहार।

खल्— 'अ' रह जाता है। ईषत्, दुस् और सु के बाद कोई धातु हो तो 'खल्'। ईषत् + कृ + खल् = ईषत्कर (= जो थोड़े प्रयास से किया जा सके), दुष्कर (= जो कठिन प्रयास से किया जा सके), सुकर (= जो सुख से किया जा सके, अनायास किया जा सके)। इसी प्रकार ईषल्लभ, दुर्लभ, सुलभ।

अङ् तथा अ— 'अ' रह जाता है। 'अङ्' वा 'अ' से बने शब्द आकारान्त हो जाते हैं और स्त्रीलिङ्ग हो जाते हैं। पूजा, क्रीडा।

---

(१४) समास-प्रकरणम् (Compounds)

('I' चिह्नवाले अंश परमावश्यक हैं।)

I. **एकदीभावः समासः** = (विभक्तियों को हटाकर एक से अधिक पदों का) **एक पद हो जाना 'समास' कहलाता है।** यथा—मित्रस्य लाभः = **मित्रलाभः**। हरेः भक्तिः = **हरिभक्तिः**। **मित्रस्य लाभः** में 'समास' करना है। **मित्रस्य** में से 'षष्ठी' विभक्ति निकाल दी, तो **मित्र** बचा। **लाभः** में से 'प्रथमा' विभक्ति

निकाल दी, तो **लाभ** बचा। **मित्र** और **लाभ** दोनों को एक साथ कर दिया तो, **मित्रलाभ** हो गया। **मित्रलाभ** में 'प्रथमा' विभक्ति दे दी, तो **मित्रलाभः** हो गया। देखिये— मित्रस्य लाभः, 'तेन' लिखा हुआ है। अब **मित्रस्य** में से 'षष्ठी' निकालिये, तो **मित्र** बचेगा। **लाभः** में से 'प्रथमा' निकालिये, तो **लाभ** बच जायगा। तब **मित्र** और **लाभ** दोनों को सटा दीजिये, तो **मित्रलाभ** बन जायगा। अब एक **तेन** बैठा हुआ है। **तेन** 'पुंलिङ्ग' है और 'तृतीया' के 'एकवचन' का रूप है। यह **तेन** कह रहा है कि समास किया हुआ **मित्रलाभ** शब्द 'पुंलिङ्ग' तो है ही, इस **मित्रलाभ** में 'तृतीया' का 'एकवचन' जोड़ दीजिये, तो **मित्रलाभेन** हो जायगा। इसी प्रकार—मित्रस्य लाभः तस्मै = **मित्रलाभाय**। मित्रस्य लाभः तस्मात् = **मित्रलाभात्**। मित्रस्य लाभः तस्य = **मित्रलाभस्य**। मित्रस्य लाभः तस्मिन् = **मित्रलाभे**। देशस्य रक्षा = **देशरक्षा**।

सुप्सुपा-समासः— **सुप्** का अर्थ है—प्रथमा, द्वितीया आदि सातों विभक्तियाँ। **सुबन्त** का अर्थ है, जिसके अन्त में प्रथमा आदि सातों विभक्तियों में से कोई विभक्ति जुटी हुई हो, वह पद।

एक सुबन्त पद के साथ दूसरे सुबन्त पद का जो समास होता है, उसे **सुप्सुपा-समास** वा **सहसुपा-समास** वा **केवल-समास** कहते हैं। यथा—पूर्वम् भूतः इति **भूतपूर्वः**। आश्रय-भूतः, शरण-भूतः, प्रत्यक्ष-भूतः, आबाल-वृद्धम्, यथा-शक्ति-कर्त्तव्यम्, नातिशीतोष्णम्, नैकधा, वागर्थाविव, जीमूतस्येव। **इव** के साथ समास होता है, किन्तु विभक्ति का लोप नहीं होता। अतः **वागर्थौ** की 'प्रथमा' नहीं हटी और **जीमूतस्य** की 'षष्ठी' नहीं हटी। उपर्युक्त ढंग के उदाहरण आगे कहे जानेवाले किसी समास में नहीं रखे जा सकते। इसलिए ऐसे उदाहरणों के लिए एक पृथक् नाम कर दिया—**सुप्सुपा**।

अव्ययीभाव-समास (Adverbial Compounds)

I. **विभक्ति, समीप** आदि अर्थों में इन अर्थों को प्रकट कर सकने वाले **अव्यय** को रखकर जो समास किया जाता है, वह **अव्ययीभाव** (= अव्यय हो जाना) समास कहलाता है। **अव्ययीभाव** समास में प्रायः पूर्व पद के अर्थ की प्रधानता रहती है। अतएव लिखा है— 'प्रायेण पूर्व-पदार्थ-प्रधानोऽव्ययीभावः'।

अव्ययीभाव समास करने पर समस्त पद प्रायः 'अव्यय' और 'क्रिया-विशेषण' हो जाता है। अतः समस्त पद में प्रायः द्वितीया का एकवचन रहा करता है। समास करने के समय आनेवाले **अव्यय को सबसे पहले** बैठाया जाता है। जैसे— 'नगर' में सप्तमी विभक्ति जोड़ने से **नगरे** होता है। यहाँ सप्तमी विभक्ति के अर्थ में अव्ययीभाव समास करने के लिए **नगरे** में से 'सप्तमी' विभक्ति को हटा देते हैं, तो **नगर** बच जाता है। तब 'सप्तमी' के अर्थ को प्रकट करनेवाले **अधि** अव्यय को 'सप्तमी' के बदले रखकर समास कर देते हैं, तो **अधिनगर** हो जाता है। इसके बाद **अम्** जोड़ देते हैं, तब **अधिनगरम्** बन जाता है। नगरे इति **अधिनगरम्**। हरौ = **अधिहरि**, विष्णौ = **अधि-विष्णु**। 'अधिहरि', 'अधिविष्णु' आदि पदों में **अम्** नहीं लगा। कारण यह है कि 'हरि', 'विष्णु'-जैसे शब्द 'अकारान्त' नहीं हैं।

'वनस्य समीपे' के स्थान पर समास के लिए 'समीपे' के बदले **समीप** अर्थ प्रकट करनेवाले **उप** अव्यय को वन के पहले रखा और 'वनस्य' की 'षष्ठी' विभक्ति को हटा दिया, तो **उपवन** बना। **उपवन** में **अम्** जोड़ा, तो **उपवनम्** बन गया। 'हरेः समीपे' = **उपहरि**। 'विष्णोः समीपे' = **उपविष्णु**। 'उपहरि', 'उपविष्णु'-जैसे उदाहरणों में **अम्** नहीं जुटता। क्योंकि ये 'अकारान्त' शब्द नहीं हैं।

नपुंसक हो जाने के कारण **अव्ययीभाव समास** में 'दीर्घ स्वर' का 'ह्रस्व' हो जाता है— अधिगोपम्, अधिस्त्रि, अधिवधु, उपनदि, उपगु, अधिनु। (पा, स्त्री, धू, दी, गो और नौ का प, स्त्रि, धु, दि, गु और नु हो गया।)

> **विभक्त्यर्थे, समीपार्थे;** समृद्धि-व्यृद्धि-भावयोः।
> **अर्थाऽभावेऽत्यये** चैव, सम्प्रत्यनुचिते तथा ॥१॥
> **पश्चादर्थे,** शब्द-घोषे, योग्यत्वे **द्विःप्रकाशने**।
> आनुपूर्व्ये, यौगपद्ये; **अनतिक्रमणे** तथा ॥२॥
> साकल्येऽन्ते च सादृश्ये; समस्तम् अव्ययम् भवेत् ॥३॥

I. १. **विभक्ति** के अर्थ में— ग्रामे = **अधिग्रामम्**। अधिमुनि। अधिभानु। अध्यात्मम्।

I. २. **समीप** के अर्थ में— भवनस्य समीपे इति **उपभवनम्** । उपराजम् ।

३. **समृद्धि** के अर्थ में— मद्राणां समृद्धिः = **सुमद्रम्** । सुवङ्गम् । सुभारतीयम् ।

४. **व्यृद्धि** (= विगत ऋद्धि) के अर्थ में— यवनानां व्यृद्धिः = **दुर्यवनम्** । दुर्भारतीयम् ।

५. **अर्थाऽभाव** के अर्थ में— मशकानाम् अभावः = **निर्मशकम्** । निर्मक्षिकम् । निर्बाधम् ।

६. **अत्यय** (= नाश) के अर्थ में— हिमस्य अत्ययः = **अतिहिमम्** । निर्हिमम् । अतिवसन्तम् ।

७. **असम्प्रति** (= सम्प्रति अनुचित) के अर्थ में— निद्रा सम्प्रति न युज्यते इति **अतिनिद्रम्** । अतिकम्बलम् ।

I. ८. **पश्चात्** के अर्थ में— रामस्य पश्चात् = **अनुरामम्** । विष्णोः पश्चात् = **अनुविष्णु** ।

९. **शब्द-घोष** (= शब्द की ध्वनि) के अर्थ में— शिवस्य घोषः = **इतिशिवम्** । शैव-गृहे सदा **इतिशिवम्** तिष्ठति । वैष्णव-गृहे सदा इतिहरि तिष्ठति । इतिबुद्धम् । इत्यल्लम् । इतिगोडम् । कथ्थोलिक्-कुले सदा **इति-हय्लेलुइयं** तिष्ठति । (Halleluiah = हय्लेलुइया) ।

१०. **योग्यता** के अर्थ में— रूपस्य योग्यम् = **अनुरूपम्** ।

I. ११. **वीप्सा** (= दो वार कहने) के अर्थ में— दिने दिने = **प्रतिदिनम्** । प्रतिवर्षम् । प्रतिजनम् । प्रत्येकम् । प्रत्यहम्, अन्वहम् ।

I. १२. **अनतिक्रमण** के अर्थ में— शक्तिम् अनतिक्रम्य = **यथाशक्ति** । यथाऽवसरम् । यथेच्छम् । यथाबलम् ।

१३. **आनुपूर्व्य** के अर्थ में— ज्येष्ठानाम् आनुपूर्व्येण = **अनुज्येष्ठम्** । अनुक्रमम् ।

१४. **यौगपद्य** (= एक साथ ही) के अर्थ में— चक्रेण युगपत् = सचक्रम् ।

१५. **साकल्य** के अर्थ में— तृणम् अपि अपरित्यज्य = **सतृणम्** । सतृणम् अत्ति = तिनका समेत खा जाता है, सब खा जाता है; एक तिनका भी नहीं छोड़ता है । रजः अपि अपरित्यज्य = **सरजसम्** ।

१६. **अन्त** (=तक) के अर्थ में— अग्नि-ग्रन्थ-पर्यन्तम् = **साऽग्नि** । **साग्नि** अधीते । भाष्य-ग्रन्थ-पर्यन्तम् = **सभाष्यम्** ।

१७. **सादृश्य** के अर्थ में— सदृशः सख्या = **ससखि** ।

१८. **अव्ययीभाव** में भी **सह** का **स** हो जाता है—चक्रेण सह = **सचक्रम्** ।

१९. **यावत्** (=जितना वा जबतक) के साथ भी 'अव्ययीभाव' समास होता है— यावन्तः श्लोकाः तावन्तः = **यावच्छ्लोकम्** । **यावच्छ्लोकम्** अच्युत-प्रणामाः = जितने श्लोक हैं, उतने सभी विष्णु के प्रणाम हैं। यावत् तैलं तावत् = **यावत्तैलम्** । **यावत्तैलं** व्याख्यानं नृत्यं वा भवेत् ।

२०. **बहिर्**, **प्राक्** और **प्रत्यक्** इत्यादि का 'पञ्चमी' के साथ समास इच्छाधीन— ग्रामाद् बहिः = **बहिर्ग्रामम्** । समास न हुआ तो **ग्रामाद् बहिः** । नगरात् प्राक् = **प्राङ्नगरम्** । समास न हुआ तो **नगरात् प्राक्** ।

I. २१. **आङ्** (=से और तक) के साथ समास विकल्प से—समुद्रात् आ = **आसमुद्रम्** (=समुद्र तक) । **आबाल्यम्** = बाल्यकाल से, लड़कपन से।

२२. **अभि** और **प्रति** के साथ समास विकल्प से— अग्निम् अभि = **अभ्यग्नि** (अग्नि के सामने) । **प्रत्यग्नि** ।

२३. **अनु** के साथ समास (दीर्घता, समीपता तथा ओर प्रकट करने के लिए)— गङ्गायाः अनु = **अनुगङ्गम्** । **अनुगङ्गम्** वाराणसी वा पाटलिपुत्रम् । गोः अनु = **अनुगवम्** (बैल की लम्बाई के बराबर लम्बाई (दीर्घता) वाला) । वनस्य समीपम् = **अनुवनम्** । वनस्य दिशि = **अनुवनम्** (= वन की ओर) ।

I. २४. **पारे** और **मध्ये** का 'षष्ठी' के साथ अव्ययीभाव-समास विकल्प से— गङ्गायाः मध्ये = **मध्येगङ्गम्** । **पारेसमुद्रम्** । षष्ठीतत्पुरुष करके **गङ्गामध्ये** और **समुद्रपारे** भी ।

२५. **तिष्ठद्गु** प्रभृति निपातनसिद्ध— तिष्ठन्त्यः गावः यस्मिन् काले सः कालः = **तिष्ठद्गु** (=जिस समय गायें दूही जाने के लिए खड़ी रहती हैं) । आयन्त्यः गावः यस्मिन् काले = **आयतीगवम्** ।

I. २६. **अव्ययीभाव**-समास करने पर 'शरद्' इत्यादि शब्द **अकारान्त** हो जाते हैं। शरदः समीपे = **उपशरदम्** । प्रत्यक्षम्, परोक्षम् । अक्षि प्रति =

प्रत्यक्षम्, अक्ष्णोः परम् = **परोक्षम्**, अक्ष्णोः समीपम् = **समक्षम्**, अक्ष्णोः पश्चात् = **अन्वक्षम्** ।

I. २७. लक्षणा से **प्रत्यक्ष** का अर्थ 'प्रत्यक्षता' और **परोक्ष** का 'परोक्षता' भी हो सकता है। वैसी दशा में 'वाला' अर्थ प्रकट करनेवाला **अच्** प्रत्यय जोड़ दें तो प्रत्यक्ष + अच् = **प्रत्यक्ष** (= प्रत्यक्षतावाला) विशेषण। इसी प्रकार **अच्** प्रत्ययवाले **परोक्ष** का अर्थ हो जायगा 'परोक्षतावाला'। इस प्रकार के **प्रत्यक्ष** और **परोक्ष** के रूप गज, लता और फल के समान। **प्रत्यक्षः** विषयः, **प्रत्यक्षा** क्रिया, **प्रत्यक्षम्** फलम्, **प्रत्यक्षाभिः** अष्टाभिः तनुभिः प्रपन्नः शिवः वः अवतु (अभिज्ञानशाकुन्तलम्) ।

तत्पुरुषः
(उत्तर-पद-प्रधानः)

I. जिसमें उत्तर पद (= बादवाला पद) प्रधान हो, वह **तत्पुरुष** समास कहलाता है। फुलेनाप्रसादस्य पत्नी = **फुलेनाप्रसादपत्नी** ।[1]

इसमें बादवाला पद **पत्नी** प्रधान है।

प्रथमा विभक्तिवाले पदों का प्रथमा विभक्तिवाले पदों के साथ जो समास होता है, वह **कर्मधारय-समास** है। उसकी चर्चा पृष्ठ ८० पर की जायगी।

१. **द्वितीया-तत्पुरुषः** (द्वितीया छिप जाती है)— कष्टं श्रितः = **कष्टश्रितः** । सुखाऽतीतः, दुःखाऽऽपन्नः, वीरगति-प्राप्तः, ग्राम-गतः, ग्रामगमी, अन्न-बुभुक्षुः, वृक्षाऽऽरूढः (खट्वारूढः में निन्दा अर्थ में ही समास होता है), वर्षम् भोग्यः = **वर्षभोग्यः** (= सालभर भोगने योग्य) ।

२. **तृतीया-तत्पुरुषः** (तृतीया छिप जाती है)— एकेन ऊनः = **एकोनः** । धनहीनः, जलरिक्तः, गर्वशून्यः, शङ्कुलया खण्डः = **शङ्कुलाखण्डः**, वर्षपूर्वः, स्वर्ग-तुल्यः, ईश-दत्तः, शिरोधार्यम्, दध्योदनः ।

---

१. सन् १९४२ ई० के क्रान्तिमय आन्दोलन में फु० प्र० श्रीवास्तव पुलिस की गोलियों से वीर-गति को प्राप्त हो गये। उनकी पत्नी श्रीमती ताराराानी और ताराराानी की माँ डंडों से अति निर्दयतापूर्वक पीटी गयीं और जेल में डाल दी गयीं।

३. **चतुर्थी-तत्पुरुषः** (चतुर्थी छिप जाती है।)— कुण्डलाय हिरण्यम् = **कुण्ड**: **हिरण्यम्**। यूपदारु, सूत्र-तूलः, कञ्चुक-वस्त्रम्।
द्विजाय अयम् = **द्विजाऽर्थः**, भोजनाय इदम् = **भोजनार्थम्**, सेवकाय इयम् = **सेवकार्था**)—यह समास इच्छाधीन नहीं है, **नित्य** है।

४. **पञ्चमी-तत्पुरुषः** (पञ्चमी छिप जाती है)— वृक्षात् पतितः = **वृक्ष-पतितः**। चोर-भयम्, नरक-भीतिः, वृक-भीतः, बन्धन-मुक्तः।

५. **षष्ठी-तत्पुरुषः** (षष्ठी छिप जाती है)— देशस्य सेवकः = **देशसेवकः**। राजपुरुषः, नदीतीरम्, शिशु-सारल्यम्, भाव-गाम्भीर्यम्। (पुरुषस्य आयुः = **पुरुषायुषम्**)।

६. **सप्तमी-तत्पुरुषः** (सप्तमी छिप जाती है)— रणे धीरः = **रणधीरः**। अक्ष-शौण्डः, तर्क-चतुरः, क्रीडा-कुशलः। गोष्ठे श्वा = **गोष्ठश्वः** (= बथान का कुत्ता, जो आगन्तुकों पर व्यर्थ भूँका करता है। **खिल्ली उड़ानी हो तो** 'गोष्ठश्वः' = वह मनुष्य जो विना काम-धन्धा पड़ा रहे और जिस-किसी को डाँटा करे)। **तीर्थध्वाङ्क्षः** = तीर्थे ध्वाङ्क्ष इव (परिहास में 'महालोभी' के लिए प्रयुक्त होता है)। पात्रे-समितः, गेहे-शूरः, गेहे-नर्दी निपातनसिद्ध हैं।

७. **षष्ठी-तत्पुरुष** के विषय में— तुल्य अर्थ वालों के योग में 'षष्ठी' होती है और 'तृतीया' भी; किन्तु 'षष्ठी' का समास नहीं होता। 'फुलेना-प्रसाद-श्रीवास्तवस्य तुल्यः' का वा 'तारायाः समा' का समास नहीं हो संकता है। आवश्यकता हो तो तुल्यार्थक पदों के योग में तृतीया का समास कीजिये— फुलेना-प्रसाद-श्रीवास्तवेन तुल्यः = **फुलेना-प्रसाद-श्रीवास्तव**-तुल्यः, तारया समा = **तारा-समा**। पितृ-सदृशः, दुहितृ-समा।

८. निर्धारे 'षष्ठी' और 'सप्तमी' दोनों; किन्तु 'निर्धारे षष्ठी' का समास नहीं होता। जैसे, 'कवीनां श्रेष्ठः' का समास नहीं होगा। आवश्यकता हो तो 'निर्धारे सप्तमी' का समास कीजिये— कविषु श्रेष्ठः = **कविश्रेष्ठः**। नरोत्तमः। किन्तु, सर्वेषां श्वेततरः = **सर्वश्वेतः** वा सर्व-महान् कैसे ? योग्य छात्र को गुरु समझा दें।

९. **तृप्ति** अर्थ वाले पदों के योग में 'तृतीया' और 'षष्ठी' दोनों। परन्तु 'तृप्त्यर्थक-पद-योगे षष्ठी' का समास नहीं होगा। अतः 'जलस्य तृप्तः' का समास नहीं होगा। आवश्यकता हो तो तृप्त्यर्थक पदों के योग में 'तृतीया' का समास कीजिये— जलेन तृप्तः = **जलतृप्तः**। दुग्धतृप्तः, फलतृप्तः।

१०. **पूरणवाचक** संख्या के साथ 'षष्ठी' का समास नहीं होता। अतः 'छात्राणां षष्ठः' का समास नहीं।

११. **षष्ठी-तत्पुरुष** में सेना, सुरा, छाया, शाला और निशा विकल्प से 'नपुंसक' और 'एकवचन'— ब्राह्मण-सेनम् और ब्राह्मण-सेना; यव-सुरम् और यव-सुरा; भित्तिच्छायम् और भित्तिच्छाया; पाठशालम् और पाठशाला; श्व-निशम् और श्वनिशा।
किन्तु 'बहुवचन की छाया' हो तो **छाया** का 'नपुंसक एकवचन' होना अनिवार्य है। इक्षूणां छाया इति **इक्षुच्छायम्**।

१२. षष्ठी-तत्पुरुष में **नाम** हो तो कभी-कभी 'दीर्घ स्वर का ह्रस्व' हो जाता है—काल्याः दासः = कालिदासः (कवि)। नाम न हो तो कालीदासः = काली का भक्त।

१३. **षष्ठी-तत्पुरुष** में कुक्कुटी, हंसी, काकी, मृगी और छागी के बाद अण्ड, पद, शावक वा दुग्ध हो तो उपर्युक्त सभी स्त्रीलिङ्ग शब्द पुंलिङ्गवत्— कुक्कुट्याः पदम् = **कुक्कुटपदम्**। हंस-पदम्, कुक्कुटाऽण्डम्। काक-शावकः, मृग-पदम्, छागदुग्धम्। 'अज-क्षीरम्' को भी इसी गण में रख दिया जाता तो अच्छा होता। पणिनि की इच्छा के प्रति-कूल ही तो दूसरे वैयाकरणों ने हंसी और छागी को कुक्कुटी आदि के गण में तथा दुग्ध को अण्ड आदि के गण में रखा है।

I. १४. **तत्पुरुष** या **कर्मधारय** में राजन्, अहन् और सखी के रूप **गज** के समान हो जाते हैं— नराणां राजा = **नरराजः**। महाराजः, सप्ताहः, पण्डित-सखः।

I. १५. **पति** शब्द का रूप कुछ विचित्र होता है। पर षष्ठी-तत्पुरुषसमास करने पर 'मुनि' के समान— राष्ट्रस्य पतिः = **राष्ट्रपतिः**। 'पति' की तृतीया, चतुर्थी, पञ्चमी, षष्ठी और सप्तमी में पत्या, पत्ये, पत्युः, पत्युः और पत्यौ रूप होते हैं। परन्तु षष्ठी-तत्पुरुष करने पर—राष्ट्रपतिना, राष्ट्रपतये, राष्ट्रपतेः, राष्ट्रपतेः और राष्ट्रपतौ।

अलुक्-समास

समास करने पर भी विभक्ति का लुक् अर्थात् लोप न हो तो **अलुक्-समास** कहलाता है। यथा—

(क) परस्मै पदम् = **परस्मैपदम्**। परस्मैपदी धातुओं के रूप भवति, भवतः, भवन्ति के समान होते हैं। आत्मने पदम् = **आत्मनेपदम्**। आत्मनेपद वाले धातुओं के रूप लभते, लभेते, लभन्ते के समान। दोनों उदाहरणों में **चतुर्थी विभक्ति का लुक्** नहीं हुआ।

(ख) **पञ्चमी का अलुक्**—स्तोकात् मुक्तः = **स्तोकान्मुक्तः**।

(ग) निन्दा के अर्थ में **षष्ठी का अलुक्**—धूर्त्तस्य कुलम् = **धूर्त्तस्यकुलम्**। निन्दा न हो तो धूर्त्तकुलम्। दास्याः पुत्रः = **दास्याःपुत्रः** (असती का लड़का)। देवानाम् प्रियः = **देवानाम्प्रियः** (= मूर्खः)। पालि भाषा में **देवानाम्प्रियः** का अर्थ 'मूर्ख' नहीं होता। पश्यतोहरः (= देखते-देखते चुरा लेने वाला)। किन्तु **वाचस्पतिः** (= बृहस्पतिः, विधानसभा का Speaker) और **वाचोयुक्तिः** (बात की युक्ति) निन्दा अर्थ में नहीं है। का वाचो-युक्तिः ? = बात की युक्ति क्या है ?

(घ) **सप्तमी का अलुक्**— वनेचरः, सरसिजम्, कण्ठेकालः, स्तम्बेरमः, कर्णेजपः, प्रावृषिजः, शरदिजः, कालेजः, गविष्ठिरः, युधिष्ठिरः। मातरि-श्वयति इति **मातरिश्वा** (= वायुः)।

एकदेशी— जिस **अवयवी** (= Whole) का **एकदेश** (= Part) प्रकट करना हो, उसके साथ 'पूर्व', 'अपर', 'अधर' और 'उत्तर' शब्द का

समास **एकदेशी समास** कहलाता है— पूर्वं कायस्य = **पूर्वकायः**। अपरकायः, अधरकायः, उत्तरकायः। **कालवाचक** के साथ कोई भी **एकदेशवाचक** शब्द समस्त हो सकता है। पूर्वम् अह्नः = **पूर्वाह्णः**। अपराह्णः, मध्याह्नः, सायाह्नः, पूर्वरात्रः, मध्यरात्रः, पश्चिमरात्रः।

कर्मधारय-समासः (Appositional Compound)

I. १. समान विभक्ति वाला तत्पुरुष **कर्मधारय** कहलाता है। विशेष्य और विशेषण के साथ **कर्मधारय**-समास होता है—सुशीलः बालकः = **सुशील-बालकः**। लम्बः स्तम्भः = **लम्ब-स्तम्भः**। श्वेत-कञ्चुकः, श्वेत-वस्त्रम्, नील-कमलम्, पीत-शाटी। रम्य-नगरी। सन् पुरुषः = **सत्पुरुषः**। सज्जनः। महान् उक्षा = **महोक्षः**। जातोक्षः। वृद्धोक्षः = बूढ़ा बैल। निश्चितं श्रेयः = **निःश्रेयसम्**।

२. **दो रंगों** के साथ **कर्मधारय**—नीलः कृष्णः = **नीलकृष्णः**, श्वेत-रक्तः, पीत-धवलः।

३. एक 'क्त' कहे कि हाँ और दूसरा '**क्त**' कहे कि **ना**, तो दोनों का **कर्मधारय**—कृतश्च अकृतश्च = **कृताऽकृतम्**। पठिताऽपठितम्। भुक्ताऽभुक्तम्।

४. एक 'क्त' पहले कुछ **कर चुका** हो और दूसरा 'क्त' ठीक **उसके विपरीत** कर दे तो दोनों का **कर्मधारय**—पूर्वम् भुक्तम् पश्चाद् उद्वान्तम् = **भुक्तोद्वान्तम्**। पूर्वं कृष्टं पश्चात् समीकृतम् = **कृष्टसमीकृतम्** (= पहले जोता गया, पीछे हेङाया गया)। भक्षितोद्गीर्णम्, लखितप्रोञ्छितम्, स्नाताऽनुलिप्तः, दत्तगृहीतम्, भुक्तोज्झितः, पीतप्रतिबद्धः।

I. ५. **कर्मधारय** और **बहुव्रीहि में** 'स्त्रीलिङ्ग विशेषण पुंलिङ्गवत्'—हरिता लता = **हरित-लता**। पीत-शाटी, प्रथम-परीक्षा। सती रमणी = **सद्रमणी**। सती बुद्धिः = **सद्बुद्धिः** (= अच्छी बुद्धि)—**कर्मधारय**। सती बुद्धिः यस्य सः = **सद्बुद्धिः** (अच्छी बुद्धिवाला)—**बहुव्रीहि**। सतीनां बुद्धिः = **सती-बुद्धिः** (सतियों की बुद्धि)—**षष्ठी-तत्पुरुष**।

I. ६. **कर्मधारय** और **बहुव्रीहि** में 'महत्' का 'महा'—महान् पुरुषः = **महापुरुषः**।

महती सभा = **महासभा**। महत् फलम् = **महाफलम्**। महती बुद्धिः = **महाबुद्धिः** (= बड़ी बुद्धि)—**कर्मधारय**। महती बुद्धिः यस्य सः = **महाबुद्धिः** (= बड़ी बुद्धिवाला)—**बहुव्रीहि**। महतीनां बुद्धिः = **महती-बुद्धिः** (बड़ी महिलाओं की बुद्धि)—**षष्ठी-तत्पुरुष**। महतां बुद्धिः = महद्बुद्धिः (= बड़ों की बुद्धि)—**षष्ठी-तत्पुरुष**।

७. कृष्णः सर्पः = **कृष्णसर्पः** ('करैत साँप' के अर्थ में **नित्य समास है**। 'करैत साँप' अर्थ नहीं हो तो **समास नहीं** होगा)।

I. ८. 'उपमान और साधारण धर्म के साथ' **उपमान-कर्मधारय**—चन्द्र इव उज्ज्वलः = **चन्द्रोज्ज्वलः**। काककृष्णः, घनश्यामः, जलद-गम्भीरः, नवनीत-कोमलम्, दुग्ध-धवलम्, हंस-श्वेतः।

९. 'उपमान के साथ उपमेय का समास' **उपमितसमास** कहलाता है—नरः व्याघ्र इव = **नर-व्याघ्रः**। पुरुष-पुङ्गवः, पाणि-पल्लवः, कर-किसलयः।

९. (क) उपमान, उपमेय, साधारण धर्म—तीनों के रहने पर समास नहीं। अतः 'पुरुषः व्याघ्र इव शूरः' का **समास नहीं** हो सकता है।

रूपक-समासः—

I. 'उपमेय को ही उपमान मान लिया जाय' तो **रूपक-कर्मधारय-समास** होता है। (इसमें समास तोड़ने के समय 'एव' शब्द देना पड़ता है तथा हिन्दी करने पर 'रूप' या 'रूपी' शब्द देना पड़ता है)। यथा—चरणः एव कमलम् = **चरणकमलम्**। (हिन्दी करने पर 'चरण-रूप कमल' या 'चरण-रूपी कमल' अर्थ होगा)। इस उदाहरण में 'चरण' **उपमेय** है और 'कमल' **उपमान**। चरण को ही कमल मान लिया गया है। इसी प्रकार—मानस-भवनम्, संसार-सागरः, हृत्पत्रम्।

टिप्पणी— अर्थ के अनुसार समास का नाम बताया जाता है—'मुख-चन्द्रः' का अर्थ 'मुख-रूप चन्द्र' हो तो **रूपक-समास**; किन्तु 'मुख-चन्द्र' का अर्थ 'मुख चन्द्र के समान' हो तो **उपमित-समास**।

मयूर-व्यंसकाऽऽदि-समासः

मयूर-व्यंसक आदि कुछ ऐसे समस्त पद हैं, जो निपातनसिद्ध हैं। इस समास का नाम **मयूर-व्यंसकाऽऽदि** समास है। मयूरः व्यंसकः इति **मयूर-व्यंसकः**। नास्ति किञ्चन यस्य सः = **अकिञ्चनः**। उदक् च अवाक् च = **उच्चावचम्**। निश्च-प्रचम्। अन्यः राजा = **राजान्तरम्**। देशाऽन्तरम्। अन्या लता = **लतान्तरम्**। अन्यद् वनम् = **वनान्तरम्**। चिद् एव = **चिन्मात्रम्**। आहो-पुरुषिका। अहमहमिका।

नञ्-समासः (Negatvie Compound)

I. किसी 'सुबन्त पद के साथ 'न' का समास' **नञ्-समास** कहलाता है—
न लाभः = **अलाभः**। न पुण्यम् = **अपुण्यम्**। न आर्यः = **अनार्यः**। न इच्छा = **अनिच्छा**। अनैक्यम्। अनुत्साहः।

(क) 'नञ्'-समास में व्यंजन के पहले 'न' के बदले 'अ' रखते हैं। अ-लाभः, अ-धर्मः, अ-दक्षः, असुखम्, अयशः।

(ख) 'नञ्'-समास में स्वर के पूर्व 'न' के बदले 'अन्' रखते हैं। न आर्यः = **अनार्यः**। अनिच्छा, अनैक्यम्, अनश्वः, अनन्तः, अनौपचारिकम्, अनुपस्थितः।

नासत्या नमुचिः नाकः, नक्षत्रं नकुलः नखः।
नपुंसकं नपात् नक्रः, 'न' का 'अ' करते नहीं॥
वृक्षार्थे पर्वताऽर्थे च, विकल्पेन नगः अगः।

'नञ्' (= NAN) और 'NON' एक ही बात है। 'न'(= न् + अ) में से 'न्' भाग जाता है तो 'अ' बच जाता है—अ-धन्यः।

'न' (= न् + अ) उलट जाता है तो 'अन्' हो जाता है—अनुदारः। 'नञ्-समास' के नियम के ढंग पर ही अंग्रेजी में 'A' और 'AN' के व्यवहार का नियम है।

द्विगुः (Numeral Appositional Compound)

I. **संख्या-पूर्वो द्विगुः** = संख्यावाचक शब्द पूर्व में हो तो **द्विगु**। यथा—पञ्च-पात्रम्, त्रिलोकी, द्वैमातुरः, पञ्च-हस्त-प्रमाणः।

(क १) जिससे समाहार (=झुंड) का अर्थ निकलता हो वह **समाहार-द्विगु**। यह प्रायः **नपुंसक** और **एकवचन** होता है। त्रयाणां भुवनानां समाहारः = **त्रिभुवनम्**। पञ्चगवम्, सप्तधान्यम्, चतुर्युगम्, पञ्चपात्रम्, नवरात्रम्। द्वयोः आयुषोः समाहारः = **द्व्यायुषम्**, त्र्यायुषम्।

(क २) **त्रिफला** और **त्र्यनीका** को छोड़कर कुछ **समाहारद्विगु** वाले पद दीर्घ **ईकारान्त स्त्रीलिंग एकवचन**—त्रयाणां लोकानां समाहारः = **त्रिलोकी**। पञ्चशती, सप्तशती, चतुष्पदी, षट्पदी, त्रिसूत्री, सप्ताऽध्यायी, अष्टाध्यायी, त्रिपादी, पञ्चपूली (=पाँच पूलों या अँटियों का झुंड)।

(ख) जिस तत्पुरुष या बहुव्रीहि का भाव रखनेवाले द्विगु में दो पदों के अतिरिक्त एक पद और आ पड़े, वह **उत्तर-पद-परक द्विगु**—पञ्चगावः धनं यस्य सः = **पञ्च-गव-धनः**। दश-हस्त-प्रमाणः, पञ्च-जन-दृष्टम्, सप्त-नाव-प्रियः।

(ग) जिससे किसी 'तद्धित प्रत्यय' का अर्थ निकलता हो, वह **तद्धितार्थद्विगु**—दशसु कपालेषु संस्कृतः = **दश-कपालः**। पञ्चभिः गोभिः क्रीतः = **पंचगुः**। द्विगुः। सप्तभिः नौभिः क्रीतः = **सप्तनौः**। षण्णां मातॄणाम् अपत्यं, पुमान् = **षाण्मातुरः**।

'थोड़ा' अर्थ में 'ईषत्' और 'आङ्' का समास—ईषद्रक्तम्। आपिङ्गलः।
प्रशंसा अर्थ में 'सु' और 'अति' का समास—सुपुरुषः, अतिदयालुः।
निन्दा अर्थ प्रकट करनेवाले 'किं', 'कु' और 'दुस्' का समास—कुत्सितः प्रभुः = **किम्प्रभुः**, कुत्सितः राजा = **किंराजा**, किंसखा, किंगौः। कुपुरुषः, कुसंस्कारः, कुरीतिः। कुत्सिता वृषी = **कुवृषी**।[१]
दुष्कुलम्, दुष्परिणामः। (किं, कु, दुस् = खराब)। निन्दा न हो तो किंराजः, किंसखः, किंगवः।

---

१. ब्रुवन्तः सीदन्ति अस्याम् इति 'वृषी' (बोलते हुए बैठते हैं जिसपर, वह है वृषी) अर्थात् वह कुशमय आसन, जिसपर बैठकर व्रती लोग बोलते हैं। 'वृषी' की अपेक्षा कम पवित्र होने के कारण किसी आसनविशेष का नाम 'कुवृषी' हो गया। —(कुर्सी, केदारा, Chair)।

गति-समासः

किसी 'धातु' के साथ 'उरी' आदि अव्यय, 'च्वि' और 'डाच्' प्रत्यय तथा गतिसंज्ञकों का समास—उरीकृत्य, उररीकृत्य, शुक्लीकृत्य, कण्ठस्थीकृत्य, सज्जीभूय, पटपटाकृत्य, नमस्कृत्य, पुरस्कृत्य, अलंकृत्य, तिरोभूय इत्यादि ।

प्रादि-समासः (Prepositional Compound)

प्रथमा के साथ ('गत' आदि अर्थ में) 'प्र' आदि का समास—प्रगतः आचार्यः इति **प्राचार्यः** । वा प्रकृष्टः आचार्यः = **प्राचार्यः** । इसी प्रकार—प्रपितामहः, प्रमातामहः, प्रहिन्दुः, प्रमोहमदीयः । आङ्वते इति आङ् (खूब ध्वनि करने वाला) । प्रगतः आङ् = प्राङ् वा प्रकृष्टः आङ् = प्राङ् ।

(क) **द्वितीया** के साथ ('क्रान्त' आदि अर्थ में) 'अति' आदि का समास—मालाम् अतिक्रान्तः = **अतिमालः** । इसी प्रकार अतिखट्वः । अभिगतः मुखम् = **अभिमुखः** । वेलाम् उत्क्रान्तः = **उद्वेलः** । प्रतिगतः अक्षम् इति **प्रत्यक्षः** । समक्षः ।

(ख) **तृतीया** के साथ (क्रुष्ट = पुकारा गया इत्यादि अर्थ में) **अव** आदि का समास—अवक्रुष्टः कोकिलया इति **अवकोकिलः** । परिणद्धः वीरुधा = **परिवीरुत्** । सन्नद्धः वर्मणा = **संवर्म** ।

(ग) **चतुर्थी** के साथ ('ग्लान' आदि के अर्थ में) **परि** आदि का समास—परिग्लानः अध्ययनाय इति **पर्य्यध्ययनः** । उद्युक्तः संग्रामाय = **उत्संग्रामः** । अलंकुमारिः ।

(घ) **पञ्चमी** के साथ ('क्रान्त' आदि अर्थ में) **निर्** का समास—निष्क्रान्तः कौशाम्ब्याः इति **निष्कौशाम्बिः** । निर्वाराणसिः । निर्गतम् अङ्गुलिभ्यः = **निरङ्गुलम्** । उत्क्रान्तः कुलात् इति **उत्कुलः** ।

उपपद-समासः

'सुबन्त उपपद' के समीप कोई 'धातु' रखकर जो समास होता है, वह **उपपद-समास** है—कुम्भं करोति इति **कुम्भकारः** ग्रन्थकारः मालाकारः

पटकारः, सूत्रधारः, निशाकरः, प्रभाकरः, खगः, विहगः, विहङ्गः, विहङ्गमः, पतगः, भुजगः, सर्वत्रगः, जलचरः, स्थलचरः, अग्रसरः, अग्रेसरः, गिरिशः, पूर्वजः, अग्रजः, देशजः, पङ्कजम्, सरोजम्, स्तन्यपायी, उदरम्भरिः, जलशायी, उत्तरदायी, शोकाऽपहः, धनत्यागी, धनाऽपहारी, शत्रुघ्नः, मद्यपः, गुहाशयः, शिलाशयः। सहयुध्वा = साथ मिलकर (शत्रु से) लड़नेवाला। **पयोधर**-जैसे शब्दों में 'उपपद-समास' नहीं। धरति इति धरः (पकड़ने वाला)। पयस् और धर के साथ षष्ठीतत्पुरुष-समास होगा। जैसे—पयसां धरः = **पयोधरः** (= मेघः वा स्तनः)।

मध्यम-पद-लोपी

I. समास करने पर बीच में से कोई पद लुप्त हो जाय तो इसे **मध्यम-पद-लोपी समास** कहते हैं। इसी को **शाक-पार्थिवाऽऽदि** भी कहते हैं। आम्र-'नामकः' वृक्षः इति **आम्रवृक्षः**। शाक-'प्रियः' पार्थिवः = **शाकपार्थिवः**। छाया-'प्रधानः' वृक्षः = **छायावृक्षः**। दुग्ध-'मिश्रः' ओदनः = **दुग्धोदनः**। पिशितौदनः, पलाऽन्नम्। एकाऽधिकाः दश = **एकादश**। द्वादश, त्रयोदश, षोडश, अष्टादश, एकविंशतिः, द्वाविंशतिः, अष्टाविंशतिः, अष्टात्रिंशत्। गत 'एव' प्रत्यागतः = **गतप्रत्यागतः**।

I. (क) बहुव्रीहि के साथ भी **मध्यम-पद-लोपी** रहता है। यथा, उत्कण्ठितं मनः यस्य सः = **उन्मनाः**। विचलितं मनः यस्य सः = **विमनाः**। अपगतः शोकः यस्य सः = **अपशोकः**। अपभयः। उन्नमितं मुखम् अनेन सः = **उन्मुखः**। अधः कृतं मुखं येन सः = **अधोमुखः**। विपरीतं मुखं यस्य सः = **विमुखः**। विगतः अर्थः यस्मात् सः = **व्यर्थः**। अनुगतः अर्थः अस्मिन् इति **अन्वर्थः**। यथाभूतः अर्थः अस्मिन् = **यथार्थः**। निर्गतः मलः यस्मात् सः = **निर्मलः**। अभुक्तानि पर्णानि यया सा = **अपर्णा**। अविद्यमानः पुत्रः यस्य सः = अपुत्रः। अधनः।

बहुव्रीहि-समासः (Attributive Compound)

I. 'अन्य-पदार्थ-प्रधानः बहुव्रीहि-समासः'। जिस समास के करने पर समस्त पद में दीख पड़नेवाले किसी भी पद की प्रधानता न होकर किसी बाहरी

पद की प्रधानता होने लगे, वह **बहुव्रीहि-समास** कहलाता है। यथा— 'किसी **लब्धप्रतिष्ठ** को बुला लाओ' कहने पर **न** तो 'लब्ध' को बुलाने का यत्न किया जायगा, न 'प्रतिष्ठा' को; प्रत्युत 'जिसने प्रतिष्ठा पायी हो, उस मनुष्य' को बुलाने का यत्न किया जायगा। अतः **लब्धप्रतिष्ठ** में **बहुव्रीहि-समास** है। 'लब्धप्रतिष्ठ' का व्यासवाक्य होगा--'लब्ध है प्रतिष्ठा जिसके द्वारा वह'।

१. **समानाऽधिकरण-बहुव्रीहि**— 'एक से अधिक प्रथमावाले पद' समस्त कर दिये जाते हैं और 'समस्त पद किसी अन्य बाहरी पद का विशेषण' बन जाता है। **बहुव्रीहि-समास** के व्यासवाक्य में **यत्** शब्द की 'द्वितीया' से लेकर 'सप्तमी' तक का **कोई रूप** तथा **तत्** शब्द की 'प्रथमा' का **कोई रूप** प्रायः अवश्य रहता है। यथा—प्राप्तम् उदकं 'यं' सः = **प्राप्तोदकः**, 'ग्रामः' का विशेषण है। लब्धा प्रतिष्ठा 'येन' सः = **लब्ध-प्रतिष्ठः**। दत्तः उत्कोचः 'यस्मै' सः = **दत्तोत्कोचः**, (२०वीं शताब्दी के) किसी अधिकारी का विशेषण है। उद्धृतं व्यञ्जनं 'यस्मात्' सः = **उद्धृत-व्यञ्जनः**, 'कटाहः' का विशेषण है। पीतम् अम्बरं यस्य सः = **पीताम्बरः**, कृष्ण का विशेषण है। 'पीले कपड़े वाला' अर्थ न हो तो **बहुव्रीहि समास नहीं**। 'पीला कपड़ा' के अर्थ में **कर्मधारय**—पीतम् अम्बर = **पीताम्बरम्**। वीराः सैनिकाः 'यस्मिन्' सः = **वीरसैनिकः**, 'जम्बूद्वीपः' का विशेषण है।

२. **व्यधिकरण-बहुव्रीहि**— 'एक पद प्रथमावाला हो तथा अन्य पद षष्ठी-वाला वा सप्तमीवाला' हो तो भी **बहुव्रीहि-समास** हो जाता है। **सूर्यस्य** (कान्तिः) इव **कान्तिः** यस्य सः = **सूर्यकान्तिः**। चन्द्रप्रभः। **पिनाकः पाणौ** यस्य सः = **पिनाकपाणिः**। चन्द्रशेखरः।

३. 'दो दिशाओं का अन्तराल' अर्थात् बीचवाला कोण बताना हो तो दिशाओं के नामों का समास— उत्तरस्याः पूर्वस्याः च दिशः अन्तरालं दिक् = **उत्तर-पूर्वा**, दक्षिणस्याः पश्चिमायाश्च दिशः अन्तरालं दिक् = **दक्षिण-पश्चिमा**।

४. **तृतीया के साथ** 'सह' का समास तथा 'सह' का 'स' भी—शिष्येण सह वर्त्तमानः = **सशिष्यः** वा **सहशिष्यः** । ससीतः, सहलक्ष्मणः, सपुत्रः, सहानुजः, सानुजः, सपत्नीकः ।

I.५. यदि 'दो की पारस्परिक लड़ाई में दोनों के साधन भिन्न-भिन्न न हों' तो 'सप्तमीवाले' वा 'तृतीयावाले' **साधनों** के साथ **व्यतीहार-बहुव्रीहि-समास** हो जाता है-—केशेषु केशेषु धृत्वा इदं युद्धं प्रवृत्तम् = **केशाकेशि** । दन्तादन्ति । दण्डैश्च दण्डैश्च प्रहृत्य इदं युद्धं चलितम् = **दण्डादण्डि** । लगुडालगुडि, मुसलामुसलि, हस्ताहस्ति, बाहूबाहवि, मुष्टीमुष्टि । इन उदाहरणों में 'पूर्वपद का अन्तिम स्वर दीर्घ' हो गया है तथा 'समस्त पद के अन्त में ह्रस्व इकार' लग गया है । ऐसे पद अव्यय रहते हैं ।

६. **बहुव्रीहि** में 'प्र' आदि के बाद 'धातु से उत्पन्न शब्द' का लोप इच्छाधीन— प्रपतितम् पर्णं 'यस्य' सः = प्रपर्णः वा प्रपतितपर्णः । निर्मलः, निर्धनः ।

७. **बहुव्रीहि** में 'नञ्' अर्थात् 'अ' के बाद 'अस्तित्व (Existence) प्रकट करनेवाले पद का लोप' विकल्प से— अविद्यमानः पुत्रः यस्य सः = **अपुत्रः** वा **अविद्यमानपुत्रः** ।

I. ८. **बहुव्रीहि** में 'महत्' विशेषण हो तो 'महत्' का 'महा'— महान्तौ बाहू यस्य सः = **महाबाहुः** । महामतिः, महाफलः, महात्मा ।

९. **बहुव्रीहि** में 'स्त्रीलिङ्ग विशेषण पुंलिङ्गवत्'— रूपवती भार्या यस्य सः = **रूपवद्भार्यः** । चित्राः गावः यस्य सः = **चित्रगुः** । अल्पशक्तिः । किन्तु,

> प्रिया मनोज्ञा कल्याणी, सुभगा दुर्भगा स्वसा ।
> कान्ता क्षान्ता समा भक्तिः, चपला सचिवा तथा ।।
> अबला तनया वामा, दुहिता भी परे रहे ।
> पुंलिङ्गवत् नहीं होता, स्त्रीत्व-द्योती विशेषण ।।

यथा—कल्याणी प्रिया यस्य सः = **कल्याणीप्रियः** । 'कल्याण' नहीं हुआ । दृढा भक्तिः यस्य सः = **दृढाभक्तिः** ('दृढ' नहीं हुआ) । 'दृढभक्तिः'

बनाने की आवश्यकता हो तो 'सामान्ये नपुंसकम्' मानकर 'दृढं भक्तिः यस्य सः' = **दृढभक्तिः बना** लेना चाहिये । द्वित्राः, त्रि-चतुराः, पञ्चषाः, द्विदशाः के विषय में योग्य छात्रों को बताया जा सकता है ।

१०. ऋकारान्त शब्दों के बाद तथा स्त्रीलिङ्ग के दीर्घ ईकारान्तों के बाद 'क'— बहवः कर्त्तारः यस्मिन् तत् = **बहुकर्तृकम्** ('आन्दोलनम्' का विशेषण है)। कल्याणी पञ्चमी यस्मिन् सः = **कल्याणपञ्चमीकः** ('पक्षः' का विशेषण है) । उरस्, सर्पिस् आदि में 'क'—व्यूढम् उरः यस्य सः = **व्यूढोरस्कः** । प्रियसर्पिष्कः । 'इन्' वालों के साथ 'क' स्त्रीलिङ्ग में ही— बहवः वाग्मिनः यस्यां सा = **बहुवाग्मिका** ('सभा' का विशेषण है) ।

I.११. 'अस्'-भागान्त शब्दों के साथ बहुव्रीहि करने पर वेधस् के समान रूप— महामनाः, उदारचेताः, उग्रतपाः, दिवौकाः, सवयाः, महायशाः ।

११. (क) **बहुव्रीहि** में 'प्रजा' और 'मेधा' भी 'प्रजस्' और 'मेधस्' बनकर 'वेधस्' के समान—दुर्मेधाः, दुर्मेधसौ, दुर्मेधसः । इसी प्रकार सुमेधाः, अप्रजाः, सुप्रजाः ।

I. १२. **बहुव्रीहि** करने पर 'अन्' वा 'मन्'-भागान्तों के रूप प्रायः 'आत्मन्' के समान— सुपर्वन्, महात्मन्, पुष्पधन्वन्, समानधर्मन्, सहकर्मन् । किन्तु सहस्रधामन्, वीरेन्द्रनामन्, दीर्घलोमन्, सुदामन् के रूपों में कहीं-कहीं अन्तर यह होगा कि 'मनः', 'मना' और 'मनोः' के बदले 'म्नः', 'म्ना' और 'म्नोः' लिखना होगा । 'एक ही शब्द के साथ' **बहुव्रीहि-समास** हुआ तो 'धर्म' का 'धर्मन्'— क्षमा धर्म है जिसका, वह = **क्षमा-धर्मन्**, 'आत्मन्' के समान । **बहुव्रीहि** में 'धनुष्' का 'धन्वन्'— पुष्पं धनुः यस्य सः = **पुष्पधन्वा** । अधिज्यधन्वा । ('आत्मन्' के समान रूप) ।

I.१३. **बहुव्रीहि** में 'जाया' का 'जानि'—सीता जाया यस्य सः = **सीता-जानिः** । युवजानिः (मुनिवत् रूप) ।

१४. **बहुव्रीहि** में उद्, पूति, सु और सुरभि के बाद 'गन्ध' का 'गन्धि' — शोभनः गन्धः यस्य सः = **सुगन्धिः** ('वायुः' का विशेषण है) । उद्गन्धिः, पूतिगन्धिः सुरभिगन्धिः ।

'सुगन्धि' 'पुष्पम्' का विशेषण है। यदि 'गन्ध' अपने विशेष्य में, 'दूध में घी के समान' व्याप्त न हो तो 'गन्धि' नहीं। यथा— शोभनाः गन्धाः (इत्र आदि पदार्थ), यस्य सः = **सुगन्धः** ('दुकानदार' का विशेषण है)। यहाँ 'गन्ध' (इत्र आदि पदार्थ) 'दुकानदार' में पुष्प में गन्ध के समान व्याप्त नहीं है।

'गन्ध' का अर्थ 'लेश' हो तो **बहुव्रीहि** में 'गन्ध' का 'गन्धि'—घृतस्य गन्धः (= लेशः) यत्र तत् = **घृतगन्धि** (नाममात्र घीवाला)। सूपगन्धि = नाममात्र दालवाला।

I. बहुव्रीहि में 'उपमान' के बाद भी 'गन्ध' का 'गन्धि'— पद्मस्य गन्धः इव गन्धः यस्य सः = **पद्मगन्धिः**। 'मित्र' अर्थ में 'सु' के बाद तथा 'शत्रु' अर्थ में 'दुस्' के बाद **हृदय** का **हृत्**— शोभनं हृदयं यस्य सः = **सुहृत्** (मित्र)। किन्तु, **सुहृदयः** = अच्छे हृदयवाला। दुष्टं हृदयं यस्य सः = **दुर्हृत्** (शत्रु)। किन्तु, **दुर्हृदयः** = खराब हृदयवाला।

१५. बहुव्रीहि में 'सक्थि' का 'सक्थ' और 'अक्षि' का 'अक्ष'—दीर्घे सक्थिनी यस्य सः = **दीर्घसक्थः**। विशाले अक्षिणी यस्य सः = **विशालाक्षः**। जलजाक्षः, पुण्डरीकाक्षः (गज, नदी, फल के समान रूप)।

१६. बहुव्रीहि में कभी-कभी 'नासिका' का 'नस्'—उन्नता नासिका यस्य सः = **उन्नसः**। विगता नासिका यस्य सः = **विग्रः** और **विख्यः**। 'विनसः' होने देना भी उचित था।

१७. बहुव्रीहि में 'आरूढ-वृद्ध-बहु-वानरः' ('वृक्ष' का विशेषण), 'मत्त-बहु-मातङ्गम्' ('वनम्' का विशेषण)-जैसे उदाहरण भी मिलते हैं। एक विचित्र उदाहरण देखें— 'जितोत्खात-तट-द्रुमाः'। जिताः च उत्खाताः च इति **जितोत्खाताः**। तटाश्च द्रुमाश्च इति **तटद्रुमाः**। जितोत्खाताः तटद्रुमाः यस्याः सा = **जितोत्खात-तट-द्रुमा** (किसी राजधानी वा नगरी का विशेषण है)। इसका अर्थ है— जीत लिये गये और उखाड़ डाले गये तट और द्रुम वाली। अर्थात् जीत लिये गये हैं तट और उखाड़ डाले गये हैं द्रुम जिसके, वह राजधानी वा नगरी।

द्वन्द्व-समासः (Copulative Compound)

I. १. च = और। 'च' के अर्थ में **द्वन्द्व-समास** होता है। **द्वन्द्व-समास में प्रत्येक पद प्रधान** रहता है। 'प्रत्येक-पद-प्रधानो द्वन्द्वः'। रामश्च लक्ष्मणश्च = **राम-लक्ष्मणौ** । **राम-लक्ष्मण-भरत-शत्रुघ्नाः** । **राम-लक्ष्मण-भरताः** । अर्थ-धर्मौ, धर्माऽर्थौ । जाया च पतिश्च = **जायापती**, **दम्पती**, **जम्पती**— तीन रूप होते हैं। हरि-हरौ । हरि-हर-गुरवः । 'ईश-कृष्णौ' होता है; 'कृष्णेशौ' नहीं ।

२. **द्वन्द्व-समास** में 'कम स्वर वाला पहले' रहता है। अतः शिवश्च केशवश्च = **शिव-केशवौ** होता है, **केशव-शिवौ** नहीं।
द्वन्द्व में 'ह्रस्व स्वर वाला पहले' रहता है। अतः कुशश्च काशश्च = **कुश-काशौ** होगा, **काश-कुशौ** नहीं ।

बहुवचन के साथ **समाहार-द्वन्द्व** करने पर कुशाश्च काशाश्च, तेषां समाहारः = **कुशकाशम्** ।
'अधिक सम्मानित पहले' रहता है—तापसपर्वतौ, ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य-शूद्राः। 'बड़ा भाई पहले'—युधिष्ठिराऽर्जुनौ, महेन्द्रराजेन्द्रौ ।

३. 'ऋतु' और 'नक्षत्र' **समान अक्षर** वाले हों तो अपने 'क्रम के अनुसार'— हेमन्त-शिशिर-वसन्ताः, कृत्तिका-रोहिण्यौ । समान अक्षर-वाले न हों तो 'कम स्वरवाला पहले'— ग्रीष्म-वसन्तौ ।

I. 'स्त्री-वाचक पहले' रहता है— माता च पिता च = **मातापितरौ**, **मातरपितरौ** (एकशेष रहा तो **पितरौ**)। पार्वती-परमेश्वरौ, गौरी-शङ्करौ, सीता-रामौ ।

४. 'प्राण्यङ्ग', 'वादकाङ्ग' तथा 'सेनाङ्ग' का द्वन्द्व नपुंसक और एक-वचन— करौ च चरणौ च = **कर-चरणम्** । पाणि-पादम् । मार्दङ्गिक-पाणविकम् ('मृदङ्ग' बजानेवाले और 'पणव' बजानेवाले)। रथिकाऽश्वारोहम् ।

५. क्षुद्र जन्तुओं के समाहार में नपुंसक और एकवचन— दंशाश्च मशकाश्च तेषां समाहारः = **दंशमशकम्** । यूका-लिक्षम् ।

६. 'जिनकी शत्रुता कभी छूट नहीं सकती, उनके समाहार में नपुंसक एकवचन'— अहयश्च नकुलाश्च तेषां समाहारः = **अहिनकुलम्** । गो-व्याघ्रम्, काकोलूकम्, छागजम्बुकम् ।

७. अशूद्र लोग भी जिन शूद्रों को अपने पात्र में भोजन करने दे सकते हैं, उनके समाहार में नपुंसक एकवचन— गोपनापितम्, तक्षाऽयस्कारम् । चाण्डालमृतपाः का समाहार क्यों नहीं ?

८. अप्राणिवाचक का समाहार— छत्रोपानहम्, धानाशष्कुलि, कुश-काशम् ।

९. नदी और देश के नाम भिन्न लिङ्गवाले हों तो समाहार— गङ्गाशोणम्, कुरुकुरुक्षेत्रम् ।
गवाश्व आदि का विशेष नियम है—गावश्च अश्वाश्च तेषां समाहारः = गवाश्वम् । सी प्रकार दासीदासम् ।

१०. कुछ उदाहरणों में 'आकार' की मात्रा लग जाती है— माता-पुत्रौ, पिता-पुत्रौ । किन्तु, 'पितृ-पितामहौ' में 'आ' नहीं लगा । मित्रावरुणौ, सूर्याचन्द्रमसौ । कुछ में दीर्घ 'ई' की मात्रा लग जाती है—अग्नी-षोमौ, अग्नीवरुणौ । 'दिव्' का द्यावा—द्यावाभूमी, द्यावाक्षमे । किन्तु, द्यावापृथिव्यौ, दिवस्पृथिव्यौ दोनों ।

११. द्वन्द्व-समास के निम्नलिखित उदाहरण निपातन पर निर्भर करते हैं— स्त्री-पुंसौ, धेन्वनडुहौ, ऋक्-सामे, वाङ्-मनसे, अक्षि-भ्रुवम्, नक्तन्दिवम्, रात्रिन्दिवम्, अहर्दिवम्, ऋग्यजुषम् ।

एकशेष और सब गायब—

I. १. द्वन्द्व-समास के अवसर पर कोई शब्द एक ही विभक्ति में एक से अधिक वार आवे तो एक ही बच जाता है और सब नष्ट हो जाते हैं तथा बचे हुए एक शब्द में ही शब्दों की संख्या के अनुसार 'वचन' दे दिया जाता है । यथा— 'रामः गच्छति' और 'रामः गच्छति' में एक ही 'राम' शब्द दो वार एक ही विभक्ति में आया है । यहाँ एक 'राम' बच जायगा और दूसरा 'राम' नष्ट हो जायगा । बचे हुए एक राम में ही

द्विवचन जोड़कर 'रामौ' बना दिया जायगा। तब 'रामः गच्छति'-'रामः गच्छति' के बदले '**रामौ गच्छतः**' कहा जायगा। इसी प्रकार 'रामः रामः रामः' के बदले 'रामाः'।

I. २. पुरुषवाचक और स्त्रीवाचक शब्दों में से पुरुषवाचक शब्द शेष रह जाता है (यदि ग़ायब होनेवाला स्त्रीवाचक शब्द, शेष रह जानेवाले शब्द से ही बना हो तो)। बचे हुए शब्द में ही आवश्यकतानुसार द्विवचन जोड़ दिया जाता है। यथा— हंसी च हंसः च = **हंसौ**। दासौ। ब्राह्मणी च ब्राह्मणश्च = ब्राह्मणौ। किन्तु, 'ब्राह्मणी च विप्रश्च' का एकशेष नहीं हो सकता। क्योंकि स्त्रीवाचक 'ब्राह्मणी' शब्द पुरुषवाचक 'विप्र' से नहीं बना है। इसी प्रकार छात्राश्च छात्र्यश्च = छात्राः, बालकाश्च बालिकाश्च = बालकाः।

३. 'भ्रातृ' और 'स्वसृ' में से 'भ्रातृ' बच जाता है तथा 'पुत्र' और 'दुहितृ' में से 'पुत्र'। भ्राता च स्वसा च इति = **भ्रातरौ**। पुत्रश्च दुहिता च = **पुत्रौ**। (प्रथम नियम के अनुसार पुत्रश्च पुत्रश्च इति **पुत्रौ** तथा भ्राता च भ्राता च = **भ्रातरौ** भी)।

I. ४. 'मातृ' और 'पितृ' में से 'पितृ' शेष रह जाता है— माता च पिता च = **पितरौ**। **द्वन्द्व-समास** में 'मातापितरौ' भी होता है।

५. 'श्वश्रू' और 'श्वशुर' में से 'श्वशुर' शेष रह जाता है— श्वश्रूः च श्वशुरः च = **श्वशुरौ**। एकशेष नहीं करने पर 'श्वश्रूश्वशुरौ' भी।

६. 'न-पुंसक' और 'अ-नपुंसक' दोनों प्रकार के शब्द हों तो 'नपुंसक' ही शेष रह जाता है। शुक्लं च शुक्ला च शुक्लश्च = शुक्लानि। स च सा च तत् च = तानि। आश्चर्य तो यह है कि बहुवचन के बदले एक-वचन भी रह सकता है— शुक्लं च शुक्ला च शुक्लश्च = शुक्लम्। स च सा च तत् च = तत्।

समास का अर्थ है संक्षेप, न कि एक का सर्वनाश और दूसरे का बोल-बाला। अतः 'एकशेष' समास नहीं है। क्योंकि इसमें एक तो शेष रह जाता है और दूसरा मर मिटता है। 'माता-पितरौ' समास का उदाहरण है और 'पितरौ' एकशेष का।

'कु' के विषय में—

१. पुरुषः पर में हो तो, 'कु' का 'का' हो रहे 'कु' भी।
२. कापुरुषः कुपुरुषः, कुत्सितः पुरुषः बने ॥
३. पथिन् अक्षि परे हो तो, 'कु' का 'का' ही किया करो।
४. कापथः कुत्सितः पन्थाः, काक्षः काक्षः च दो हुए ॥
५. एक है 'अक्ष' से होता, दूसरा 'अक्षि' से बना।
६. 'कर्मधारय'-समासे, 'कु' का 'कत्' हो स्वरे परे ॥
७. कुत्सितोऽश्वः कदश्वः हो, कदाचारः कदेडकः।
८. कदुलूकः कदन्नं च, कदुष्ट्रः च कदाकृतिः ॥
९. रथ वद त्रि हों परे, 'कु' का 'कत्' हो च कद्रथः।
१०. कद्वदः कत्त्रयः होता, 'कत्तृणम्' क्यों यहाँ हुआ ?
११. ईषदर्थे 'कु' का 'का' हो, काजलं काम्ल देख लो।
१२. ईषद् अर्थे 'कु' है भाई, अतः काम्ल में 'कत्' नहीं ॥
१३. 'उष्ण' शब्द परे हो तो, 'का' 'कत्' 'कव' हुआ करे।
१४. कोष्णं कदुष्णं कवोष्णम्, ईषदुष्णं बुझो इसे ॥

I. **काम** और **मनस्** के पहले 'तुम्' का 'म्' लुप्त—गन्तुम् वा गन्तुं कामः यस्य सः = **गन्तुकामः** (= जाने की कामनावाला)। अध्येतुम् वा अध्येतुं मनः यस्य सः = अध्येतुमनाः (पढ़ने का मनवाला)। 'वेधस्' के समान रूप।

कुछ अनत्यावश्यक बातें—

द्विः गताः आपः अस्मिन् इति द्वीपः, द्वीपम्। अन्तर्गताः आपः अत्र इति अन्तरीपम्। प्रतीपम् (= प्रतिकूल)। समीपम्। अनुगताः आपः यत्र = **अनूपः** (दलदल भूमि, कच्छ वा किसी देश का नाम)। आपः का अर्थ है 'जलानि'। अनुलोमम्, प्रतिलोमम्। द्वे भूम्यौ यत्र सः = **द्विभूमः** (= द्वितल)—'प्रासादः' का विशेषण। पञ्च नद्यः यत्र सः = **पञ्चनदः** (पंजाब)। गवाम् अक्षि इव = **गवाक्षः** (खिड़की)। पद्मं नाभौ यस्य सः = **पद्मनाभः**। अन्धं तमः = **अन्धतमसम्**। ब्रह्मवर्चसम्। पद्भ्याम् अजति = **पदातिः**। पद्भ्यां कषितुं शीलम् अस्य = **पत्काषी** (पैर घसीटने-

वाला, पैदल चलनेवाला)। पदाहतिः = **पद्धतिः**। उदधिः = समुद्रः, घटः। वार्धिः = समुद्र, बाल्टी। उदवीवधः = जल ढोने के लिए काँवर, बँहगी। उदमन्थः, उदकमन्थः। भ्रूभङ्गः। किन्तु, भ्रूकुंसः, भ्रुकुंसः और भ्रकुंसः। भ्रूकुटिः, भ्रुकुटिः और भ्रकुटिः। हृदयस्य प्रियम् = हृद्यम्। हृदयस्य इदम् = हार्द्दम्। हृदयरोगः, हृद्रोगः। सत्यङ्कारः। अगदङ्कारः। तिमिङ्गिलः, तिमिङ्गिलगिलः। उष्णङ्करणम्। भद्रङ्करणम्। रात्रिञ्चरः, रात्रिचरः। समानं ज्योतिः यस्य सः = **सज्योतिः**। सनाभिः। सनामा। सगोत्रः। सरूपः। सवर्णः। सवयाः। सबन्धुः। सदृक्। सदृशः। सदृक्षः। सपक्षः। सजातीयः। सधर्मा। समानः ब्रह्मचारी = **सब्रह्मचारी** (एक ब्रह्मचारी वेद की जिस शाखावाला है, दूसरा ब्रह्मचारी भी उसी शाखावाला हो तो वे परस्पर सब्रह्मचारी कहलायँगे)। सतीर्थ्यः = समान तीर्थ (= गुरु) से पढ़नेवाला, एक गुरु के सभी चेले 'सतीर्थ्य' कहलाते हैं। सोदर्यः, समानोदर्यः (सोदरः, सहोदरः)। 'राम' से 'रामीय' के समान 'अन्य' से 'अन्यीय' होना चाहिये था। किन्तु 'अन्यदीय' होता है। पृषत् उदर = पृषदुदर न होकर पृषोदर। पृषतः उदरम् = **पृषोदरम्** (= पवन)। पृषन्ति उदरे यस्य सः = **पृषोदरः** (= मेघः)। वारिवाहक = जल पहुँचानेवाला वा ढोनेवाला किन्तु, वलाहक = मेघ। जीवनस्य (जल का) मूतः (थैला) = **जीमूतः** (= मेघ)। गूढः आत्मा यस्य सः = **गूढोत्मा**। हन्ति (= मजे की चाल चलता है) इति **हंसः** अथवा हसति (= हँसता है वा सदा चमकता रहता है) इति **हंसः**। हिनस्ति (= हिंसा करता है) इति 'हिंसः' होना चाहिये, किन्तु अक्षर उलट गये। 'ह' पीछे चला गया और 'स' आगे चला आया तो हिंसः के बदले **सिंहः** हो गया। श्मानः (= शव) शेरते अत्र = **श्मशानम्**। उर्ध्वं खं लुनाति इति **उलूखलम्**। पिशितम् आचामति = **पिशाचः**। ब्रुवन्तः अस्यां सीदन्ति इति = **वृसी**। मयते इति **मयूरः** वा मह्यां रौति इति **मयूरः**।

भवेद् वर्णाऽऽगमाद् हंसः, सिंहो वर्णविपर्ययात्।

गूढोत्मा वर्णविकृतेः, वर्णनाशात् पृषोदरम्॥

'अ' का 'आ', 'इ' का 'ई'—उपानह वा उपानत्=जूता, पादुका। प्रावृष् वा प्रावृट्=वर्षा। मर्माविध् वा मर्मावित्। मृगाविध् (=व्याध)। दन्तावलः (=हाथी)। कृषीवलः (=कृषक)। 'प्रति' और 'परि' का दीर्घ ईकार **विकल्प** से—परिवाद, परीवाद। प्रतिकार, प्रतीकार। परिवाह, परीवाह। बहुत स्थानों में 'स' टपक पड़ता है। आङ् + चर् धातु से **आचर्य** (=आचरणीय, अच्छा)। आङ् + चर् से **आश्चर्य** (=गजब)। अवस्करः=कूड़ा, विष्ठा आदि। अवकरः =बुहारन, कूड़ा। कुत्सितम् वर्चः=वर्चस्कम् (=अन्न का मल, फटकन, विष्ठा)। मस्करः=बाँस। मकरः=घड़ियाल। मकरी=समुद्र। मस्करी =संन्यासी। तत् करोति इति **तस्करः**। वृहतां पतिः=**वृहस्पतिः**। वनस्पतिः=विना फूल के ही फलनेवाले वृक्ष—अश्वत्थ, वट आदि; लता, सोम, पेड़-पौधा, संन्यासी, फाँसी की टिकटी इत्यादि। आस्पदम्= प्रतिष्ठा, कुलोपाधि, स्थान, पद। गोष्पदम्। गोः पदम्=**गोपदम्** भी होता है।

टिप्पणी— जीमूत—'जी' (=बुढ़ापा) द्वारा 'मूत' (बँधा हुआ)= जीमूत। जयति नभः=**जीमूतः**। वा जीयते वायुना इति **जीमूतः**। जिज्ञासु छात्र को निम्नलिखित उदाहरणों के विषय में बताया जा सकता है—पुङ्गवः, मुनि-पुङ्गवः, द्विज-वृन्दारकः, द्विज-नागः, तापस-कुञ्जरः, गो-मतल्लिका, गो-मचर्चिका, पण्डितोद्धः, पण्डित-तल्लजः, पण्डित-प्रकाण्डम् (Pandit the praise-worthy)। 'प्रकाण्ड-पण्डितः' नहीं होता है। यदि कहीं 'प्रकाण्ड-पण्डितः' मिल जाय तो उसका अर्थ होगा 'प्रकृष्ट काण्डवाला पण्डित'।

दो परमावश्यक बातें (जो सभी भारतीय भाषाओं के लिए परमोपयोगी हैं)— 'अस्'-भागान्त शब्दों के बाद कोई शब्द रखकर समास करने पर 'अस्'-भागान्त शब्दों में कहीं ओकार दीख पड़ता है और कहीं विसर्ग। यथा—मनोगत, मनोरञ्जन, मनोविनोद, मनोभाव, चेतोहर, वयोगत, पयोमुख, तपोनिष्ठ, अर्शोरोग, नभोमण्डल, सरोविहार, छन्दोभङ्ग, छन्दःशास्त्र, मनःकष्ट, मनःपूत, वयःक्रम, पयःपान।

I. बात यह है कि 'मनसः विनोदः' के साथ समास करने चले तो 'मनसः' की **षष्ठी** निकाल दी। तब 'मनस्' बच गया। फिर 'विनोदः' की **प्रथमा** निकाल दी तो 'विनोद' बच गया। अब 'मनस्' और 'विनोद' दोनों को एकत्र करने पर 'मनस् विनोद' हो गया। 'मनस्+विनोद' की दशा में 'स्' का 'विसर्ग' कर दिया तो 'मनःविनोद' हो गया। 'मनः+विनोद' की दशा में 'विसर्ग का ओकार' हो गया तो 'मनोविनोद' हो गया। 'मनोविनोद' में प्रथमा विभक्ति जोड़ने पर 'मनोविनोदः' बन गया। जहाँ 'विसर्ग' का ओकार करने का नियम काम नहीं करता, वहाँ विसर्ग ही रह जाता है। जैसे—छन्दःशास्त्रम्, मनःकष्टम् आदि।

I. 'अन्'-भागान्त वा 'इन्'-भागान्त शब्दों के बाद कोई शब्द रखकर समास करने पर 'न्' का लोप हो जाता है और न तो 'राजा' इत्यादि का दीर्घ 'आकार' दीख पड़ता है और न 'गुणी' इत्यादि का दीर्घ 'ईकार'। यथा—राजा का पुत्र = राजपुत्र। आत्मा का निवेदन = आत्मनिवेदन। गुणी लोगों का गण = गुणिगण।

देखिये— 'राज्ञः पुत्रः' के साथ समास करने चले तो 'राज्ञः' की **षष्ठी** निकाल दी, तब 'राजन्' हो गया। 'पुत्रः' की **प्रथमा** निकाल दी तो 'पुत्र' बच गया। अब 'राजन् और 'पुत्र' दोनों को एक साथ कर दिया तो 'राजन् पुत्र' हो गया। इसके बाद 'न्' का लोप कर दिया तो 'राजपुत्र' बन गया। 'राजपुत्र' में **प्रथमा** जोड़ दी तो 'राजपुत्रः' सिद्ध हो गया। इसी प्रकार 'शर्मकृतम्', 'वर्मरचितम्', अध्यात्म-विद्या, ब्रह्मज्ञानम्।

'गुणिन्' के समान जिनके रूप चलते हैं, वे 'इन्'-भागान्त शब्द कहे जाते हैं। 'इन्'-भागान्तों के 'न्' का लोप देखिये। 'विद्यार्थिनां वृन्दम्' का समास करना होगा तो 'विद्यार्थिनाम्' में से **षष्ठी** निकाल देंगे तो 'विद्यार्थिन्' बच जायगा। 'वृन्दम्' में से **प्रथमा** निकाल देंगे तो 'वृन्द' बच जायगा। 'विद्यार्थिन्' और 'वृन्द' दोनों को एकत्र कर देने पर 'विद्यार्थिन् वृन्द' हो जायगा। 'विद्यार्थिन् वृन्द' में से 'न्' का लोप कर देने पर 'विद्यार्थि-वृन्द' बन जायगा। 'विद्यार्थिवृन्द' में प्रथमा

जोड़ देने पर 'विद्यार्थिवृन्दम्' सिद्ध हो जायगा। इसी प्रकार विद्यार्थि-जीवनम्, गुणिगणः, धनिपुत्रः, ज्ञानिविचारः।
छात्रों को असुविधा न हो, इसी विचार से मेरे परामर्श के अनुसार 'वृहत् हिन्दी-कोष' में गुणित्, धनिन्, विद्यार्थिन् आदि रूप छापे गये हैं।

---

(१५) षत्व और (१६) णत्व

'षत्व'-विधानम् (संक्षिप्ततमम्)

I. 'ष' कदापि नहीं होता, अ से आ से परे 'स' का।
अ**सि** युष्मा**सु** अस्मा**सु**, किन्तु राज**सु** पूज्य**से**॥

I. **इ उ ऋ** ए तथा ऐ **ओ, औ** निःस्वर **क** से परे।
'स' का 'ष' है सदा होता, नदी**षु** च वधू**षु** च॥
नृ**षु** गजे**षु** मा भै**षीः**, गो**षु** नौ**षु** च वा**क्षु** च।
स्तौ**षि** नौ**षि** तथा व**क्षि**, शक्नो**षि** च करो**षि** च॥

'णत्व'-विधानम् (संक्षिप्ततमम्)

I. र ष ऋ से परे 'न' का, 'ण' करो अविलम्ब ही।
चतु**र्णा**म् एव भ्रातृणां, दो**ष्णा** युद्धम् भविष्यति॥
तिसृणां चैव मातृणां, पूष्णः तृष्णा नृणां घृणा।
चतु**र्ण**वति-दातृ**णा**म्, र ष **ऋ** से 'न' का 'ण' है॥

I. र ष ऋ औ 'न' के बीच, दूसरा वर्ण आ पड़े।
तो 'न' का 'ण' नहीं होता, अर्थे**न** च ऋते**न** च॥
तोषदेन च पुष्टा**नां**, 'न' का 'ण' है नहीं हुआ।

किन्तु,

I. स्वर कवर्ग पवर्ग, य व ह अनुस्वार भी॥
बीच में पड़ जाने से, 'न' का 'ण' रुकता नहीं।
नराणां वारिणा चैव, **गुरुणा** च **नरेण** च॥

वर्गेण च सुगर्वेण, सर्पेण च रयेण च।
ब्रह्मणा वृंहणं चैव, कर्मणां रक्षणं कुरु ॥
वृषभेण च दक्षेण, नृपेण ऋभुणा च किम्।
I. 'ण' कदापि नहीं होता, हल् पदान्त 'न' का कहीं ॥
नरान् दातृन् गुरून् भ्रातृन्, हरीन् कुर्वन् में देख लो।

---

(१७) पद-व्यवस्था

(परस्मैपद और आत्मनेपद की व्यवस्था)

परस्मैपदी धातु के रूप भवति, भवतः, भवन्ति आदि के समान।

आत्मनेपदी धातु के रूप लभते, लभेते, लभन्ते आदि के समान।

उभयपदी धातु के रूप भवति और लभते दोनों के समान।

'आत्मने' का अर्थ है 'अपने लिए' तथा 'परस्मै' का अर्थ है 'दूसरे के लिए'। अतः कुछ लोग कहते हैं कि **उभयपदी** धातु के **परस्मैपदी** रूप का प्रयोग तब करना चाहिये जब क्रिया **दूसरे के लिए** की जा रही हो और **आत्मनेपदी** रूप का प्रयोग तब करना चाहिये जब क्रिया **अपने लिए** की जा रही हो। यथा— ब्राह्मणः दुर्गा-पाठं 'करोति'=ब्राह्मण दुर्गापाठ 'करता है' (यजमान के लिए)। और, ब्राह्मणः दुर्गापाठं 'कुरुते'=ब्राह्मण दुर्गापाठ 'करता है' (अपने लिए)। परन्तु यह नियम न कभी चला और न आज चल सकता है। यथा— 'बाल-धी-वृद्धि-सिद्धये सारस्वतीम् ऋजुं प्रक्रियां **कुर्वे**'— अनुभूतिस्वरूपाऽऽचार्य ने लिखा है; 'पाणिनीय-प्रवेशाय लघु-सिद्धान्त-कौमुदीं **करोमि**'—वरदराजभट्टाचार्य ने लिखा है।

परस्मैपद-व्यवस्था—

१. किसी-किसी धातु का 'पद' दशाविशेष में बदल भी जाता है। यथा— उभयपदी 'कृ' **अनु** और परा के बाद **परस्मैपदी**— अनुकरोति, पराकरोति।

२. उभयपदी 'क्षिप्' **अभि**, **प्रति** और **अति** के बाद **परस्मैपदी**— अभिक्षिपति, प्रतिक्षिपति, अतिक्षिपति।

३. उभयपदी 'वह्' **प्र** के बाद **परस्मैपदी**— प्रवहति।

I. ४. आत्मनेपदी 'रम्' **वि**, **आङ्** और **परि** के बाद **परस्मैपदी**— विरमति, परिरमति, आरमति।

(क) प्रेरणार्थकता छिपी हो तो **उप** के बाद भी 'रम्' **परस्मैपदी**— उपरमति = उपरमयति।

(ख) निवर्त्तते अर्थ हो तो उपरमति और उपरमते दोनों।

I. ५. उभयपदी 'दा' **वि** और **आङ्** दोनों के साथ हो, तो खोल देना, **बा देना** अर्थात् फैलाना अर्थ में **परस्मैपदी**— मुखं 'व्याददाति', विपादिकां 'व्याददाति'। नदी कूलं 'व्याददाति'। दूसरे का मुख बाना हो, तो **आत्मनेपदी**— पिपीलिका पतङ्गस्य मुखं 'व्यादत्ते'।

I. ६. 'बुध्, युध्, नश्, जन्, इङ्, प्रु, द्रु और स्रु' के तथा निगरणार्थक तथा चलनार्थक के णिजन्तरूप **परस्मैपद** में ही होते हैं। कर्त्ता चेतनावाला हो तो अकर्मक धातुओं के भी णिजन्तरूप परस्मैपद में ही होते हैं। उदाहरण ३७वें पृष्ठ पर देखें।

I. ७. 'ज्ञा' धातु परस्मैपदी ही घोषित है। किन्तु **आत्मनेपद** में भी विना रोक-टोक प्रचलित है। उसी प्रकार **आत्मनेपदी** 'ऊह्' धातु को **परस्मैपद** में भी व्यवहृत करने की अनुमति देता हूँ। वैयाकरण लोग 'अनुक्तम् अपि **ऊहति** पण्डितो जनः' में व्यवहृत 'ऊहति' की सिद्धि प्रकारान्तर से करने का कष्ट न करें।

I. ८. 'भुज्' धातु पालन करना के अर्थ में **परस्मैपदी**— महीपतिः महीम् 'भुनक्ति' (= पालयति)। किन्तु खाना, भोगना, अनुभव करना अर्थ में 'भुज्' **आत्मनेपदी**—भुङ्क्ते।

I. ९. आत्मनेपदी 'मृ' (= मरना) लिट्, लुट्, लृट्, लृङ् तथा सनन्त में **परस्मैपदी**— ममार, मर्त्ता, मरिष्यति, अमरिष्यत्, मुमूर्षति।

१०. आत्मनेपदी 'वृत्' और 'वृध्' लृट्, लृङ्, लुङ् और सनन्त में **परस्मैपदी भी**, **आत्मनेपदी भी**— वृत्—वर्त्स्यति, वर्त्तिष्यते, अवर्त्स्यत्, अवर्त्तिष्यत। अवृतत्, अवर्त्तिष्ट। विवृत्सति, विवर्त्तिषते।

'वृध्'— वर्त्स्यति, वर्धिष्यते। अवर्त्स्यत्, अवर्धिष्यत। अवृधत्, अवर्धिष्ट। विवृत्सति, विवर्धिषते।

आत्मनेपद-विधानम्—

१. कर्मवाच्य और भाववाच्य में सभी धातुओं के रूप आतमनेपद में ही होते हैं।

I. २. परस्मैपदी 'विश्' (=घुसना) धातु **नि** के बाद **आत्मनेपदी**— सानन्दं क्रान्तिमार्गं 'निविशते स्म' वा 'अभिनिविशते स्म' श्रीविद्याभूषणशुक्लः।

I. ३. उभयपदी 'क्री' (=खरीदना) **परि, वि** और **अव** के बाद **आत्मनेपदी**— विक्रीणीते, परिक्रीणीते, अवक्रीणीते। यदा क्रेता क्रीणाति तदा विक्रेता 'विक्रीणीते'।

I. ४. परस्मैपदी 'जि' (=जीतना) **वि** और **परा** के बाद **आत्मनेपदी**— सत्यं 'विजयते' ध्रुवम्। वीरः शत्रुम् 'पराजयते'। **वि** और **परा** के विना 'जयते' आजकल अशुद्ध है। पर आर्ष होने के कारण अर्थात् आजकल के व्याकरणों के बनने के पहले का वाक्य होने के कारण 'सत्यमेव जयते' में आत्मनेपद मान्य है।

I. ५. उभयपदी 'दा' **आङ्** के बाद **आत्मनेपदी**— रविः रसम् 'आदत्ते' (=लेता है)।

(क) उभयपदी 'दा' **वि** और **आङ्** दोनों के साथ हो, तो खोल देना, बा देना अर्थात् फैला देना अर्थ में **परस्मैपदी**— मुखं 'व्याददाति' (=मुँह बाता है), विपादिकां 'व्याददाति'। नदी कूलं 'व्याददाति'। दूसरे का मुख बाना हो, तो **आत्मनेपदी**—पिपीलिका पतङ्गस्य मुखं 'व्यादत्ते'।

६. परस्मैपदी 'क्रीड्' (खेलना) **सम्** के वाद 'आवाज करना' अर्थ न हो, तो **आत्मनेपदी**—संक्रीडते। 'क्रीड्' (खेलना) **सम्** के बाद कूजन (आवाज करना) अर्थ में **परस्मैपदी**—रथचक्रं 'सक्रीडति' (=चों-चों करता है)।

I. ७. परस्मैपदी 'प्रच्छ्' (=पूछना) **आङ्** के वाद **विदा लेना** अर्थ में **आत्मनेपदी**— सैनिकः मातरम् 'आपृच्छते' (माँ से विदा लेता है)।

८. परस्मैपदी 'स्था' (ठहरना) **आशय-प्रकाशन** और **निर्भर कर जाना** अर्थ में **आत्मनेपदी**— संकोची भिक्षुकः दात्रे 'तिष्ठते'। **दुर्योधनः** किङ्कर्त्तव्य-निर्णयार्थं सदा कर्णादिषु 'तिष्ठते' (=निर्भर करता है)।

I. (क) परस्मैपदी 'स्था' **सम्, अव, प्र** और **वि** के बाद **आत्मनेपदी**— सन्तिष्ठते, प्रतिष्ठते (=प्रस्थानं करोति), अवतिष्ठते (=रहता है, अवस्थित है, is situated), वितिष्ठते।

I. (ख) **उत्**-पूर्वक 'स्था' **उठना, आमदनी होना** अर्थ में न हो, तो **आत्मनेपदी**— देशः 'उत्तिष्ठते' (=उन्नतिं करोति), ज्ञानी मुक्तौ 'उत्तिष्ठते'। किन्तु, आसनात् 'उत्तिष्ठति' (=उठता है)। ग्रामात् शतम् 'उत्तिष्ठति' (=उठता है, आमदनी होती है) में **परस्मैपदी**।

(ग) 'उपान्मन्त्रकरणे', 'उपाद्देवपूजा-सङ्गतिकरण-मित्रकरण-पथिषु, वा लिप्सायाम्' के स्थान पर वर्त्तमान युग में '**उप**'-पूर्वक '**स्था**' के लिए निम्नलिखित ढंग से नियम बनाना चाहिये—**उपस्थान** (पूजन) **करना, मिलना, मित्र बनाना** और **रास्ते का पहुँचना** अर्थों में '**उप**'-पूर्वक 'स्था' **आत्मनेपदी**—गायत्र्या सूर्यम् 'उपतिष्ठते' (=उपस्थान करता है)। गङ्गा यमुनाम् 'उपतिष्ठते' (=मिलती है)। लालबहादुरशास्त्री अयूबखानम् उपतिष्ठते (=मित्र बनाते हैं)। अयं राजमार्गः कलिकाताम् उपतिष्ठते (=पहुँचता है)। किन्तु, 'उपस्थित होना' अर्थ में **उप**-पूर्वक 'स्था' आत्मनेपदी भी, **परस्मैपदी** भी—छात्रः समये गुरुम् 'उपतिष्ठते' वा 'उपतिष्ठति'। श्रमिकः प्रतिदिनम् समये उपतिष्ठते वा उपतिष्ठति। अन्तिम उदाहरण 'वा लिप्सायामिति वक्तव्यम्' तथा 'अकर्मकाच्च' के विरुद्ध है। अतः 'लिप्सा' का भाव नहीं रहने पर 'उपतिष्ठति' लिखना बहुतों के मत में अशुद्ध है।

९. परस्मैपदी 'तप्' **उद्** और **वि** के बाद 'दीप्यते' के अर्थ में **आत्मनेपदी**— उत्तपते, वितपते।

अपना अङ्ग तप्त करना हो, तो 'तप्त करना' अर्थ में **आत्मनेपदी**— शीतार्त्तः निज-करम् 'उत्तपते' वा 'वितपते'। दूसरे का अङ्ग तप्त करना हो वा दूसरा कुछ तप्त करना हो, तो **परस्मैपदी**—चैत्रः मैत्रस्य पाणिम् 'उत्तपति'। स्वर्णकारः सुवर्णम् 'उत्तपति'।

१०. **आङ्**-पूर्वक 'हन्' का अर्थ 'टकराना' हो वा अपना 'अङ्ग पीटना' या 'घायल करना' हो, तो **आङ्**-पूर्वक 'हन्' **आत्मनेपदी**—अन्धः यानेन 'आहते' (=सवारी से टकराता है)। किंकर्त्तव्यविमूढो जनः स्व-मस्तकम् 'आहते' (=अपना कपार पीटता है)। दूसरे का अङ्ग पीटना हो या घायल करना हो, तो **आङ्**-पूर्वक 'हन्' **परस्मैपदी**—अष्टमी गुरुम् 'आहन्ति' (=गुरु को घायल करती है)। भारवि के 'आजघ्ने विषमविलोचनस्य वक्षः' में 'आजघ्ने' पाणिनि-विरुद्ध है। भट्टि के 'आहध्वं मा रघूत्तमम्' में 'आहध्वं' अपाणिनीय है।

११ **आङ्**-पूर्वक 'यम्' का अर्थ 'फैलना' या 'लमरना' हो अथवा 'अपना अङ्ग फैलाना वा लमराना' हो तो **आङ्**-पूर्वक 'यम्' **आत्मनेपदी**—वटवृक्षः 'आयच्छते' (=फैलता है)। पर-गृहे भोजन-काले भोजन-भट्टस्य उदरं घर्षकवत् 'आयच्छते' (=रबर के समान लमरता है)। हनुमान् पुच्छम् 'आयच्छते' (=फैलाता है)। निद्रा-त्यागाऽनन्तरं हरिणः अङ्गम् 'आयच्छते' (=लमराता है)। किन्तु, कूपात् रज्जुम् 'आयच्छति' (=निकालता है)। बालकस्य हस्तम् 'आयच्छति' (फैलाता है)। **सम्**, **उद्** और **आङ्** के बाद 'यम्' **आत्मनेपदी**—सीता तण्डुलान् 'संयच्छते' (=बटोरती है या एकत्र करती है)। वस्त्रम् 'आयच्छते' (=पहनता है)। भार-वाहकः भारम् 'उद्यच्छते' (=उठाता है)।

ग्रन्थ कर्म हो तो **उद्+'यम्' परस्मैपदी**—वेदम् 'उद्यच्छति' (=वेद के लिए **उद्यम** करता है)। 'अपना बना लेना' और 'विवाह करना' अर्थ में **उप+'यम्' आत्मनेपदी**—विद्याम् 'उपयच्छते' (=स्वीकार करता है)। भार्याम् 'उपयच्छते' (=विवाह करता है)। आर्यत्वाऽभिमानी हितलरः (हिटलर) तिरोधानात् पूर्वं भार्याम् 'उपयेमे'। युग-भीष्मः नेता कदापि कामपि 'उपयेमे' इति न विश्वसिमि। रामः सीताम् 'उपायत' वा 'उपायंस्त'। कोई दुष्ट दूसरे की स्त्री को अपनी बनावे तो **उप+'यम्' आत्मनेपदी** नहीं—दुष्टः पर-स्त्रियम् उपयच्छति।

१२. ज्ञा, श्रु, स्मृ और दृश् **सन्** जोड़ने पर **आत्मनेपदी**— सन्नन्त-प्रकरण में उदाहरण देखें।

१३. परस्मैपदी 'युज्' **प्र, उप, उद्** और **नि** के बाद **आत्मनेपदी**—प्रयुङ्क्ते, उपयुङ्क्ते, उद्युङ्क्ते, नियुङ्क्ते। यज्ञ-पात्र रहने पर **परस्मैपदी**—पात्राणि 'प्रयुणक्ति'।

I. १४. 'खाना' और 'भोगना' अर्थ में 'भुज्' धातु **आत्मनेपदी**—'रोटिकां भुङ्क्ते' (खाता है)। नरः निज-कर्म-फलं 'भुङ्क्ते' (भोगता है)। पृथिवीं 'बुभुजे' राजा। रक्षा करना अर्थ में 'भुज्' **परस्मैपदी**—भूपालः महीं 'भुनक्ति' (रक्षति)।

१५. परस्मैपदी 'गम्' मिलना, सङ्गत होना, सुसङ्गत होना, नहीं टकराना अर्थों में अकर्मक होकर **आत्मनेपदी**—अपराजिता सङ्गिनीभिः 'सङ्गच्छते' (=मिलती है)। तव वाक्यानि परस्परं 'संगच्छन्ते' (=सुसङ्गत हैं, टकराते नहीं हैं)। दूसरे अर्थ में **परस्मैपदी**—बालकाः क्रीडाक्षेत्रं 'सङ्गच्छन्ति' (=जाते हैं)।

१६. परस्मैपदी 'ऋच्छ्' 'जाना' अर्थ में सकर्मक है। किन्तु, मूढ़ 'होना' और 'कड़ा होना' अर्थ में अकर्मक है। **सम्** के बाद **'ऋच्छ्'** बटुरना, इकट्ठा होना अर्थ में अकर्मक हो जाता है और **आत्मनेपदी** हो जाता है—आकाशात् अनेकेषु क्षेत्रेषु पतितं जलं गर्त्ते 'समृच्छते' (बटुर जाता है)। **सम्** + 'ऋच्छ्' बटोरना अर्थ में सकर्मक होने के कारण **परस्मैपदी**—वाटिका-पालः वृक्षेभ्यः पतितानि आम्राणि 'समृच्छति' (=बटोरता है)।

१७. परस्मैपदी 'दृश्' (=देखना) **सम्** के बाद ताकना वा घूरना या गुरेरना अर्थ में **आत्मनेपदी**—शिशुः मिष्टान्नोपरि 'सम्पश्यते' (ताकता है)।

१८. परस्मैपदी 'श्रु' **सम्** के बाद 'सुनकर यथोचित करने के लिए तत्पर होना' अर्थ में **आत्मनेपदी**—मम कः 'संश्रृणुते' ? (=मेरी कौन सुनता है ?) अर्थात् मैं कितना भी रोऊँ, गाऊँ, मेरी करुण कहानी से द्रवित होकर कुछ करने के लिए तत्पर होनेवाला कोई नहीं है। हितान्न यः 'संश्रृणुते' स किम्प्रभुः [=भलाई करनेवाले की जो (राजा) नहीं सुनता, वह वाहियात (=निन्दित) राजा है। अर्थात् जो प्रभु भलाई करनेवाले की बात पर यथोचित करने के लिए तत्पर नहीं हो जाता वह वाहियात प्रभु है]।

१९. 'हृ' (=हरण करना) **अनु** के बाद 'चाल चलना' अर्थ में **आत्मनेपदी**—पैतृकम् 'अनुहरन्ते' अश्वाः, मातृकं गावः। **अनु**+'हृ' अनुहरण करना या एक-सा दीख पड़ना (रिज़ेम्बुल् करना) अर्थ में **परस्मैपदी**—मातुः 'अनुहरति' बालकः वा मातरम् 'अनुहरति' बालकः।

२०. 'कृ' **अप** के बाद खुरेचना, कुरेदना अर्थ में **आत्मनेपदी**—हृष्टः वृषः 'अपस्किरते'। भक्ष्यार्थी कुक्कुटः 'अपस्किरते'। आश्रयार्थी श्वा 'अपस्किरते'। छींटना अर्थ में नहीं—पुष्पम् 'अपकिरति' (=पुष्प छींटता है)।

I.२१. 'ह्वे' (=पुकारना) **आङ्** के बाद 'ललकारना' अर्थ में **आत्मनेपदी**—भगतसिंहः आरक्ष्यधीक्षकम् (S. P. को) 'आह्वयते' (=ललकारता है)। किन्तु, पिता पुत्रम् 'आह्वयति' (=पुकारता है)।

२२. (क) गन्धन (=हिंसन), अवक्षेपण (=डराना, धमकाना), सेवन, साहसिकता (गुण्डागिरी), प्रतियत्न, प्रकथन और सदुपयोग अर्थों में उभयपदी 'कृ' **आत्मनेपदी**—उत्कुरुते=हिंसा करता है, द्रोह करता है, हानि पहुँचाने के लिए सूचित करता है। श्येनः वर्त्तिकाम् उदाकुरुते (=डराता है)। हरिम् उपकुरुते (सेवते)। पर-स्त्रियम् 'प्रकुरुते' (बेइज्जत करता है)। एधः उदकस्य 'उपस्कुरुते' (गुण ले लेता है)। गाथाः प्रकुरुते (प्रकथयति)। शतं प्रकुरुते (=सत्कार्य में लगाता है)। उपर्युक्त अर्थ न हो तो—कटं करोति, भोजनं करोति इत्यादि।

(ख) सह लेना वा दबा देना अर्थ हो तो 'अधिकुरुते'। दूसरा अर्थ हो तो 'अधिकरोति'।

(ग) **वि**+'कृ' 'विकृत होना' अर्थ में **आत्मनेपदी**—छात्रः 'विकुरुते' =बिगड़ रहा है (उसमें खराबी आ रही है)।
वि+'कृ' 'विकृत करना' अर्थ में **परस्मैपदी**—क्रोधः चित्तं 'विकरोति' (=बिगाड़ देता है)।

(घ) To do good, to help, to oblige के अर्थ में 'उपकरोति' और 'उपकुरुते' दोनों। किन्तु, 'सेवते' के अर्थ में 'उपकुरुते' तथा 'उपकारं

करोति' के अर्थ में 'उपकरोति' का प्रयोग करने से जटिलता दूर होती।

२३. सम्मानन (खूब मानना, खूब प्यार करना), उत्सञ्जन (उठाना), आचार्यकरण (विधिपूर्वक यज्ञोपवीतसंस्कार करके उपनयन =पास ले जाना, अर्थात् वेद पढ़ने के लिए अपने पास भर्ती करना), ज्ञान (=समझ लेना, समझकर तत्त्व निश्चित कर लेना), भृति (=वैतनिक नियुक्ति करना), विगणन (=ऋण, कर आदि चुकाना) और व्यय (=अच्छे काम में खर्च करना) अर्थों में 'नी' **आत्मनेपदी**— गुरुः शास्त्रे 'नयते' (=बड़े प्यार से शास्त्र के रहस्यों तक पहुँचाते हैं)। खड्गम् 'उन्नयते' (=उठाता है)। आचार्यः माणवकम् 'उपनयते' (=वेद पढ़ने के लिए अपने पास भरती करता है)। तत्त्वं 'नयते' (=समझ लेता है)। कर्मकरान् 'उपनयते' (=वेतन पर नियुक्त करता है)। ऋणं 'विनयते' वा करं 'विनयते' (=चुकाता है)। शतं 'विनयते' (=अच्छे काम में खर्च करता है)।

अपने शरीर के स्वाभाविक अवयव के अतिरिक्त दूसरी कोई वस्तु अपने शरीर से हटानी हो तो **वि** + 'नी' **आत्मनेपदी**— बुद्धिमान् कोपं 'विनयते' (=हटाता है)। किन्तु, शिष्यः गुरोः कोपं 'विनयति'। "विगणय्य 'नयन्ति' पौरुषम्" में 'नयन्ति' को 'नयन्ते' न करें। क्योंकि यहाँ न तो 'वि' उपसर्ग है, न 'हटाना' अर्थ है।

२४. उपसर्ग-विहीन 'क्रम्' **उभयपदी**— क्रामति, क्रमते। वृत्ति (=नहीं रुकना), सर्ग (=उत्साह) और तायन (=स्फीत होना, विस्तृत होना) अर्थों में उपसर्गहीन 'क्रम्' वा **उप** और **परा** के साथ 'क्रम्' **आत्मनेपदी**— ऋग्वेदे बुद्धिः 'क्रमते' (=अप्रतिहत चल रही है)। अध्ययनाय 'क्रमते' (=उत्सहते)। छात्रेऽस्मिन् सर्वाणि शास्त्राणि 'क्रमन्ते' (=स्फीत होते हैं)। उपक्रमते, पराक्रमते।

किसी ज्योतिष्मान् का उगना हो तो **आङ्** के बाद 'क्रम्' **आत्मनेपदी**— सूर्यः 'आक्रमते' (=उगता है, उठता है)। ज्योतिर्युक्त का उठना न ह

तो **आङ्** के बाद भी 'क्रम्' **आत्मनेपदी** नहीं— हर्म्यात् धूमः 'आक्रामति'। "नभः समाक्रामति चन्द्रमाः" में 'समाक्रमते' क्यों नहीं ?
वि-पूर्वक 'क्रम्', पैर का चमत्कार-पूर्ण चाल चलना अर्थ में, **आत्मनेपदी**— साधु 'विक्रमते' वाजी (=घोड़ा बड़े मजे में चाल चल रहा है)। चाल चलना अर्थ न हो तो 'विक्रामति सन्धिः' (=जोड़ छटक रहा है)।

I. आरम्भ करना, करने लगना अर्थ में **प्र** और **उप** के बाद 'क्रम्' **आत्मनेपदी**— यदा शत्रवः भारतम् आक्रमितुम् 'उपक्रमन्ते' तदैव भारतीयाः तान् हन्तुम् 'प्रक्रमन्ते', नाऽन्यथा।

२५. 'ज्ञा' = जानना, परस्मैपद में लिखा है। परन्तु, वस्तुतः उभयपदी है। 'जानाति', 'जानीते' दोनों का अर्थ है— जानता है। किन्तु, 'प्रवृत्त होना' अर्थ होने पर केवल 'जानीते' होगा—सर्पिषो 'जानीते' बालः भोक्तुम् = घृत-रूप उपाय से बालक खाने चलता है।
छिपा लेना, जाल करना, हड़प जाना, पचा लेना अर्थों में **अप**-पूर्वक 'ज्ञा' **आत्मनेपदी**— शतम् अपजानीते (=हड़प जाता है)। अनाध्यान (=प्रतिज्ञा करना) अर्थ में **प्रति** के बाद 'ज्ञा' **आत्मनेपदी**— शतं प्रतिजानीते (=कबूल करता है या प्रतिज्ञा करता है)। अपेक्षा करना अर्थ में **सम्** के बाद 'ज्ञा' **आत्मनेपदी**— शतं सञ्जानीते (=अपेक्षा करता है)। अपेक्षा करना अर्थ में न हो तो **सम्** के बाद भी 'ज्ञा' **परस्मैपदी**— मातरम् 'सञ्जानाति' (=माता को पहचानता है, जानता है, सोचता है)।

२६. 'गृध्' का रूप 'गृध्यति' (=ललचता है)। गृध् का प्रेरणार्थक रूप होगा— गर्धयते (=ठगता है)। यथा— बालकं गर्धयते (=ठगता है)। 'ललचाता है' अर्थ होने पर गर्धयति-गर्धयते दोनों—कुक्कुरं गर्धयति वा गर्धयते (ललचाता है)।

२७. 'वञ्च्' (=जाना) का रूप— 'वञ्चति'। प्रेरणार्थक 'वञ्च्' ठगना अर्थ में **आत्मनेपदी**— वञ्चकः पथिकं 'वञ्चयते' (=ठगता है)। यदि ठेकने से बचाना अर्थ हो तो प्रेरणार्थक 'वञ्च्' **उभयपदी**— सहसा सर्पं दृष्ट्वा भीतो यात्री सर्पं 'वञ्चयति' वा 'वञ्चयते' (पैर से ठेकने से साँप को बचाता है कि सांप काट न ले)।

वस्तुतः 'वञ्चयति', 'वञ्चयते' के व्यवहार में कोई अन्तर नहीं है। ठगना अर्थ में 'वञ्चयति' देखिये— " 'वञ्चयन्ति' शरभान् करेणवः"। ठगना, धोखा देना, कोई चालाकी करके बहला देना, किसी कारणवश ठेकने से या देखने से बचा लेना अर्थ में 'वञ्चयति' और 'वञ्चयते' दोनों का प्रयोग निर्भीकतापूर्वक करें।

इस प्रकरण की कुछ बातों को छोड़कर सारी बातें व्यर्थ हैं। जो बातें सार्थक हैं, उन्हें धातुरूप की पुस्तक में मैं दे देता और इस पुस्तक में इस प्रकरण की चर्चा ही नहीं करता। परन्तु, इस विषय को अन्य पुस्तकों में जटिलतर ढंग से समझाया गया है, अतः मैंने कुछ स्पष्टता का प्रयास कर दिया है।

२८. भासन, उपसम्भाषा, ज्ञान, यत्न, विमति, उपमन्त्रण अर्थों में 'वद्' **आत्मनेपदी**— (१) भासन (चमकना, प्रतिभा दिखाना)—शास्त्रे 'वदते' (चमकता है), (२) उपसम्भाषा (=सान्त्वना देना)—**उप**+'वद्' **आत्मनेपदी**— भृत्यान् 'उपवदते' (=सान्त्वना देता है), (३) ज्ञान— शास्त्रे वदते (=जानता है), (४) यत्न— क्षेत्रे वदते (=उद्यम करता है), I. (५) विमति=विभिन्न विचारवाला होना, झगड़ना अर्थ में **वि**+ 'वद्' **आत्मनेपदी**— शास्त्राणि परस्परं 'विवदन्ते'। क्षेत्रे कृषकाः 'विवदन्ते', (६) उपमन्त्रण (=तोषामोद करना, अनुकूल बनाना) अर्थ में **उप**+'वद्' **आत्मनेपदी**— भिक्षुकः दातारम् उपवदते (=राजी करता है)।

टिप्पणी— 'विवदते' को छोड़कर उपर्युक्त सभी बातें छात्रों को संस्कृत से दूर भगानेवाली हैं। उपर्युक्त क्रियाओं के बदले विभाति, सान्त्वयति, जानाति, यतते, अनुकूलयति या प्रार्थयते जैसी क्रियाओं से काम लेना चाहिये। इस प्रकरण की प्रायः सारी बातें ऐसी ही हैं। साहित्य में ऐसे नियमों की आवश्यकता नहीं के बराबर है। व्याकरण की ऐसी बातें उनके लिए अनिवार्य की जायँ, जो व्याकरणविशेषज्ञ बनना चाहते हैं।

एक साथ मिलकर बहुत-से मनुष्यों का स्पष्ट एवं जोर से उच्चारण करना अर्थ में **सम्+प्र+'वद्' आत्मनेपदी**— ब्राह्मणाः सम्प्रवदन्ते (=साथ मिलकर स्पष्ट एवं जोर से बोलते हैं)। स्पष्टता न हो तो खगाः 'सम्प्रवदन्ति' (=चहचहाते हैं)। कुक्कुराः सम्प्रवदन्ति। अकर्मक-वत् व्यवहृत हो तो **अनु+'वद्' आत्मनेपदी**— कठः कलापस्य 'अनुवदते' =कठशाखा पढ़नेवाला ब्राह्मण कलाप-ब्राह्मणवत् बोलता है। स्पष्टता न होने के कारण—वीणा 'अनुवदति'।

I. **अनु+'वद्' सकर्मक हो तो परस्मैपदी**— उक्तम् अनुवदति (कहे हुए को दुहराता है, अनुवाद करता है)।

विरोध में बोलते हुए झगड़ना अर्थ में **वि+प्र+'वद्' परस्मैपदी भी, आत्मनेपदी** भी—वैद्याः विप्रवदन्ति वा विप्रवदन्ते।

२९. परस्मैपदी 'गृ' (=निगलना) **अव** के साथ हो तो **आत्मनेपदी**—अवगिरते। प्रतिज्ञा करना अर्थ में **सम्+'गृ' आत्मनेपदी**— शब्दं नित्यं सङ्गिरते (=प्रतिजानीते)। प्रतिज्ञा करना अर्थ न हो तो—पशुः घासं 'सङ्गिरति'।

३०. **उद्+'चर्'** सकर्मक हो तो **आत्मनेपदी**— मूर्खः धर्मम् 'उच्चरते' (=उल्लंघते)। अकर्मक हो तो **उद्+'चर्' परस्मैपदी**— वाष्पम् 'उच्चरति' (=वाष्प उठता है)।

करण के साथ हो तो **सम्+'चर्' आत्मनेपदी**— रथेन 'सञ्चरते'। रथेन 'समुदाचरते'। करण के साथ न हो तो **सम्+'चर्' परस्मैपदी**— किम् अस्मिन् वने व्याधाः 'सञ्चरन्ति'?

---

(१८) लकारार्थः

आज के साधारण छात्रों को पुराना लकारार्थ पढ़ाना अनावश्यक ही नहीं, हानिकारक भी है। संस्कृत में वार्तालाप तथा अनुवाद के द्वारा काल और लकार का कार्यकर (Functional) ज्ञान करा देना मात्र लाभप्रद होगा।

तथापि लकारों का अतिसाधारण विचार नीचे की पंक्तियों में देखें। इसके बाद भी यदि दक्षता प्राप्त करनी हो तो 'वैयाकरण सिद्धान्त-कौमुदी' के लकारार्थ को तथा मेरे अभी तक अमुद्रित 'त्रैभाषिक काल' को देखें।

१. वर्त्तमान काल में 'लट्' लकार। 'लट्' में 'भवति' इत्यादि रूप। 'भवति' = **होता है**।

२. भविष्यत्काल में 'लृट्' लकार। 'लृट्' में 'भविष्यति' इत्यादि रूप। 'भविष्यति' = **होगा**।

३. भूतकाल में 'लङ्' लकार। लङ् में 'अभवत्' इत्यादि रूप। 'अभवत्' = **हुआ**।

३. (क) भूतकाल में 'लङ्' 'लुङ्' और 'लिट्' तीन लकार होते हैं। तीनों की झंझटों से बचने के लिए अच्छा है कि 'क्तवतु' प्रत्यय से बने हुए 'भूतवान्', 'कृतवान्', 'श्रुतवान्', 'गतवान्' इत्यादि पदों से भूतकाल की क्रिया का काम चलाया जाय।

४. अनुज्ञा में 'लोट्' लकार। 'लोट्' में 'भवतु' इत्यादि रूप। 'भवतु' = **होवे, होइये, होने दो**। **होओ, होऊँ** के लिए भी 'लोट्' लकार से ही काम लिया जाता है।

५. होवे, होइये, होना चाहिये, होने दो, हो सकता है अर्थों में 'विधिलिङ्' लकार। 'विधिलिङ्' में 'भवेत्' इत्यादि रूप। 'भवेत्' = **होवे, होइये, होना चाहिये, होने दो, हो सकता है**।

६. अभिसन्धि (= शर्त) का बोध होता हो तो 'लृङ्' लकार। 'लृङ्' में 'अभविष्यत्' इत्यादि रूप। यथा—सुवृष्टिः यदि 'अभविष्यत्' तर्हि दुर्भिक्षं न 'अभविष्यत्' = सुवृष्टि यदि 'होती' तो दुर्भिक्ष नहीं 'होता'। त्वम् परिश्रमम् 'अकरिष्यः' चेत् उत्तीर्णः 'अभविष्यः' = तुम परिश्रम 'करते' तो उत्तीर्ण 'हो जाते'।

७. भविष्यत्काल में अभिसन्धि का बोध होता हो तो 'विधिलिङ्'—शीघ्रं चिकित्सकः 'आगच्छेत्' चेत् नूनं बालकः रोगमुक्तः 'भवेत्' = शीघ्र चिकित्सक 'आ जाय' तो निश्चय बालक रोगमुक्त 'हो जाय'।

८. आशीर्वाद देने में 'आशीर्लिङ्' लकार। 'आशीर्लिङ्' में 'भूयात्' इत्यादि रूप। यथा—तव विजयः 'भूयात्' = तुम्हारी विजय 'हो'।

८. (क) लोट् लकार भी आशीर्वाद में व्यवहृत हो सकता है—तव विजयः 'भवतु' = तुम्हारी विजय 'हो'। आशीर्वाद के अर्थ में लोट् लकार का प्रयोग करने की इच्छा हो तो प्रथमपुरुष के और मध्यमपुरुष के एक-वचन के रूप में 'तात्' जोड़ देना अधिक अच्छा होगा। यथा—भवान् विजयी 'भवतु' वा विजयी 'भवतात्'। 'भूयात्' (आशीर्लिङ्) भी हो सकता है। त्वं चिरायुः 'भव' वा चिरायुः 'भवतात्'। 'भूयाः' (आशीर्लिङ्) भी होता है।

लुङ्, लङ् और लिट्

'लुङ्', 'लङ्' और 'लिट्' के प्रयोग के विषय में पाणिनीय व्याकरण और अन्यत्र भी बहुत-से नियम लिखे हुए हैं। पर किसी युग में उन नियमों का पालन दृढतापूर्वक नहीं किया गया। इनके विषय में निम्नलिखित नियम पर्याप्त हैं—

I. ९. लुङ्—आज की बीती बात में वा कभी की बीती बात में अर्थात् सभी भूतों में 'लुङ्'। 'लुङ्' में 'अभूत्' इत्यादि रूप। यथा—अद्य प्रातः वृष्टिः 'अभूत्' = आज प्रातः वृष्टि 'हुई'। त्रेतायुगे दशरथः राजा 'अभूत्'।

१०. लङ्—अद्यतन भूत में अर्थात् आज की बीती बात में लङ् नहीं। अतः "अद्य प्रातः वृष्टिः 'अभवत्'" अशुद्ध है। कल वृष्टि हुई = "गतदिने वृष्टिः 'अभवत्'" शुद्ध है। "त्रेतायुगे दशरथः राजा 'अभवत्'" ठीक है।

I. **'लङ्' का नियम**—अनद्यतन भूत में अर्थात् नहीं आज बीती बात में 'लङ्'। बीती हुई रात के १२ बजे के बाद से लेकर आनेवाली रात के १२ बजे तक का समय 'आज' कहलाता है।

११. **लिट्**—अद्यतन वा प्रत्यक्ष भूत में अर्थात् आज की बीती बात में या सामने बीती बात में 'लिट्' नहीं। 'लिट्' में 'बभूव' इत्यादि रूप।

'आज सभा हुई' का अनुवाद "अद्य सभा 'बभूव' " अशुद्ध है। क्योंकि आज की बीती बात में 'लिट्' नहीं हो सकता है। "काँग्रेस-नामक-राष्ट्रीय-महासभायाः गयाऽधिवेशने सनातन-धर्म-प्रचारकस्य स्वामि-दयानन्दस्य भाषणं मम समक्षम् एव 'बभूव' " अशुद्ध है। क्योंकि सामने बीती बात में 'लिट्' लकार नहीं हो सकता है। इसीलिए उत्तमपुरुष में लिट् लकार का प्रयोग नहीं होता। हाँ, उत्तमपुरुष में लिट् का प्रयोग तब हो सकता है, जब बोलनेवाला निद्रित रहने के कारण वा उन्मत्त रहने के कारण बेहोशी की दशा में उस काम को कर सका हो— निद्रिताऽवस्थायाम् अहं बहु 'विललाप'। मद्यं पीत्वा मत्तः अहं तव कलमं जहार।

I. **'लिट्' का नियम**— अनद्यतन एवं परोक्ष भूत में अर्थात् 'नहीं आज की बीती बात में और नहीं सामने बीती बात में' लिट्—कलिकातातः आगत्य श्रुतवान् यत् ह्यः पाटलिपुत्रे महती वृष्टिः 'बभूव'। समाचार-पत्र-द्वारा वयं जानीमः यत् आचार्य-कपिलदेव-शर्मा एव १९५९तमे खृष्टाऽब्दे निखिलभारतीय-संस्कृत-परिषदः केरलाऽधिवेशने सभापतिः 'बभूव'। स एव च १९६६तमे खृष्टाब्दे उत्तर-प्रदेशीयाऽधिवेशने विश्व-संस्कृत-सम्मेलनस्याऽपि सभापतिः 'बभूव'।

टिप्पणी— सभी भूतों में 'लुङ्' का प्रयोग निरापद् है। यदि लुङ् के रूप कण्ठस्थ न हों तो लङ् के रूपों से या 'क्तवतु' वाले श्रुतवान्, कृतवान्, पठितवान् आदि पदों से काम चलाना अच्छा है।

१२. **लुट्**— अनद्यतन भविष्य अर्थात् 'नहीं आज आनेवाली बात में' लुट्। 'लुट्' में 'भविता' आदि रूप। श्वः मम पौत्रस्य वेदाऽऽरम्भः 'भविता' = कल मेरे पौत्र का वेदारम्भ 'होगा'। 'भविष्यति' भी लिख सकते हैं। आगामि-श्रावण-कृष्ण-पञ्चम्यां मङ्गलवासरे मम पौत्रस्य जन्म-दिन-महोत्सवः 'भविता'। 'भविष्यति' भी हो सकता है। 'अद्य सभा भविता' अशुद्ध है।

I.१३. **लृट्**— आज वा कभी भी आनेवाली बात में 'लृट्'। यथा— श्वः वेदारम्भः भविष्यति। पञ्चदश-वर्षाऽनन्तरं विवाहः भविष्यति।

I.१४. **लट् लकार** 'वर्त्तमान काल' में होता है। किन्तु, 'लट्' के रूप के साथ 'स्म' जोड़ने से 'भूतकाल' बन जाता है— कस्मिश्चिद् ग्रामे भगत-सिंह-नामा महान् वीरः 'प्रतिवसति स्म'; यदाऽहं महामहिम-राधाकृष्णन्-निकटे 'गच्छामि स्म' तदा आंग्ल-भाषायां वार्त्ताऽऽलापं कुर्वन् स बहून् संस्कृत-श्लोकान् 'उद्धरति स्म' = जब मैं महामहिम राधाकृष्णन् के निकट जाता था तब अंग्रेजी में बात करते समय वे बहुत-से संस्कृत श्लोकों को उद्धृत करते थे। रहता था, पढ़ता था, करता था-जैसे अर्थ में भी तथा रहा, पढ़ा, किया-जैसे अर्थ में भी 'स्म' के साथ 'लट्' लकार का प्रयोग किया जाता है।

१५. **यावत् के साथ लट्**— यावद् आरक्षी न 'आगच्छति' तावत् त्वम् पलायस्व = जबतक सिपाही नहीं 'आ जाता' तबतक तुम भाग जाओ।

१६. 'मत' अर्थात् 'नहीं' का अनुवाद **न, ना, नो, नहि** होता है। 'मा' का अर्थ भी होता है 'मत' अर्थात् 'नहीं'। यह 'मा' दो प्रकार का है— एक तो 'मा' साधारण है और दूसरा है 'माङ्' में से 'ङ्' निकालने पर बचा हुआ 'मा'। इस 'माङ्' वाले 'मा' के योग में 'लोट्' लकार उचित हो तो भी 'लुङ्' लकार हो जाता है। एक और विचित्रता होती है कि 'लुङ्' के रूप में जो 'अ' जोड़ा जाता है वह 'अ' नहीं जोड़ा जा सकता है। क्योंकि लिखा है कि 'माङ्-योगे लुङ् अडागम-निषेधश्च' (= माङ् जुटे रहने पर लुङ् लकार हो तथा अट् के आगम का निषेध हो)। यथा— "**न** भवान् 'गच्छतु'" के बदले "**मा** भवान् 'गमत्'"। 'लुङ्' में 'अगमत्' रूप होता है। "न भयं 'कुरु'" के बदले "**मा** भयं 'कार्षीः'"। 'लुङ्' के मध्यमपुरुष में 'अकार्षीः' होता है।

१६. (क) '**मा** भवतु', '**मा** कुरु' आदि में **मा** के साथ 'लुङ्' के बदले 'लोट्' लकार देखकर आश्चर्य न करें। यह 'मा' माङ् वाला नहीं है, साधारण 'मा' है।

१६. (ख) 'माङ्' के रहते हुए भी यदि 'लुङ्' के रूप में 'अ' दीख पड़े तो समझना चाहिये कि आर्ष (= ऋषिवाला) प्रयोग है अर्थात् वर्त्तमान व्याकरणों के बनने के पहले का है वा अशुद्ध है। यथा— **मा** निषाद

प्रतिष्ठां त्वम्, 'अगमः' शाश्वतीः समाः । **मा** मन्यु-वशम् 'अन्वगाः' (अनु + अगाः) ।

I. यदि ऐसा नियम बन जाय कि 'मा' (= 'मत' अर्थात् 'नहीं') के योग में 'लोट्' तो होता है ही, 'लुङ्' भी हो सकता है, तो एक भारी झंझट दूर हो जाय । परन्तु, ऐसा क्यों हो ? यह देश तो झंझट या जटिलता को 'ज्ञान-गाम्भीर्य', आडम्बर को 'धर्म', स्वार्थ को 'राजनीति', अतन्त्रता वा उच्छृंखलता को 'स्वतन्त्रता', अस्पृश्यता-वृद्धि को 'अस्पृश्योद्धार', साहित्यकरणक आत्मसेवा को 'आत्मकर्तृक साहित्यसेवा', अशिक्षावृद्धि को 'शिक्षावृद्धि' कहता है । अस्तु, आज मैं अत्यन्त अस्वस्थ हो गया हूँ । मेरी बोली किसी दिन बन्द हो जा सकती है । ऐसा होने के पूर्व यदि वैयाकरण लोग सहमत हों और कोई एक वैयाकरण लिखने के लिए समय दें तो व्याकरण के प्रायः सभी प्रकरणों में सरलता लायी जा सकती है ।

I.१७. 'मा' तथा 'स्म' दोनों उपस्थित रहें तो 'लङ्' लकार भी हो सकता है और 'लुङ्' लकार भी । जैसे— 'भवान् क्रुद्धः **न भवतु**' के स्थान पर 'भवान् क्रुद्धः **मा स्म भवत्** वा **मा स्म भूत्**' । 'मा स्म' के योग में भी 'अ' नहीं जुटता है ।

---

(१६) अनुवाद-विषये किञ्चित्

अनुवाद की आवश्यक बातें इस पुस्तक के प्रथम पाँच पृष्ठों में लिख दी गयी हैं । फिर भी कुछ सन्देहाऽऽस्पद बातों का समाधान नीचे की पंक्तियों में देखें ।

क्रिया का वचन

१. किसी क्रिया के एक से अधिक कर्त्ता हों और वे 'च' से जोड़े गये हों तो सभी कर्त्ताओं की संख्या को जोड़कर क्रिया द्विवचन या बहुवचन होगी ।

यथा—गुरुः आशीर्वादं ददाति। किन्तु, गुरुः गुरुपत्नी च आशीर्वादं 'दत्तः'। राष्ट्रपतिः प्रधानमन्त्री सेनापतिश्च सैनिकान् 'उत्साहयन्ति'। सेनापतिः सैनिकौ च 'गच्छन्ति'।

१. (क) कभी-कभी 'च' द्वारा अनेक कर्त्ताओं के जुटे रहने पर भी क्रिया का वचन निकटस्थ कर्त्ता के अनुसार। यथा—अहश्च रात्रिश्च उभे च सन्ध्ये, **धर्मश्च** 'जानाति' नरस्य वृत्तम्। अतः, 'गुरुः गुरुपत्नी च आशीर्वादं ददाति' तथा 'सेनापतिः सैनिकौ च गच्छतः' भी शुद्ध ही हैं।

२. एक क्रिया के एक से अधिक कर्त्ता 'वा' द्वारा जुटे हुए हों तो क्रिया निकटस्थ कर्त्ता के अनुसार। यथा— खुद्दीरामवसुः **अन्यः** वा आततायिनं हन्यात्। भवान् **छात्राः** वा आगच्छन्तु। सर्वे छात्राः **भवान्** वा आगच्छतु।

क्रिया का पुरुष

३. किसी क्रिया के एक से अधिक कर्त्ता 'च' द्वारा जुटे हों और प्रथमपुरुष तथा मध्यमपुरुष दोनों पुरुषों के हों तो क्रिया मध्यमपुरुष। यथा—**त्वं** तव पुत्रश्च युद्धे 'गच्छतम्'।

३. (क) यदि 'च' द्वारा जुटे अनेक कर्त्ता तीनों पुरुषों के हों तो क्रिया उत्तमपुरुष। जैसे—**अहं** त्वं डा० विश्वनाथप्रसादवर्मा च व्याख्यानं 'दास्यामः'। **वयं** श्रीदेवेन्द्रनाथशर्मा च दिल्लीं 'गच्छामः'। **अहं** त्वं च छात्रान् 'पाठयिष्यावः'।

४. एक से अधिक पुरुषों के कर्त्ता 'वा' द्वारा जुटे हों तो क्रिया का पुरुष निकटस्थ कर्त्ता के अनुसार। यथा—अहं **श्रीनिशान्तकेतुः** वा पुस्तकं 'संशोधयिष्यति'। श्रीनिशान्तकेतुः **अहं** वा पुस्तकं 'संशोधयिष्यामि'। वयं यूयं **रमेशो** वा, सर्वं कार्यं 'करिष्यति'।

जातौ एकवचनम्

५. 'जाति' को कहना हो तो एकवचन या बहुवचन दोनों में कोई वचन व्यवहृत हो सकता है। अतएव लिखा है—'जातौ एकवचनं बहुवचनं

च'। यथा—'मनुष्यः' नश्वरः वा 'मनुष्याः' नश्वराः। स 'आम्रं' विक्रीणीते वा 'आम्राणि' विक्रीणीते। 'नराः नेत्रेण पश्यन्ति' ठीक है। क्योंकि, 'नेत्र' जाति है। 'नराः नेत्राभ्यां पश्यन्ति' ठीक है। क्योंकि, सब अपनी-अपनी 'दो आँखों से' देखते हैं। 'नराः नेत्रैः पश्यन्ति' भी ठीक है। क्योंकि, सबों की 'आँखें मिलकर बहुत हो गयीं'।

आदरे बहुवचनम्

६. बहुत आदर दिखाना हो तो एक या दो के लिए भी बहुवचन का प्रयोग होता है। जैसे—पितृपादाः कथयन्ति। गुरुचरणाः उपदिशन्ति। शङ्कराचार्याः मण्डनमिश्रैः सह शास्त्रार्थम् अकार्षुः। भवन्तः किं प्रतिपादयन्ति ? किन्तु, एकवचन भी ठीक है। जैसे—शङ्कराचार्यः मण्डनमिश्रेण सह शास्त्रार्थम् अकार्षीत्। भवान् किं प्रतिपादयति ?

७. आदरणीय, पूजनीय, जनाब वा हजरत के अर्थ में 'अत्रभवत्' और 'तत्रभवत्' का प्रयोग भी होता है। यथा—किमादिशति तत्रभवान् राष्ट्रपतिः ? = आदरणीय राष्ट्रपति क्या फर्माते हैं ? किम् इच्छति अत्रभवती प्रधानमन्त्रिणी ? = आदरणीया प्रधानमन्त्रिणी क्या चाहती हैं ?

८. 'अस्मद्' शब्द के एकवचन और द्विवचन के स्थान पर भी 'आदरे बहुवचनम्' होता है। '**अहं** ब्रवीमि' वा '**आवां** ब्रूवः' के बदले '**वयं** ब्रूमः' भी होता है। वार्त्तिककार का कहना है कि विशेषण के साथ 'अस्मद्' शब्द हो तो एकवचन वा द्विवचन के स्थान में बहुवचन नहीं। यथा—पटुः अहं ब्रवीमि।

वार्त्तिककार के इस नियम के प्रतिकूल उदाहरण देखिये—

ब्रूमो **वयं** सकल-शास्त्र-विचार-दक्षाः।
जम्बीर-नीर-परिपूरित-मत्स्य-खण्डे ।

विभिन्न लिङ्गों के विशेष्यों के विशेषण

९. यदि किसी वाक्य में एक विशेष्य पुंल्लिङ्ग हो और दूसरा स्त्रीलिङ्ग तथा उन दोनों का विशेषण एक ही हो तो विशेषण पुंलिङ्ग होगा। यथा—

अमर-वीर: फुलेनाप्रसादश्रीवास्तव: तत्पत्नी ताराराणीश्रीवास्तवा च महावीरौ।

९. (क) यदि किसी वाक्य में तीनों लिङ्गों के विशेष्य हों और सबों का विशेषण एक ही हो तो विशेषण नपुंसक। यथा—धर्म: कामश्च गर्वश्च, धृति: क्रोध: सुखं वय:। अर्थाद् एतानि सर्वाणि, प्रवर्त्तन्ते न संशय:।

१०. यदि कई लिङ्गों के विशेष्य जुटे हों तो विशेषण के लिङ्ग और वचन अतिनिकटस्थ विशेष्य के अनुसार भी। यथा—'आलस्यं कलह: कण्डु: 'सेव्यमाना' प्रवर्धते। 'कण्डु:' के अनुसार 'सेव्यमाना' स्त्रीलिङ्ग हुआ।

११. पुरुष, वचन और लिङ्ग के विचार के कारण संस्कृत बोलने में असुविधा होने लगे तो एक उपाय करें। कर्त्ता के रूप में रहने के लिए इच्छुक सभी पदों के बाद 'इति' दे दें। 'इति' के बाद नया कर्त्ता देकर नये कर्त्ता के अनुसार क्रिया कर दें। जैसे—अहं त्वं च इति उभौ जनौ श्व: गमिष्यत:। 'जनौ' के अनुसार 'गमिष्यत:' हुआ। 'जनौ' यदि कर्त्ता नहीं रहता तो सनातन नियम के अनुसार 'अहं त्वं च श्व: गमिष्याव:' होता। पण्डिता क्षमाराव-महोदया, आशुतोष:, कवि: श्रीरक्षपालराकेश:, त्वम् अहं च इति सर्वे एव जना: ह्य: तत्र अगच्छन् वा गतवन्त:। 'जना:' के अनुसार 'अगच्छन्' वा 'गतवन्त:' हुआ। 'जना:' यदि कर्त्ता नहीं होता तो साधारण-नियमानुसार उत्तमपुरुष बहुवचन 'अगच्छाम' होता।

संख्या-वाचक विशेषण

१२. एक, द्वि, त्रि और चतुर् के तीनों लिङ्गों में रूप होते हैं। यथा—एक: बालक:, एका बालिका, एकं पुस्तकम्। द्वौ बालकौ, द्वे बालिके, द्वे पुस्तके। त्रय: बालका:, तिस्र: बालिका:, त्रीणि पुस्तकानि। चत्वार: पुरुषा:, चतस्र: महिला:, चत्वारि फलानि।

१२. (क) पञ्चन् (=५) से अष्टादशन् (=१८) तक के रूप तीनों लिङ्गों में एक समान। यथा—पञ्च बालका:, पञ्च बालिका:, पञ्च फलानि। अष्टादश वृक्षा:, अष्टादश लता:, अष्टादश फलानि। 'देवनागर-वर्णमाला प्रथम भाग (विशिष्ट)' में संस्कृत गिनती और पहाड़ा देखें।

१२. (ख) ऊनविंशति (=१९) से परार्ध तक की संख्याओं की सभी विभक्तियों के रूप एकवचन में ही विशेषणवत् व्यवहृत होते हैं। यथा—ऊनविंशतिः जनाः गच्छन्ति। पञ्चाशत् जनाः खादन्ति। सहस्रं जनाः सभायाम् आगच्छन्ति। कोटिः जनाः प्रतिवर्षं जायन्ते च म्रियन्ते च।

१२. (ग) विशेष्य के समान प्रयोग हो तो आवश्यकताऽनुसार सभी वचनों में रूप हो सकते हैं। देखिये—'विंशतिः छात्राः पठन्ति (=२० छात्र पढ़ते हैं)' में 'विंशतिः' विशेषण है। अब 'विंशतिः' को विशेष्यवत् देखिये—छात्राणां 'विंशतिः' पठति। = छात्रों के बीस पढ़ते हैं अर्थात् बीस छात्र पढ़ते हैं। छात्राणां 'द्वे विंशती' पठतः। = छात्रों के 'दो बीस' पढ़ते हैं, अर्थात् चालीस छात्र पढ़ते हैं। छात्राणां 'तिस्रः विंशतयः' पठन्ति। = छात्रों के 'तीन बीस' पढ़ते हैं, अर्थात् साठ छात्र पढ़ते हैं। 'शतं' सैनिकाः गच्छन्ति (=सौ सैनिक जाते हैं) में 'शतं' विशेषण है। 'शतं' का विशेष्यवत् प्रयोग देखिये—सैनिकानां 'शतं' गच्छति। = सैनिकों के 'सौ' जाते हैं, अर्थात् 'सौ सैनिक' जाते हैं। सैनिकानां 'द्वे शते' गच्छतः। = सैनिकों के 'दो सौ' जाते हैं, अर्थात् दो सौ सैनिक जाते हैं। सैनिकानां 'पञ्च शतानि' गच्छन्ति। = सैनिकों के 'पाँच सौ' जाते हैं, अर्थात् पाँच सौ सैनिक जाते हैं। इसी प्रकार 'कोटिः जनाः गच्छन्ति'। जनानां 'कोटिः' गच्छति। जनानां 'द्वे कोटी' गच्छतः। जनानां 'सप्त कोटयः' गच्छन्ति (सात करोड़ मनुष्य जाते हैं)।

द्विवचन और बहुवचन को एकवचन बना सकते हैं। यथा—'द्वौ जनौ' के बदले जनद्वयम्, जनद्वयी, जनद्वितयम्, जनद्वितयी, जनद्विकम्, जनयुग्मम्, जनयुगलम्, जनयुगम्।

'द्वे स्त्रियौ' के बदले स्त्रीद्वयम्‥इत्यादि। 'द्वे फले' के बदले फलद्वयम्‥इत्यादि। 'त्रयः जनाः' के बदले जनत्रयम्, जनत्रयी, जनत्रितयम्, जनत्रितयी, जनत्रिकम्। 'तिस्रः स्त्रियः' के बदले स्त्रीत्रयम्… इत्यादि।

'त्रीणि फलानि' = फलत्रयम्‥इत्यादि। 'चत्वारः वृक्षाः' के बदले

वृक्षचतुष्टयम्, वृक्षचतुष्कम्। 'पञ्च वृक्षाः'=वृक्षपञ्चकम्। इसी प्रकार लताषट्कम्, फलनवकम् इत्यादि। 'पञ्च (=५) छात्राः गच्छन्ति' का पूरणवाचक—पञ्चमः (=५वाँ) छात्रः गच्छति। 'द्वादश छात्राः गच्छन्ति' का पूरणवाचक—द्वादशः (१२वाँ) छात्रः गच्छति। 'विंशतिः (२०) छात्राः गच्छन्ति' का 'विंशः वा विंशतितमः (२०वाँ) छात्रः गच्छति'।

संख्यावाचक शब्द की अनुपस्थिति में बहुवचन का एकवचन—
'पुरुषाः' के बदले पुरुषसमूहः, पुरुषगणः, पुरुषवृन्दम्, पुरुषौघः। इसी प्रकार स्त्रीसमूहः, स्त्रीगणः, स्त्रीवृन्दम्, स्त्र्योघः। फलसमूहः, फलौघः, फलजातम्। आलि, आली; आवलि, आवली; राजि, राजी; श्रेणि, श्रेणी; पंक्ति जैसे शब्दों से भी बहुवचन को एकवचन बनाया जा सकता है। किन्तु वाक्य बनाने की कोई भी चातुरी तभी सफल और लाभप्रद समझी जा सकती है, जबकि वह वाक्य व्याकरण से प्रायः शुद्ध हो और भावप्रकाशन में समर्थ हो।

किसी भी शब्द को अकारान्त बना सकते हैं। स्त्री गच्छति=स्त्रीजनः गच्छति। स्त्रियौ गच्छतः=स्त्रीजनौ गच्छतः। स्त्रियः गच्छन्ति= स्त्रीजनाः गच्छन्ति। पिता गच्छति=पितृदेवः गच्छति। साधवः गच्छन्ति=साधुजनाः गच्छन्ति। गुरुदेवः गच्छति, गुरुवरः गुरुमहोदयः वा गुरुप्रवरः गच्छति। गुरुचरणाः गच्छन्ति, गुरुपादाः गच्छन्ति। नद्यां नौका चलति=नदीजले नौका चलति वा नदीमध्ये नौका चलति। उपर्युक्त उपायों से स्त्रीलिङ्ग शब्द का पुँल्लिङ्ग और नपुंसक भी बन जाता है तथा पुंलिङ्ग और नपुंसक शब्द का स्त्रीलिङ्ग शब्द भी बन जाता है। अकारान्त शब्द जितने हैं, उनमें बहुसंख्यक पुंलिङ्ग और नपुंसक दोनों हैं। यथा—धर्मः, धर्मम्; ओदनः, ओदनम्; शाकः, शाकम् इत्यादि। कोई-कोई अकारान्त तो तीनों लिङ्गों में भी व्यवहृत होता है। यथा—तटः, तटी, तटम्; मण्डलः, मण्डली, मण्डलम्। प्रथमा और द्वितीया के बाद से अकारान्त पुंलिङ्ग और नपुंसक के रूपों में कोई अन्तर नहीं रह जाता। अतः निर्भीकतापूर्वक संस्कृत लिखें और बोलें। भाषा सीखने के लिए लेखन, भाषण, वाचन और श्रवण मुख्य हैं। इन चारों के

विना मनुष्य सम्पूर्ण 'वैयाकरणसिद्धान्तकौमुदी' कण्ठस्थ करके भी निष्कर्मा ही बना रहेगा।

अनुवाद के समय तृतीया का रूप भूल जाने पर 'द्वारा' से काम चलाइये। यथा—'गजेन' के बदले 'गज-द्वारा', गजाभ्याम् = गज-द्वय-द्वारा, गजैः = गज-द्वारा वा गज-समूह-द्वारा। द्विचक्रिकया = द्विचक्रिका-द्वारा। पञ्चमी का काम 'तः' से चलाइये—'प्रयागात्' के बदले 'प्रयागतः'। इसी प्रकार मथरातः, छपरातः, नदीतः, गिरितः। पञ्चमी के तीनों वचनों के बदले 'तः' लिखिये।

यदि 'घोड़ा' शब्द के लिए संस्कृत शब्द 'घोटकः' न जानते हों तो 'घोड़ा-नामकः जीवः वा जन्तुः गच्छति' अथवा 'घोड़ा-पद-वाच्यः गच्छति' लिखिये। इसी प्रकार 'मण्डलाधीशः' वा 'समाहर्त्ता' न जानते हों तो 'कलेक्टर्-पद-वाच्यः अधिकारी आदेश दत्तवान्' लिखिये। 'कलेक्टर् के घर पर' कहना हो तो 'कलेक्टर्-पद-वाच्यस्य गृहे' वा 'कलेक्टर् इत्यस्य गृहे' कहिये।

'छपरा में मुझे जाना है' का कामचलाऊ अनुवाद होगा, 'छपरा इत्यत्र मया गन्तव्यम् अस्ति' वा 'छपरा-नामक-स्थाने मया गन्तव्यम् अस्ति'। 'नौकर को जाने दो' का अनुवाद होगा—भृत्यः गच्छतु वा भृत्यः गच्छेत् वा भृत्येन गन्तव्यम् वा अनुजानीहि भृत्यम् गन्तुम् वा अनुजानीहि भृत्यम् गमनाय वा अनुमन्यस्व भृत्यं गन्तुम् वा गमनाय। इनमें जो जिस अवसर पर अच्छा लगे, उसका प्रयोग करना चाहिये। 'जाना है', 'जाना होगा' का अनुवाद—मुझे जाना है = मया गन्तव्यम् अस्ति। तुम्हें जाना होगा = त्वया गन्तव्यम् भविष्यति। 'हो सकता है' का अनुवाद—भवेत्, भवितुं शक्नोति, भवितुं पारयति, भवितुमर्हति। मैं यहाँ पढ़ता हूँ = अहम् अत्र पठामि। मैं यहाँ पढ़ रहा हूँ = अहम् अत्र पठन् अस्मि। मैं यहाँ पाँच महीनों से पढ़ रहा हूँ = अत्र पठतः मम पञ्च मासाः व्यतीताः।
समय पूछने वा बताने के सम्बन्ध में— क्या बजा है ? = का वेला ? पौने दस बजे हैं = पादोन-दश-वादन-वेला। दस बजे हैं = दश-वादन-वेला।

सवा दस बजे हैं = सपाद-दश-वादन-वेला। साढ़े दस बजे हैं = सार्द्ध-दश-वादन-वेला। ठीक बारह बजे हैं = पूर्ण-द्वादश-वादन-वेला; अन्यूनाऽधिक-द्वादश-वादन-वेला।

तीन बजे आऊँगा = त्रिवादनसमये, त्रिवादनकाले वा त्रिवादन-वेलायाम् अहम् आगमिष्यामि। ठीक तीन बजे आऊँगा = त्रिवादन-सम-कालम् एव आगमिष्यामि।

दो बजे समाचारपत्र आयगा = द्वि-वादन-समये समाचारपत्रम् आगमिष्यति। ठीक सात बजे रेलगाड़ी आ जायगी = सप्त-वादन-सम-कालमेव वाष्प-यानम् आगमिष्यति।

पत्र पाते ही पत्र का उत्तर दे देना चाहिये = पत्र-प्राप्ति-सम-कालम् एव पत्रस्य उत्तरं दातव्यम्।

एक घंटे के बाद या एक घंटा बाद = एकघण्टाऽनन्तरम्; एकघण्टायाः अनन्तरम्, ऊर्ध्वम् वा परम्। एक घंटा पहले = एक-घण्टा-पूर्वम्, एक-घण्टायाः पूर्वम्। दो महीने बाद = द्विमासाऽनन्तरम्, मास-द्वयाऽनन्तरम्, मास-द्वयात् अनन्तरम्, ऊर्ध्वम् वा परम्; द्वाभ्याम् मासाभ्याम् अनन्तरम्, ऊर्ध्वम् वा परम्। दो मास पहले = द्वि-मास-पूर्वम्, मास-द्वय-पूर्वम्; द्वाभ्यां मासाभ्याम् पूर्वम् वा प्राक्; मास-द्वयात् पूर्वम् वा प्राक्। 'द्वौ मासौ पूर्वम् वा मास-द्वयं पूर्वम्' भी हो सकता है। 'एक-घण्टाऽनन्तरम्' और 'एक-घण्टा-पूर्वम्' के जैसा व्यवहार करना अच्छा है।

१२. (घ) सौ जन जाते हैं = शतं जनाः गच्छन्ति। एक सौ पाँच जन जाते हैं = शतं पञ्च च जनाः गच्छन्ति वा पञ्चोत्तर-शतं जनाः गच्छन्ति वा पञ्चाऽधिक-शतं जनाः गच्छन्ति। पाँच सौ जन जाते हैं = जनानाम् पञ्च शतानि गच्छन्ति, जनानां पञ्चशती गच्छति, जनानां शतपञ्चकम् गच्छति, पञ्चशतं जनाः गच्छन्ति। पाँच सौ दस जन जाते हैं = जनानां पञ्च शतानि दश च गच्छन्ति वा ५१० जनाः गच्छन्ति।

१२. (ङ) 'संख्यक' शब्द जोड़कर अनुवाद करने से सुगमता होगी। पाँच जन जाते हैं = पञ्च-संख्यक-जनाः गच्छन्ति। सात सहस्र जन जाते हैं = सप्त-सहस्र-संख्यक-जनाः गच्छन्ति।

ज्ये० कृ० ३० शुक्र २०२३ को तीन बजे दिन में सूर्यग्रहण हुआ = संवत् २०२३ ज्येष्ठ-मासे कृष्ण-पक्षे अमावास्यायां तिथौ शनिवासरे त्रि-वादन-वेलायां सूर्य-ग्रहणम् अभूत्। वा विक्रमस्य तृतीय-सहस्राऽब्द्यां त्रयोविंशे वर्षे ज्येष्ठ-मासे कृष्ण-पक्षे··सूर्यग्रहणम् अभूत्। वा २०२३तम-विक्रमाऽब्दीय-ज्येष्ठ-मासे कृष्ण-पक्षे अमावास्यायां तिथौ··सूर्यग्रहणम् अभूत्। वा त्रयोविंशत्युत्तरे विंशतिशत-तमे विक्रमाब्दे ज्येष्ठमासे··सूर्यग्रहणम् अभूत्। वा ज्ये० कृ० ३० शु० २०२३ वि० त्रि-वादन-वेलायां दिने सूर्यग्रहणम् अभूत्। वा विंशति-शत-त्रयोविंशे विक्रमाब्दे··अभूत्। २१।५।१९६६ को सूर्यग्रहण हुआ = २१-५-६६तमे दिनाङ्के सूर्यग्रहणम् अभूत्। वा एक-विंशतितमे दिनाङ्के पञ्चम-मासे ऊनविंशति-शत-षट्-षष्टितमे खृष्टाब्दे·· अभूत्। वा ऊनविंशति-शत-षष्टितम-खृष्टाब्दे पञ्चम-मासे एकविंश-दिनाङ्के··अभूत्। वा षट्-षष्ट्युत्तरे ऊनविंशति-शततमे खृष्टाब्दे पञ्चम-मासे एकविंश-दिनाङ्के सूर्यग्रहणम् अभूत्।

पक्षी सब प्रातः जग जाते हैं, तुम पक्षियों से भी अधिक सवेरे जग जाओ = खगाः वा पक्षिणः प्रातः जाग्रति, त्वं पक्षिभ्यः अपि प्रातस्तरं वा प्रातस्तरां जागृहि। सभापति के आने के पहले स्वागताऽध्यक्ष सभा में आवें, किन्तु प्रबन्धक लोग कुछ और पहले आवें = सभापतेः आगमनात् पूर्वं स्वागताध्यक्षः सभायाम् आगच्छेत्, किन्तु प्रबन्धकाः किञ्चित् पूर्वतरम् आगच्छेयुः। नौकर बाद में आयगा अतः तुम जरा और बाद आना = सेवकः पश्चात् आगमिष्यति अतः त्वं पश्चात्तरम् आगच्छेः। यह बहरा जोर से बोलता है अतः तुम जरा और जोर से बोलो = अयं बधिरः उच्चैः वदति अतः त्वम् उच्चैस्तरं वद।

जातावेकवचनम् और आदरे बहुवचनम् के विषय में टिप्पणी

लखनऊवाले "एक रुपये की 'जलेबी' दीजिये" कहनेवालों की खिल्ली उड़ाते हैं। उनके जानने में "'जलेबियाँ' दीजिये" कहना ही शुद्ध है। क्योंकि एक रुपये की एक ही 'जलेबी' नहीं मिलेगी, कई 'जलेबियाँ' मिलेंगी। पर ऐसा समझना उनकी भूल है। 'जातौ एकवचनम्' स्पष्ट बता रहा है

कि "एक रुपये की 'जलेबी' दीजिये" और "एक रुपये की 'जलेबियाँ' दीजिये" दोनों प्रयोग शुद्ध हैं। अपने दब्बूपन के कारण बहुत-से लोग उपर्युक्त लखनवी बात मान लेते हैं। इसी प्रवृत्ति के कारण कोष में और व्याकरण में भी कई युक्तिहीन बातें आ गयी हैं। जैसे, कोष में सामर्थ्य, धातु, कलम, पुलिस्-मैन् के अर्थ में पुलिस्-जैसे शब्दों का स्त्रीलिङ्ग होना तथा व्याकरण में हम, तुम-जैसे शब्दों का केवल बहुवचन होना आदि।

मैं, हम और तुम के विषय में वास्तविक बात यह है कि 'मया' से 'मैं' हुआ। अतः **'मैं' एकवचन** है। इसी प्रकार 'अहम्' से 'हम' तथा 'त्वम्' से 'तुम' बनने के कारण 'हम' और 'तुम' भी अवश्य ही एकवचन हैं। हाँ, इनके बहुवचनरूप भी 'हम' और 'तुम' को मान सकते हैं।[1] जैसे, 'छात्र' का बहुवचन 'छात्र' इत्यादि।

पूर्वीय उत्तरप्रदेश, विहार, बंगाल, असम आदि प्रान्तों के हिन्दीभाषी लोग एक के लिए ही 'हम' और 'तुम' का व्यवहार करते हैं। उपर्युक्त प्रान्तों में सदा-सर्वदा 'तू' और 'मैं' का प्रयोग करनेवालों की संख्या एक सौ भी नहीं है।[2]

जिस प्रकार 'जाता है', 'करता है' आदि प्रथमपुरुषवाली क्रियाओं के साथ व्यवहृत होने पर भी 'तू' प्रथमपुरुष नहीं हो जाता है, उसी प्रकार 'आते हैं', 'जाते हैं' आदि बहुवचन क्रियाओं के साथ व्यवहृत होने पर भी हम, आप, गुरु,

---

द्रष्टव्य— (१) जिस प्रकार संस्कृत में 'अस्ति' (अस् धातु) के रूप सभी कालों में नहीं होते, 'भवति' (भू धातु) के रूप ही उन कालों में 'अस्ति' के रूप भी मान लिये जाते हैं, उसी प्रकार 'हम' के रूप ही 'मैं' के बहुवचनरूप मान लिये जाते हैं।

(२) प्रयाग से असम तक प्रचलित भोजपुरी में और मैथिली में 'हम' सदा एकवचन है। बहुवचन बनाने के लिए भोजपुरी में 'नी' जोड़कर 'हम' का 'हमनी' तथा मैथिली में 'रा+लोकनि' जोड़कर 'हमरालोकनि' बनाते हैं। उसी प्रकार हिन्दी में भी 'हम' और 'तुम' के बहुवचन के लिए 'लोग' और 'सब' जोड़ना अधिक अच्छा होगा। जैसे—हमलोग, हमसब।

पिता, श्रीमान्, महाशय, महानुभाव, हुजूर, जनाब, साहब आदि शब्द एकवचनत्व नहीं छोड़ सकते।

यही कारण है कि 'हुजूर' मेरे घर पर आयेंगे तो मैं 'हुजूर' का हार्दिक स्वागत करूँगा। इस वाक्य में 'हुजूर' लिखा गया है। 'आयेंगे' का कर्त्ता 'हुजूर' बहुवचन रहता तो सम्बन्ध में 'हुजूर' हो जाता 'हुजूरों'।

हिन्दी में 'आदरे बहुवचनम्' केवल क्रिया के साथ चलता है तथा **यह, वह, जो** एवं **कौन** के साथ चलता है। यथा—'ये' (मि० रहमतुल्ला पाण्डेय) एम्० ए० फाजिल् तथा शास्त्री हैं। 'इनकी' कविता बड़ी अच्छी होती है।

हिन्दी में 'आदरे बहुवचनम्' वाली क्रिया का कर्त्ता (बेटा, भतीजा, पोता और साला को छोड़) बहुवचनवत् दीख पड़ता है। वस्तुतः वह बहुवचन नहीं है। जैसे, आपके 'वालिद आयँगे' में 'वालिद' बहुवचन-सा लगता है, बहुवचन है नहीं। बहुवचन रहता तो शीघ्र ही दूसरे कारक में पड़ जाने पर भी बहुवचन ही रह जाता और 'आपके वालिद आयँगे तो मैं आपके वालिद की तहेदिल से खातिरदारी करूँगा' न लिखकर 'आपके वालिदों की खातिरदारी' लिखना पड़ता। कहीं-कहीं तो 'आदरे बहुवचनम्' वाली क्रिया का कर्त्ता बहुवचन-सा दीखता भी नहीं। जैसे, 'आपकी दादी या नानी मर गयीं'। यहाँ "आपकी 'दादियाँ' या 'नानियाँ' " नहीं लिखते। 'आपकी बीवी साहिबा विधवा हो गयीं'। 'बीवी साहिबायें' नहीं।

संस्कृत में 'आदरे बहुवचनम्' व्यक्ति में किया जाता है। इसलिए वह व्यक्ति चाहे किसी कारक में पड़ जाय, उसमें, उसके विशेषण में तथा उसकी क्रिया में 'आदरे बहुवचनम्' होगा ही। यथा— 'पूज्याः श्रीमन्तः' मम गृहम् आगमिष्यन्ति तदा 'पूज्यानां श्रीमतां' हार्दिकम् अभिनन्दनं करिष्यामि।

यों तो आजकल आकाशवाणीवाले प्रतिदिन बहुवचन 'ये' का प्रयोग एकवचन में करते हैं। जैसे—'ये' आकाशवाणी है। बहुत-से लोग एकवचन 'यह' और 'वह' का प्रयोग बहुवचन में करते हैं। जैसे—लीजिये! 'यह' भी आ गये। महिलायें अपने विषय में सदा पुंलिङ्ग क्रिया का ही व्यवहार करती हैं। जैसे—'हम जाते हैं।' 'हम आये।' 'हम बैठे।' इत्यादि।

महिलाओं का अपने लिए पुंलिङ्ग क्रिया का व्यवहार करना असह्य भूल है। किन्तु एक के लिए 'हम' का व्यवहार करना यत्परो नास्ति प्रशंसनीय है। अच्छी 'हिन्दी का नमूना' लिखनेवाले महावैयाकरण पं० किशोरीदास वाजपेयी ने भी अपने 'राष्ट्रभाषा का प्रथम व्याकरण' ग्रन्थ में 'मैं' के बदले 'हम' का प्रयोग किया है।

सरकारी सेवावालों को हिन्दी सिखाने के लिए जो व्याकरण और रचना की पुस्तक लिखी गयी है, उसमें लिखा है कि 'हमारे इच्छानुसार' लिखना भूल है, 'हमारी इच्छानुसार' लिखना ही शुद्ध है। हिन्दी शिक्षार्थियों को ऐसे हिन्दी पण्डितों से भगवान् बचावें।

साहित्य इस प्रकार पढ़ाया जाय कि निम्नलिखित ढंग के प्रश्नों का उत्तर दिया जा सके

१. निम्नलिखित पद्यों में प्रत्येक को जैसा लिखा है, वैसा ही शुद्ध रूप से दो-दो वार पढ़ो।
२. निम्नलिखित पद्यों में प्रत्येक को सन्धि तोड़-तोड़कर दो वार पढ़ो।
३. निम्नलिखित प्रत्येक पद्य का अन्वय दो वार बोलो और एक वार लिखो।
४. निम्नलिखित प्रत्येक पद्य के शब्दों के अन्वय-क्रम से अर्थ बोलो।
५. निम्नलिखित प्रत्येक पद्य के शब्दों के अन्वय-क्रम से प्रतिशब्द बोलो।
६. निम्नलिखित प्रत्येक पद्य का अन्वय के अनुसार अनुवाद किन्हीं दो भाषाओं में करो।
७. निम्नलिखित प्रत्येक पद्य की विशद व्याख्या करो।
८. घिरे हुए (इन्क्लर्टेड) पदों में कौन विभक्ति है और क्यों?
९. मोटे-काले अक्षरों वाले प्रत्येक पद का समास तोड़ो और बताओ कि वह कौन-सा समास है?
१०. जिस शब्द पर १ लिखा है, उसका प्रकृति-प्रत्यय बताओ।
११. 'विश्वे' पद शुद्ध है या 'विश्वस्मिन्'? 'विश्वे' पर टिप्पणी लिखो।
१२. जिस शब्द पर * लिखा है, उसका विपरीत-लिंग-वाचक शब्द दो।
१३. 'दिने दिने' का समास करो।

'आलस्यं'[१] 'वैमनस्यं'[१] च, न करिष्यामि कर्हिचित्[१] ।
'सर्वान्' **'सहोदरान्'** मत्वा[१], लालयिष्यामि सर्वदा[१] ॥

'हिंसां'[१] नैव करिष्यामि, मारयिष्यामि[१] 'हिंसकम्'[१] ।
'क्षयिणीं'[१]* **'ज्वरदां'**[१]* 'नस्यं',[१] 'धूम-मद्यादि-मादकम्'[१]* ॥

न स्प्रक्ष्यामि[१] न सेविष्ये, 'प्रतिज्ञा'[१] 'निश्चला' 'मम' ।
'कोषे' 'राष्ट्रस्य' 'रक्षायाः'[१], **'अल्पात्यल्पं'** हि 'रूप्यकम्' ॥

'प्रतिवर्षं'[१] प्रदास्यामि, **'एकैकं'** नाऽत्र 'संशयः'[१] ।
'निजे' 'वैयक्तिके'[१] कोषे, स्वल्पात्यल्पं हि रूप्यकम् ॥

'प्रतिमासं' प्रदास्यामि, एकैकम् 'इति' 'निश्चितम्'[१] ।
'आचारं'[१] च 'चरित्रं'[१] च, पालयिष्याम्यहं 'ध्रुवम्' ॥

'स्वास्थ्यं'[१] 'बुद्धिं'[१] तथा[१] 'विद्यां',[१] वर्धयिष्यामि[१] यत्नतः[१] ।
विना **'स्वार्थं'** करिष्यामि, **'देश[१]-गो-विश्व-सेवनम्'**[१] ॥

'देशं'[१] 'कालं'[१] च 'पात्रं'[१] च, सुविचार्यैव[१] सर्वदा[१] ।
'सर्वं' 'कार्यं'[१] करिष्यामि, 'फलम्'[१] **'ईश्वर[१]-निर्भरम्'**[१] ॥

'समाधिना'[१] 'मृतस्या'[१]ऽभूत्[१], **'समाधि-स्थल-निर्मितिः'**[१] ।
अधुना 'यस्य' 'कस्या'ऽपि, क्रियते[१] हि **'समाधि-भूः'** ॥

'समाधि-स्थल-निर्माता'[१], **'महापापस्य'** 'भाजनम्'[१] ।
'दिल्ल्यां' 'समाधिर्' 'नेतृणाम्'[१]*, **'बहु-भूमि-विनाशकः'**[१]* ॥

'ततस्तदर्थं'* 'रूप्याणि', लक्षशः[१] **'प्रतिवत्सरम्'** ।
विनाश्यन्ते[१] **'बुधम्मन्यैः'**[१], **'तथा[१]-कथित[१]-नेतृभिः'** ॥

नेतृणामेव 'नाम्ना' 'सा', 'भूमी' 'कृष्या'[१] विधीयताम्[१] ।
'बुभुक्षा[१]-पीडिते'[१] 'विश्वे', 'भूर्' **'अकृष्या'** कथं[१] कृता[१]* ॥

तत्र[१] च 'प्रचुरं'* 'द्रव्यं', कथं नश्येद् 'दिने दिने' ।
'विद्यालये'[१] 'चिकित्सायाः'[१], 'शवो' 'देयः'[१] **'सुधार्मिकैः'**[१] ॥

'इतिहासो'ऽपि 'स्वास्थ्यस्य'[१], मृतस्याऽस्य प्रदीयताम्[१] ।

'कुश-पुत्तलिकां' दग्ध्वा[१], 'श्राद्धं'[१] 'तस्य' विधीयताम्[१] ॥
'अवशिष्टाः'[१] 'शवाः' 'दाह्याः'[१], 'काष्ठेन' 'विद्युता'[१]ऽथवा ।
'पूर्वं' किमासीत् 'किं' नाऽऽसीत्, 'कलहो'ऽयं 'निरर्थकः' ॥
इदानीं[१] 'यत्' 'समीचीनं'[१], 'तत्' कुरुष्व प्रयत्नतः[१] ॥

चौबीस दिनों में व्याकरण-सहित संस्कृत सिखाने के उपाय

पहले पाँच ह्रस्व स्वर, आठ दीर्घ स्वर, पचीस स्पर्श वर्ण, चार अन्तःस्थ वर्ण, चार ऊष्म-वर्ण, तीन विचित्र संयुक्ताक्षर (क्ष, त्र, ज्ञ), मात्रायें, चन्द्र-विन्दु, अनुस्वार, विसर्ग और रेफ का शुद्ध ज्ञान मेरी "देवनागर वर्णमाला प्रथम भाग (विशिष्ट)" [पुस्तक-भवन, राँची (विहार) से प्रकाशित] की सहायता से करा देना चाहिये। अक्षरों का शुद्ध उच्चारण न कर सकने के कारण ही संस्कृत सीखने में कष्ट होता है।

प्रथम साक्षात्कार के दिन से ही "तव नाम किम्" ? "गृहं कुत्र" ? जैसे वाक्यों द्वारा शिक्षार्थी के साथ संस्कृत में वार्त्तालाप आरम्भ कर देना चाहिये और सः, तौ, ते; त्वम्, युवाम्, यूयम्; अहम्, आवाम्, वयम् इन नौ सर्वनामपदों को तथा भवति, भवतः, भवन्ति आदि नौ क्रियापदों को सुन्दर अक्षर लिखाने के बहाने कण्ठस्थ करा देना चाहिये। तब श्री लालचन्द्र प्रसाद गुप्त, शारदा-पुस्तक-भाण्डार, सलेमपुर, छपरा (विहार) से प्राप्य 'संस्कृत-लतिका' वा 'संस्कृत-कल्पलता' के चार भाग और मेरे दीक्षान्त-भाषण अर्थात् 'संस्कृतोपयोगिता' का शुद्ध वाचन (अर्थ के ऊपर विशेष ध्यान दिये विना ही) कराया जाय। शिक्षार्थी और शिक्षक दोनों परस्पर संस्कृत ही बोलें। बहुत अधिक आवश्यकता पड़ने पर अन्य भाषा से भी काम लिया जा सकता है, परन्तु शीघ्र ही अन्य भाषा के उन वाक्यों के संस्कृत वाक्य सिखा दिये जायँ।

इसी प्रकार किसी विषय, पद्य, वाक्य वा सूत्र को समझाने के लिए संस्कृत-भिन्न भाषा से काम लेना पड़े तो पुनः संस्कृत में उन बातों को समझा देना चाहिये। प्रतिदिन किसी प्रान्तीय भाषा से संस्कृत में अनुवाद कराना भी अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार भाषण, वाचन और लेखन ये तीन कार्य प्रतिदिन होते रहेंगे। व्याकरण के विषय में भी निम्नलिखित क्रम से २४

दिनों तक तीन कार्य करा देने से शिक्षक भारमुक्त हो जायँगे। कारण यह है कि इतनी शक्ति हो जाने पर शिक्षार्थी स्वयं वा मल्लिनाथ आदि की टीका की सहायता से पाठ्य-ग्रन्थ-स्थित वाक्यों का अर्थ कहने लगेगा। शिक्षक केवल शिक्षार्थी के मुख से सुनेंगे और आवश्यकता पड़ने पर कुछ संकेत कर देंगे। इसी बीच अवसर पाकर 'हितोपदेश' की पं० जीवानन्द-विद्यासागर-कृत संस्कृत टीका से तथा 'रघुवंश' की मल्लिनाथ-कृत टीका से काम लेने की रीति भी सिखा देनी चाहिये।

कभी-कभी वार्त्तालाप में आये हुए वाक्यों में, अनुवाद में आये हुए वाक्यों में वा वाचनीय पुस्तक के वाक्यों में कारक की आवश्यक किन्तु सरल बातों पर ध्यान भी आकृष्ट करते रहना चाहिये। ऐसा करने से बीसवें दिन से चौबीसवें दिन तक विभक्ति-निर्णय की मुख्य बातें समाप्त करने में बहुत सुविधा होगी।

'गज' शब्द के रूप कण्ठस्थ हो जाने पर 'गज' शब्द के सदृश शब्दों के तथा उससे कुछ भिन्न 'फल' शब्द के सदृश रूप कहने का भी अभ्यास करा देना चाहिये। 'तत्' शब्द के रूप कण्ठस्थ हो जाने पर एतद्, यद्, किम्, सर्व, अन्य, उभय, उभ, द्वि, एक प्रभृति शब्दों के रूप कहने का अभ्यास करा देना चाहिये। लट् लकार के रूपों को देखकर लृट् लकार के रूप और लङ् लकार के रूपों को देखकर लृङ् लकार के रूप विना रटे ही कण्ठस्थ हो जाते हैं। इस प्रकार तीन कार्य हुए—भाषण, वाचन और लेखन और दूसरे तीन कार्य हुए—शब्दरूपाभ्यास, धातुरूपाभ्यास और व्याकरण-नियम-ज्ञान। इन छः कार्यों को प्रतिदिन करता हुआ षट्-कर्म-निरत शिक्षार्थी चौबीस दिनों में ही संस्कृतज्ञ, संस्कृत-वक्ता और संस्कृत-लेखक बन जाता है।

इस विधि से २४ दिनों में संस्कृत सीख लेनेवाले बालकों को देखकर हजारों मनुष्यों को चकित होना पड़ा है, जिनमें कुछ को बहुत-से पाठक जानते हैं, जैसे भारत-सरकार के संस्कृतायोग के सदस्यगण, विहार प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन एवं विहार-राष्ट्रभाषा-परिषद् के प्रमुख व्यक्ति, पटना विश्वविद्यालय के संस्कृत, हिन्दी और दर्शन आदि विभागों के अधिकांश प्राध्यापक, स्वर्गीय डा० अनुग्रहनारायण सिंह, श्रीयुक्त जगलाल चौधरी, डा० सातकुड़ि मुखर्जी इत्यादि।

चौबीस दिनों के (व्याकरण-विषयक) कार्यों का विभाजन

प्रथम दिन का कार्य	गज	भू लट्	विभक्ति-चिह्नम्
द्वितीय दिन का कार्य	लता	भू लोट्	कर्त्तृ-कर्मादि-परिभाषा
तृतीय दिन	तद्	भू लङ्	कालः
चतुर्थ दिन	युष्मद्	भू विधिलिङ्	उपसर्गः
पञ्चम दिन	अस्मद्	अस् लट्	विशेष्य-विशेषण-नियमः
षष्ठ दिन	मुनि	अस् लोट्	कर्त्तृवाच्य-नियमः
सप्तम दिन	साधु	अस् लङ्	कर्म-भाव-वाच्य-नियमः
अष्टम दिन	दातृ	अस् विधिलिङ्	तव्य - प्रभृति - व्यवहार-नियमः
नवम दिन	गो	कृ लट्	'क्तवतु' - कर्त्तृ - वाच्य-'क्त'-व्यवहारः
दशम दिन ..	मति	कृ लोट्	द्वि-कर्मक-धातु-सूची
एकादश दिन ..	नदी	कृ लङ्	कर्त्तृ-वाच्य-'क्त'-सूची
द्वादश दिन ..	वारि	कृ विधिलिङ्	तद्धित का प्रथम श्लोक
त्रयोदश दिन ..	मधु	लभ् लट्	तद्धित का द्वितीय श्लोक
चतुर्दश दिन ..	गुणिन्	लभ् लोट्	तद्धित का तृतीय श्लोक
पञ्चदश दिन ..	गच्छत्	लभ् लङ्	तद्धित का चतुर्थ श्लोक
षोडश दिन ..	पयस्	लभ् विधिलिङ्	तद्धित का पञ्चम श्लोक
सप्तदश दिन ..	त्रि	ज्ञा लट्	कृत्-प्रकरण का एक श्लोक
अष्टादश दिन..	चतुर्	ज्ञा लोट्	कृत्-प्रकरण का एक श्लोक
ऊनविंश दिन..	इदम्	ज्ञा लङ्	कृत्-प्रकरण का डेढ़ श्लोक
विंश दिन ..	अदस्	ज्ञा विधिलिङ्	प्रथमा-द्वितीया कहाँ-कहाँ ?
एकविंश दिन..	राजन्	दा लट्	तृतीया-चतुर्थी कहाँ-कहाँ ?
द्वाविंश दिन ..	पुंस्	दा लोट्	पञ्चमी कहाँ-कहाँ ?
त्रयोविंश दिन..	पथिन्	दा लङ्	षष्ठी कहाँ-कहाँ ?
चतुर्विंश दिन..	विद्वस्	दा विधिलिङ्	सप्तमी कहाँ-कहाँ ?

संस्कृत के सम्बन्ध में कुछ विचारों के सारांश

मेरा आगामी जन्म भारत में हो और वेदाध्यापक-कुल में हो।

—मोक्षमूलर् (मैक्स्मूलर्)

फ्रान्स के संस्कृताध्यापक रानु ने मुझसे कहा—प्रिय शर्मा ! तुम्हारी संतानें संस्कृत बोलती हैं। अतः मेरा दूसरा जन्म तुम्हारे परिवार में ही हो।

संस्कृत ही भारत की राजभाषा हो। —सर् सी० व्ही० रमन् (जगत् के महान् वैज्ञानिक), राज्यपाल कैलाशनाथ काटजू, डॉ० अम्बेडकर, जियाउद्दीन

हिब्रू भाषा नाऽस्ति नाऽभूत् हो गयी थी, फिर भी स्वतन्त्रता मिलते ही इसरायल-वासियों ने हिब्रू को राजभाषा बना दिया। तब हम भारतवासी विश्व में सर्वत्र समादृत संस्कृत भाषा को भारत की राजभाषा क्यों नहीं बना सकते ?

—पं० भरत मिश्र, प्रथम राष्ट्रपति के अध्यापक। डॉ० नलिनीरंजन सेन, एम्० डी०। डॉ० धर्मेन्द्र ब्रह्मचारी शास्त्री, भू० पू० डी० पी० आई० (विहार)। श्री ल० म० चक्रदेव, एम्० एस्० सी०, इंजीनियर्। श्री चपलाकान्त भट्टाचार्य, एम्० पी०। अधिवक्ता ज्ञान नाथ बरा।

प्रत्येक मनुष्य को संस्कृत पढ़नी चाहिये। संस्कृत ने मेरे जीवन की धारा बदल दी।

—मो० क० गान्धी

न जाने विद्यते किन्तद्, माधुर्यम् अत्र संस्कृते।
सर्वदैव समुन्मत्ता, येन वैदेशिका वयम्॥ —विल्सन्

संस्कृत ही विश्व की अन्तरराष्ट्रीय भाषा हो सकती है। —सर् मिर्जा इस्माइल

बालक से वृद्ध तक प्रत्येक व्यक्ति को संस्कृत बोलते देखना चाहता हूँ।

—पं० मदन मोहन मालवीय

संस्कृत भाषा ही विश्व को यथार्थ मानव बना सकती है। —सुभाषचन्द्र वसु

संस्कृत की उपयोगिता समस्त विश्व मान रहा है। —देशरत्न राजेन्द्र प्रसाद

समाज को सुसभ्य, सुसंस्कृत और मानवीय-गुण-सम्पन्न बनाना है तो बचपन से ही संस्कृत की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाय। —जवाहरलाल नेहरू

संस्कृत ही विज्ञान आदि सभी विषयों का प्राण है।

—जॉन् रॉबर्ट् ओपेन् हाइमर्, निदेशक, परमाणु-बम-निर्माणशाला, अमेरिका।